कक्षा
11
vfuok;l fgUnh & iLFke
प्रज्ञा प्रवाह
कक्षा 11
iKk iokg

प्रज्ञा प्रवाह

कक्षा– XI (अनिवार्य हिन्दी, प्रथम पुस्तक)

माध्यमिक शिक्षा बोर्ड, राजस्थान, अजमेर

पाठ्यपुस्तक निर्माण समिति

पुस्तक – प्रज्ञा प्रवाह कक्षा– XI (अनिवार्य हिन्दी, प्रथम पुस्तक)

संयोजक :– डॉ॰ दीपिका विजयवर्गीय, सह आचार्य, हिन्दी–विभाग
राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर

संपादकगण :– **1.** डॉ॰ धर्मनारायण भारद्वाज, प्रधानाचार्य
रा.आ.उ.मा. विद्यालय, बड़ोली माधोसिंह,
निम्बाहेड़ा (चित्तौडगढ़)

2. डॉ॰ बुद्धमति यादव, व्याख्याता हिन्दी–विभाग
गौरी देवी राजकीय महिला महाविद्यालय, अलवर

3. अशोक कुमार शर्मा, व्याख्याता
राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालय, किशनगढ़ (अजमेर)

4. भरत शर्मा, व्याख्याता
राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालय, माणक चौक, जयपुर

पाठ्यक्रम निर्माण समिति

पुस्तक – प्रज्ञा प्रवाह कक्षा–11

संयोजक :– डॉ. आशीष सिसोदिया, सहायक आचार्य
हिंदी विभाग, मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर

सदस्य :–

1. डॉ. दीपिका विजयवर्गीय, सह आचार्य हिन्दी विभाग
   राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर
2. डॉ. नवीन नन्दवाना, सहायक आचार्य हिन्दी विभाग
   मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर
3. श्री संजय कुमार शर्मा
   डाइट , हनुमानगढ़
4. श्री रमाशंकर शर्मा, व्याख्याता
   राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालय, धौलपुर
5. श्री अशोक कुमार शर्मा, वरिष्ठ अध्यापक
   राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालय, रलावता, अजमेर
6. श्री महेशचन्द्र शर्मा, वरिष्ठ अध्यापक
   राजकीय वरिष्ठ उपाध्याय संस्कृत विद्यालय, कुण्डगेट, सावर, अजमेर

अनिवार्य हिंदी पाठ्यक्रम

विषय कोड : 01

समय 3.15 घंटे **पूर्णांक :100**

अधिगम क्षेत्र	अंक
अपठित बोध	10
व्यावहारिक व्याकरण एवं रचना	20
प्रज्ञा प्रवाह–आधार पुस्तक	40
कथा धारा–पूरक पुस्तक	15
संवादसेतु	15

खण्ड–1

अपठित बोध **10**

(क) अपठित गद्यांश 05

(ख) अपठित पद्यांश 05

खण्ड–2

व्यावहारिक व्याकरण एवं रचना **20**

अविकारी शब्द 02

शब्द विचार (क) 02

वाक्यांश के लिए एक शब्द, समानार्थी शब्द 02

वाक्य विचार 02

विराम चिह्न 02

संक्षिप्तीकरण एवं पल्लवन 03

निबन्ध लेखन (विकल्प सहित) 07

खण्ड–3

प्रज्ञा प्रवाह– (आधार पुस्तक) **40**

(क) 1 व्याख्या गद्य भाग से (विकल्प सहित) 1 X 5 = 5

(ख) 1 व्याख्या पद्य भाग से (विकल्प सहित) 1 X 5 = 5

(ग) 2 निबन्धात्मक प्रश्न — 2 X 5 = 10
(1 प्रश्न गद्य से एवं 1 प्रश्न पद्य भाग से विकल्प सहित)

(घ) 4 लघूत्तरात्मक प्रश्न (2 गद्य एवं 2 पद्य भाग से) — 4 X 3 = 12

(ड) किसी एक कवि या लेखक का परिचय — 1 X 4 = 4
(कवि एवं लेखक विकल्प सहित)

(च) 2 अति लघूत्तरात्मक प्रश्न (1 गद्य एवं 1 पद्य भाग से) — 2 X 2 = 4

खण्ड–4

कथा धारा –(पूरक पुस्तक) — **15**

(क) 1 निबन्धात्मक प्रश्न (विकल्प सहित) — 1 X 6 = 6

(ख) 4 लघूत्तरात्मक प्रश्नों में से 3 प्रश्न) — 3 X 3 = 9

खण्ड–5

संवाद सेतु — **15**

(क) पत्रकारिता का इतिहास (1 प्रश्न) — 1 X 3 = 3

(ख) जन संचार के परंपरागत माध्यम (1 प्रश्न) — 1 X 3 = 3

(ग) जन संचार के आधुनिक माध्यम (1 प्रश्न) — 1 X 3 = 3

(घ) प्रयोजनमूलक लेखन — 1 X 3 = 3
(व्यावहारिक लेखन पर आधारित 1 प्रश्न)

(ड) व्यावसायिक एवं कार्यालयी लेखन और प्रक्रिया — 1 X 3 = 3
(व्यावहारिक लेखन पर आधारित 1 प्रश्न)

निर्धारित पुस्तकें –

1. **प्रज्ञा प्रवाह –** माध्यमिक शिक्षा बोर्ड, राजस्थान, अजमेर।
2. **कथा धारा –** माध्यमिक शिक्षा बोर्ड, राजस्थान, अजमेर।
3. **संवादसेतु –** माध्यमिक शिक्षा बोर्ड, राजस्थान, अजमेर।

आमुख

'प्रज्ञा प्रवाह' हिन्दी की प्रतिनिधि गद्य और पद्य रचनाओं का संकलन है जो माध्यमिक शिक्षा बोर्ड, राजस्थान अजमेर की ग्यारहवीं कक्षा के हिन्दी (अनिवार्य) के अध्ययन व अध्यापन हेतु तैयार की गई है। रचनाओं के संकलन में हमने यह ध्यान रखने का प्रयास किया है कि प्रस्तुत पुस्तक विद्यार्थियों के स्तरानुकूल हो, इससे उनमें नैतिकता और सांस्कृतिक ओजस्विता के साथ राष्ट्रीय दृष्टिकोण का विकास हो साथ ही संकलनकर्ताओं का यह भी प्रयास रहा है कि पुस्तक माध्यमिक शिक्षा बोर्ड की अपेक्षा के अनुरूप हो।

साहित्य समाज का दर्पण होता है, साहित्य से ही मनुष्य के व्यक्तित्व का निर्माण होता है। साहित्य का सम्यक् बोध विद्यार्थियों के लिए आवश्यक है। विद्यार्थियों के व्यक्तित्व का विकास हो तथा वह समाज, राष्ट्र व हमारी सांस्कृतिक धरोहर से जुड़ा रहे, ऐसी भावना के साथ पुस्तक में पाठ संकलित किए गए हैं।

प्रज्ञा प्रवाह विद्यार्थी की प्रज्ञा को समृद्ध कर सके इस हेतु साहित्य की विविध विधाओं (निबन्ध, कहानी, रेखाचित्र, संस्मरण, यात्रावृत्तान्त, जीवनी आदि) को पुस्तक में स्थान दिया है। साथ ही पुस्तक में नारी चेतना, राष्ट्रभक्ति, भारतीय ज्ञान–विज्ञान, साम्प्रदायिक सद्भाव और राष्ट्र निर्माण का दायित्वबोध आदि तत्वों को सम्मिलित किया गया है।

इसी प्रकार पुस्तक के पद्य भाग में भी प्राचीनता व नवीनता को ध्यान में रखकर पाठ संकलित किए गए हैं जिनमें भक्ति, नीति, समाज, राष्ट्र, सांस्कृतिक एवं आंचलिक भावनाओं की कविताएँ हैं। पुस्तक का उद्देश्य भी यही है कि विद्यार्थियों को आज के यांत्रिक युग से उत्पन्न निराशा और हताशा से दूर कर यह उनके जीवन में आस्था तथा आगे बढ़ने व संघर्षों से जूझने का एक संकल्प जगा सके, परिवार और समाज के प्रति दायित्वों का आभास करा सके, अपनी संस्कृति और परम्पराओं के निर्वहन की भावना का संचार कर सके, पुस्तक में राष्ट्रीयता के साथ–साथ आंचलिकता की महक भी समाहित है जो विद्यार्थियों को राजस्थान के उस स्वर्णिम इतिहास की झलक देगी जो मातृभूमि के लिए त्याग और बलिदान की प्रेरणा देता है, मातृभूमि के मान–सम्मान और प्रतिष्ठा की रक्षा का अहसास जगाता है। समग्र संकलन विद्यार्थियों के चरित्र को संवारने, जीवन की सच्चाइयों को जानने और उन्हें नए अनुभवों से परिचित होने का अवसर प्रदान कर सकेगा, ऐसी आशा है।

पुस्तक अपने उद्देश्यों की पूर्ति में सफल हो इस संकल्प के साथ ही हमने पर्याप्त सजगता और प्रयत्नों से इसका संकलन किया है। फिर भी न्यूनताएँ अवश्य रही होंगी। हमारा निवेदन है कि उन न्यूनताओं की ओर इंगित करें ताकि पुस्तक में यथोचित संशोधन व परिवर्धन किए जा सकें। इस हेतु हम आपके आभारी रहेंगे।

हम उन सभी लेखकों, कवियों और साहित्यकारों के आभारी हैं जिनके लेख, कविताएँ व पाठ पुस्तक में संकलित हैं तथा सभी के प्रति हृदय से कृतज्ञता व्यक्त करते हैं।

–सम्पादकगण

अनुक्रम

पद्य भाग		पृष्ठ संख्या
1.	कबीर	1–4
2.	तुलसीदास	5–8
3.	मीराँ	9–12
4.	रसखान	13–16
5.	मैथिलीशरण गुप्त	17–20
6.	सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला	21–25
7.	सुमित्रानन्दन पंत	26–28
8.	रामधारी सिंह दिनकर	29–31
9.	श्यामनारायण पाण्डेय	32–35
10.	दुष्यन्त कुमार	36–38
11.	कन्हैयालाल सेठिया	39–43
गद्य भाग		
1.	मित्रता– आचार्य रामचन्द्र शुक्ल (निबन्ध)	44–48
2.	महाकवि जयशंकर प्रसाद – शिवपूजन सहाय (रेखाचित्र)	49–55
3.	फिर से सोचने की आवश्यकता है–हजारी प्रसाद द्विवेदी (निबन्ध)	56–60
4.	अग्नि की उड़ान–ए॰पी॰जे॰ अब्दुल कलाम (आत्मकथा)	61–69
5.	हमारी काश्मीर यात्रा–गणपति चन्द्र भंडारी (यात्रा वृत्तान्त)	70–76
6.	हार की जीत– सुदर्शन (कहानी)	77–82
7.	अजेय लौह पुरूष सरदार वल्लभभाई पटेल–सत्यकाम विद्यालंकार (जीवनी)	83–89
8.	शिवाजी का सच्चा स्वरूप–सेठ गोविन्ददास (एकांकी)	90–95
9.	निराला भाई – महादेवी वर्मा (संस्मरण)	96–105
10.	उधार मांगना भी एक कला है– डॉ॰ बरसाने लाल चतुर्वेदी (व्यंग्य)	106–109

कबीर

कवि–परिचय

कबीर ज्ञानमार्गी शाखा के सर्वप्रमुख एक महान संत, समाज–सुधारक और क्रांतदर्शी कवि हैं। इन्हें संत–सम्प्रदाय का प्रवर्तक माना जाता है। कबीर का जन्म विक्रम संवत् 1455 के आसपास काशी में हुआ। एक किंवदन्ती के अनुसार किसी विधवा ब्राह्मणी की कोख से इनका जन्म हुआ जिसने लोकलाज के भय से नवजात शिशु को लहरतारा तालाब के किनारे छोड़ दिया इनका पालन–पोषण निःसंतान जुलाहा दम्पत्ती नीरू और नीमा ने किया।

बचपन से ही कबीर एकान्तप्रिय, चिन्तनशील और साधुसेवी स्वभाव के थे। उन्होंने जो कुछ सीखा, अनुभव की पाठशाला से सीखा। वरना कहा तो यह जाता है कि –'मसि कागद छूयो नहीं, कलम गहि नहीं हाथ।' सत्गुरू रामानन्द की कृपा से उन्हें आत्मज्ञान और प्रभु–भक्ति का अमृतत्व प्राप्त हुआ। कबीर आत्मिक उपासना अर्थात् मन की पूजा पर विश्वास करते थे। मध्यकाल के क्रान्तिपुरूष होने के कारण इन्होंने समाज के भीतर और बाहरी दोनों पक्षों पर तीखा व्यंग्यबाण कसा। वे हिन्दू और मुसलमान दोनों को एक ही पिता की संतान स्वीकार करते थे। इन्होंने व्रत, रोजा, नमाज आदि बाह्य विधि–विधानों का कड़े शब्दों में खण्डन किया। उनका मानना है कि हम सभी एक ही ईश्वर की संतान हैं। अतः हमें सदैव प्रेम–तत्त्व का निर्वाह करना चाहिए। उनका कथन है–

कहे कबीर प्रेम नहीं उपज्यो, बांध्यो जमपुरि जासी।

पाठ–परिचय

कबीर ने गुरु को सर्वोच्च स्थान प्रदान किया है। वे गुरु को संसार में सबसे बड़ा सगा–सम्बन्धी मानते थे। गुरु को मनुष्य का मार्गदर्शक, सबसे बड़ा शुभचिन्तक माना है। कबीर ने स्पष्ट किया है कि गुरू मानव को सद्मार्ग दिखाकर साधना की ओर प्रवृत्त करता है। संसार की नश्वरता पर कबीर जोर देते हैं। अज्ञानी गुरु और अज्ञानी शिष्य दोनों अज्ञानतारूपी अन्धे कूप में गिर जाते हैं। प्रभु का नाम स्मरण करने से अहंकार का विनाश हो जाता है और जीव ब्रह्ममय हो जाता है। कबीर ने निराकार ब्रह्म को सर्वस्व मानकर उसमें लौ लगाने में ही जीवन की सार्थकता सिद्ध की है। ब्रह्म का अस्तित्व, प्रेम, काम–क्रोध आदि की निन्दा, ईश्वर की एकता, जीव और ब्रह्म की एकता पर बल दिया है। प्रस्तुत दोहों में कबीर का साधनात्मक भाव भी दिखाई देता है।

**** ****

गुरु महिमा

सतगुरु की महिमा अनँत, अनँत किया उपगार।
लोचन अनँत उगाड़िया, अनँत दिखावण हार।। (1)

सतगुरु साँचा सूरिवाँ, सबद जु बाह्या एक।
लागत ही भैं मिलि गया, पड्या कलेजै छेक।। (2)

चौसठि दीवा जोइ करि, चौदह चन्दा मांहि।
तिहिं घरि किसको चानिणौं, जिहि घरि गोविंद नांहि।।(3)

थापणि पाई थिति भई, सतगुरु दीन्हीं धीर।
कबीर हीरा बणजिया, मानसरोवर तीर ।। (4)

पासा पकड़ा प्रेम का, सारी किया शरीर।
सतगुरु दाव बनाइया, खेले दास कबीर।। (5)

माया दीपक नर पतंग भ्रमि भ्रमि इवै पडंत।
कहै कबीर गुर ग्यान थैं, एक आध उबरंत।। (6)

कोटि कर्म पल मैं करै यहु मन विषिया स्वादि।
सतगुरु सबद न मानई, जनम गवायो बादि।। (7)

गुरु गुरु में भेद है, गुरु गुरु में भाव।
सोई गुरु नित बन्दिये, जो शब्द बतावे दाव।।(8)

गुरु बिन माला फेरते, गुरु बिन देते दान।
गुरु बिन सब निष्फल गया, जा पूछो वेद पुरान।। (9)

कोटिन चन्दा ऊगवें, सूरज कोटि हजार।
सतगुरु मिलिया बाहरा, दीसे घोर अँधार।। (10)

ऐसे तो सतगुरु मिले, जिनसे रहिये लाग।
सबही जग शीतल भया, जब मिटी आपनी आग।। (11)

यह तन विष की बेलरी, गुरु अमृत की खान।
सीस दिये जो गुरु मिलें, तो भी सस्ता जान।। (12)

गुरु से ज्ञान जो लीजिए, सीस दीजिए दान।
बहु तक भोंदू बह गये, राख जीव अभिमान ।। (13)

गुरु समान दाता नहीं, जाचक शिष्य समान।
चार लोक की संपदा, सो गुरु दीन्हीं दान।। (14)

सतनाम के पटतरे, देवे को कछु नाहिं।
क्या ले गुरु संतोषिये, हौंस रही मन माहि।। (15)

दोहे

मन मथुरा दिल द्वारिका काया कासी जांणि।
दसवां द्वारा देहुरा तामै जोति पिछाणि।। (1)

जब मैं था तब हरि नहिं अब हरि है मैं नाँहि।
सब अँधियारा मिटि गया जब दीपक देख्या माँहि।। (2)

सातो सबद जु बाजते, घरि घरि होते राग।
ते मन्दिर खाली पड़े, बेसण लागे काग।। (3)

आषड़िया झाई पड़ी पंथ निहारि निहारि।
जीभड़िया छाला पड़्या राम पुकारि पुकारि।। (4)

पाणी ही तैं हिम भया, हिम हवै गया बिलाइ।
जो कुछ था सोइ भया, अब कछू कह्या न जाइ।। (5)

शब्दार्थ–

उपगार– उपकार, सूरिवाँ–सूरमाँ, थिति– स्थायित्व, उबरंत– उबरना, गुरु–भारी, भोंदू–मूर्ख, संपदा– धन वैभव, हौंस– इच्छा।

लोचन– नेत्र, चानिणौ– उजाला, पासा–गोटी, विषिया– भोगादि, कोटि–करोड़, अभिमान–घमण्ड, जाचक– याचक,

साँचा– वास्तविक, थापणि– स्थापना, माया–सांसारिकता, गुरू–ज्ञान प्रदान करने वाला, सीस–सिर, दाता– देने वाला, पटतरे–बदले में,

वस्तुनिष्ठ प्रश्न–

1. हिन्दी साहित्य के इतिहास के कबीर कौनसे काल के संत कवि थे?
   (क) आदिकाल (ख) भक्ति काल
   (ग) रीति काल (घ) आधुनिक काल ( )
2. कबीर कौन सी काव्य धारा के कवि थे ?
   (क) सगुण मार्गीय
   (ख) रीति बद्ध
   (ग) रीति मुक्त
   (घ) निर्गुण भक्ति की ज्ञानाश्रयी शाखा के ( )
3. कबीर की प्रतिनिधि रचना का नाम है–
   (क) आखिरी कलाम (ख) बीजक
   (ग) पद्मावत (घ) मधु मालती ( )

4. कबीर के काव्य की भाषा है–

(क) अवहट्ट (ख) प्राकृत

(ग) शोर सैनी (घ) सधुक्कड़ी ( )

अतिलघूत्तरात्मक प्रश्न–

1. कबीर ने सतगुरु को महत्त्व क्यों दिया है?
2. 'माया दीपक नर पतंग' में कौनसा अलंकार है? लिखिए।
3. 'यह तन विष की बेलरी' कवि ने ऐसा क्यों कहा है?
4. कवि ने गुरु को दाता क्यों कहा है?

लघूत्तरात्मक प्रश्न–

1. कबीर ने कौनसे गुरु की नित्य वंदना करने को कहा है?
2. सतगुरु को सच्चा सूरिवां क्यों कहा है?
3. 'पासा पकड़ा प्रेम का' में प्रयुक्त अलंकार तथा उसकी परिभाषा लिखिए।
4. सतगुरु मिलन के क्या सुपरिणाम प्राप्त हुए?

निबंधात्मक प्रश्न–

1. पठित दोहों के आधार पर गुरु–महिमा का अपने शब्दों में वर्णन कीजिए।
2. 'जब मैं था तब ..... दीपक देख्या माँहि।' का मूल भाव क्या है? लिखिए।
3. 'पाणि ही तैं हिम ..... कह्या न जाई।' दोहे का गूढ़ार्थ स्पष्ट कीजिए।
4. आषड़िया झाई पडी पंथ निहारि निहारि।
   जीभड़िया छाला पड़्या राम पुकारि पुकारि।। दोहे में निहित काव्य–सौन्दर्य का वर्णन कीजिए।

व्याख्यात्मक प्रश्न–

1. मन मथुरा ..... तामैं ज्योति पिछाणी।
2. थापणि पाई ..... मानसरोवर तीर।
3. सतनाम के पटतरे ..... हौंस रही मन माहि।
4. सातों सबद जु बाजते ..... बेसण लागे काग।

*****

तुलसीदास

कवि–परिचय

हिन्दी साहित्य के सर्वश्रेष्ठ महाकवि तुलसीदास जी सगुण काव्य धारा में राम के उपासक थे। गोस्वामी तुलसीदास का जन्म संवत् 1554 विक्रमी (सन् 1497 ई0)में उत्तरप्रदेश के बांदा जिले में राजापुर नामक गाँव में हुआ। इनके पिता का नाम आत्माराम और माता का नाम हुलसी था। बाल्यावस्था में ही माता–पिता का देहान्त हो जाने के कारण गुरु नरहरिदास ने ही इनका लालन–पालन किया।

श्रीराम के प्रति अनन्य भक्ति ने रामचरित मानस जैसे दिव्य ग्रन्थ की रचना कवि द्वारा करवाई। रामचरितमानस के अतिरिक्त तुलसीदास जी की अन्य रचनाओं में विनयपत्रिका, कवितावली, गीतावली, दोहावली, जानकी मंगल और बरवै रामायण है। इनकी भक्ति की सबसे प्रधान विशेषता उनकी सर्वांगपूर्णता है। उसमें धर्म और ज्ञान का सुन्दर समन्वय है। इनके राम परमब्रह्म होते हुए भी गृहस्थ थे। इन्होंने पारिवारिक सम्बन्धों के आदर्श चरित्र को हमारे सामने प्रस्तुत किया है। इन्हीं सब विशेषताओं के कारण यह कहा गया है कि–

''कविता कर के तुलसी न लसै।
कविता लसि पा तुलसी की कला।।''

पाठ–परिचय

प्रस्तुत कविता तुलसीदासजी द्वारा रचित कवितावली के अयोध्याकांड का अंश है जो हृदयस्पर्शी एवं चित्रात्मक है। कवि ने सीता, राम व लक्ष्मण के वन गमन का वर्णन रोचक व सहज रूप से किया है। पथ पर महिलाओं का उलाहना, सीताजी द्वारा उनकी जिज्ञासाओं का शमन करना, राम का मुनिवेश धारण कर पदवेश बिना कंटीले पथ पर चलना, आदि भावों का शब्द चित्र हृदयस्पर्शी बन पड़ा है।

**** ****

वन गमन

सवैया

पुर तें निकसी रघुवीर–वधू, धरि धीर दये मग में डग द्वै।
झलकीं भरि भाल कनी जल की, पुट सूखि गए मधुराधर वै।।
फिरि बूझति है ''चलनो अब केतिक, पर्न कुटी करिहौ कित ह्वै?''।
तिय की लखि आतुरता पिय की अखियाँ अति चारु चलीं जल च्वै।।1।।

''जल को गए लक्खन हैं लरिका, परिखौ, पिय! छाँह घरीक ह्वै ठाढ़े।
पोंछि पसेउ वयारि करौं, अरु पायं पखारिहौं भूभुरि डाढ़े।।''
तुलसी रघुबीर प्रिया स्रम जानि कै बैठि विलंब लौं कंटक काढ़े।
जानकी नाह को नेह लख्यौ, पुलक्यो तन, वारि विलोचन बाढ़े।।2।।

ठाढ़े हैं तो द्रुम डार गहे, धनु कांधे धरे, कर सायक लै।
विकटी भ्रकुटी बड़री अंखियां, अनमोल कपोलन की छवि है।
तुलसी असि मूरति आनि हिए जड़ डारिहौं प्रान निछावरि कै।
श्रम–सीकर साँवरि देह लसै मनो रासि महातम तारकमै।।3।।

बनिता बनी स्यामल गौर के बीच, विलोकहु, री सखी! मोहिंसी हवै्।
मग जोग न, कोमल, क्यों चलिहै? सकुचात मही पदपंकज छ्वै।।
तुलसी सुनि ग्रामवधू विथकीं, पुलकीं तन औ चले लोचन च्वै।
सब भाँति मनोहर मोहन रूप, अनूप हैं भूप के बालक द्वै।।4।।

साँवरे गोरे सलोने सुभाय, मनोहरता जिति मैन लियो है।
बान कमान निषंग कसे, सिर सोहैं जटा, मुनिवेष कियो है।।
संग लिये विधु–बैनी वधू रति को जेहि रंचक रूप दियो है।
पाँयन तौ पनहीं न, पयादेहिं क्यों चलिहैं? सकुचात हियो है।।5।।

रानी मैं जानी अजानी महा, पबि पाहन हूं ते कठोर हियो है।
राजहु काज अकाज न जान्यो, कह्यो तिय को जिन कान कियो है।।
ऐसी मनोहर मूरति ये, बिछुरे कैसे प्रीतम लोग जियो है?।
आँखिन में, सखि! राखिबे जोग, इन्हें किमि कै बनबास दियो है?।।6।।

सीस जटा, उर बाहु बिसाल, विलोचन लाल, तिरीछी सी भौहैं।
तून सरासन बान धरे, तुलसी वन–मारग में सुठि सोहैं।।
सादर बारहिं वार सुभाय चितै तुम ल्यो हमरौ मन मोहैं।
पूछति ग्रामवधू सिय सों ''कहौ साँवरे से, सखि रावरे को है?''।।7।।

सुनि सुन्दर बैन सुधारस–साने, सयानी हैं जानकी जानी भली।
तिरछे करे नैन दै सैन तिन्हैं समुझाई कछू मुसुकाई चली।।
तुलसी तेहि औसर सोहैं सबै अवलोकित लोचन–लाहु अली।
अनुराग–तड़ाग में भानु उदै विगसीं मनो मंजुल कंज–कली।।8।।

शब्दार्थ–

डग–कदम,	भाल–मस्तक,	बूझति–पूछ रही है,
केतिक–कितना,	पर्नकुटी–घास की कुटिया,	तिय–पत्नी,
लखि–देखकर,	पिय–पति,	चारु–सुन्दर,
सायक–बाण,	निषंग–तरकश,	मग–मार्ग,
पाय पखारिहौ भूभुरि–डाढेः गरम बालू से जले चरणों को धो रहे है	श्रम–थकान,	नाह–नाथ, स्वामी,
तारकमै–तारागण,	मैन–कामदेव,	बैन–वचन,
सयानी–समझदार,	औसर–अवसर,	विगसी–खिली (विकसित हुई),
बाहु–भुजा,	रावरे–आपके,	मंजुल–मनोहर,
रंचक–तनिक,	जलच्वै– अश्रुधार प्रवाहित हो रही है,	जोग–योग्य,
सुधारस साने– अमृतमय,	सैन–संकेत,	अजानी–अज्ञानी,
पनही–पदवेश (जूतियाँ),	पयादेहि–पैदल ही,	

वस्तुनिष्ठ प्रश्न–

1. तुलसीदास की प्रतिनिधि रचना जो कोटि जन–मन का कण्ठहार बन गयी–
   (क) कवितावली (ख) रामाज्ञा प्रश्नावली
   (ग) रामचरित मानस (घ) गीतावली ( )
2. तुलसी के काव्य की भाषा है–
   (क) राजस्थानी (ख) अवधी
   (ग) बुन्देली (घ) मागधी ( )
3. सीताजी ने राम से क्या कारण बता कर ठहरने का आग्रह किया?
   (क) लक्ष्मण जी जल लेने गए हैं।
   (ख) सूर्य–ताप तीव्र हो गया है।
   (ग) लक्ष्मण जी पीछे रह गए हैं।
   (घ) लक्ष्मण जी नाराज हो गए हैं। ( )
4. ग्राम वधुएँ सीताजी से राह में क्या पूछ रही है?
   (क) तुम्हारे साथ जो गौर वर्ण वाले कौन है?
   (ख) श्याम वर्ण वाले कौन है?

(ग) तुम उदास क्यों हो?
(घ) तुम कहाँ से आ रही हो? ( )

अतिलघूत्तरात्मक प्रश्न–

1. 'पुर तें निकसी रघुवीर वधू' में 'रघुवीर वधू' शब्द किसके लिये प्रयुक्त हुआ है?
2. 'पबि पाहन हूं ते कठोर हियो है।' पत्थर से भी कठोर हृदय उक्त पंक्ति में किसका बताया है?
3. 'सुनि सुन्दर बैन सुधारस साने सयानी है जानकी जानी भली।' पंक्तियों में कौनसा अलंकार प्रयुक्त हुआ है?
4. वन मार्ग में मुनिवेश में कौन प्रस्थान कर रहे हैं?

लघूत्तरात्मक प्रश्न–

1. 'अखियाँ अति चारु चली जल च्वै' राम की आँखों से अश्रु किस कारण छलक पड़े?
2. 'श्रम–सीकर साँवरि देह लसै मनो रासि महातम तारक मै।' उपरोक्त पंक्तियों का भाव सौन्दर्य लिखिए।
3. सीताजी को थका हुआ जानकर श्रीराम ने कौनसा उपक्रम किया?
4. ग्राम वधुओं के पूछने पर कि 'साँवरे से सखि रावरे को है।' सुनकर सीताजी की प्रतिक्रिया क्या रही?

निबंधात्मक प्रश्न–

1. अयोध्या से बाहर वन मार्ग में दो कदम चलते ही सीताजी की दशा कैसी हो गयी? वर्णन करो।
2. 'जल को गये लक्खन है लरिका' सवैया में सीता–राम के पावन प्रेम की सुन्दर झलक मिलती है।' समझाइये।
3. वन मार्ग में राम लखन सीता को मुनिवेश में देखकर ग्रामीण स्त्रियों ने प्रतिक्रिया स्वरूप क्या कहा?
4. पठित पाठ के आधार पर श्रीराम के सौन्दर्य का वर्णन कीजिए।

व्याख्यात्मक प्रश्न–

1. रानी में जानी ..... वनवास दियो है।
2. पुर ते निकसि रघुवीर ..... चली जल च्वै।
3. वनिता बनी स्यामल..... भूप के बालक द्वै।

*****

मीराँ

कवि–परिचय

मध्यकालीन भक्ति काव्य धारा के कृष्ण भक्त कवियों में सर्वोपरि स्थान रखने वाली मीराँ का जन्म संवत् 1555 में कुड़की नामक ग्राम में हुआ। बचपन में ही मीराँ की माता का देहान्त हो जाने के कारण इनका पालन पोषण दूदाजी के पास मेड़ता में हुआ। वह अपने पिता रत्न सिंह की इकलौती पुत्री थी। मीराँ बाल्यावस्था से ही कृष्ण–प्रेम में मतवाली हो गई थी। यह प्रेम धीरे–धीरे अटल अनुराग में परिवर्तित हो गया।

मीराँ ने कृष्ण को ही अपना सर्वस्व माना। पारिवारिक व सामाजिक सभी कष्टों को सहर्ष झेलती हुई मीराँ जीवन पर्यन्त कृष्ण–भक्ति में लीन रही और अन्त में कृष्ण में ही अन्तर्लीन हो गई।

मीराँ ने 'नरसी जी रो मायरो', 'गीत गोविन्द की टीका', 'मीराँ बाई का मलार', 'राग सोरठ के पद', 'मीराँ के पद' आदि की रचना की। मीराँ के पद राजस्थानी मिश्रित ब्रजभाषा में हैं। कोई चमत्कार दिखाने के लिए उन्होंने काव्य नहीं रचा। उनका काव्य सहज है। भगवान के प्रति अनन्य अनुराग उनके पदों में सहज रूप से व्यक्त हुआ है।

पाठ–परिचय

विष पीकर मीराँ ने जन–जन को भक्ति और प्रेम के अमृत का रसपान कराया है। अपने विद्रोही स्वर में मीराँ ने पीड़ित मानवता और सदियों से शोषित नारी समाज की पीड़ा को जन–आन्दोलन का विराट स्वरूप प्रदान किया है। प्रस्तुत पदों में जहाँ एक ओर मीराँ की विरह–वेदना दिखाई देती है वहीं दूसरी ओर कृष्ण के उद्धारक स्वरूप का भी चित्रण मिलता है। सारे कष्ट व पीड़ा को आत्मसात कर मीराँ की कृष्ण के प्रति अनन्य भक्ति की बानगी प्रस्तुत पदों में मिलती है।

**** ****

(1)

राणाजी थे जहर दियो म्हे जाणी।। (टेक)
जैसे कंचन दहत अगनि में निकसत बारां बाणी।
लोकलाज कुल–काण जगत की, दई बहाय जस पांणी।
अपणे घर का परदा करले, मैं अबला बौरांणी।
तरकस तीर लग्यो मेरे हियरे, गरक गये सनकांणी।

सब संतन पर तन मन वारों, चरण–कंवल लपटांणी।
मीरा को प्रभु राखि लई है, दासी अपणी जाणी।।

(2)

हेली म्हाँसू हरि बिन रह्यो न जाय।।
सास लड़ै मेरी ननद खिजावै, राणां रह्यो रिसाय।
पहरो भी राख्यो चौकी बिठारयो, ताला दियो जुड़ाय।
पूर्व जनम की प्रीत पुराणी, सो क्यूँ छोड़ी जाय।
मीराँ के प्रभु गिरधर नागर, और न आवे म्हारी दाय।।

(3)

हरि! तुम हरो जन की भीर।
द्रोपदी की लाज राखी, तुरत बढ़ायो चीर।
भक्त कारण रूप नरहरि, धरयो आप सरीर।
हिरणकश्यप मार लीनो, धरयो नाहिन धीर।
बूड़ते गज ग्राह मारयो, कियो बाहर नीर।
दासी मीराँ लाल गिरधर, दुःख जहाँ तहाँ पीर।।

(4)

हे री मै तो दरद–दिवानी मेरा दरद न जाणै कोय।
सूली ऊपर सेज हमारी, किस विध सोना होय।
गगन–मण्डल पै सेज पिया की, किस विध मिलना होय।
घायल की गति घायल जानै, की जिन लाई होय।
जौहर की गति जौहर जानै, की जिन जौहर होय।
दरद की मारी वन–वन डोलूँ, वैद मिला नहि कोय।
मीराँ की प्रभु पीर मिटैगी, जद बैद साँवलिया होय।।

(5)

मतवारो बादर आयो रे हरि को सनेसो नहिं लायो रे।
दादुर मोर पपइया बौलै, कोयल सबद सुणायो रे।
कारी अँधियारी बिजरी चमकै, बिरहिणी अति डरपायो रे।
गाजै बाजै पवन मधुरिया, मेहा अति झड़ लायो रे।
कारी नाग बिरह अति जारी, मीराँ मन हरि भायो रे।।

शब्दार्थ–

बाराँ बाणी– खरा सोना, कुन्दन,
गरक गयो– गहरा घाव कर गया,
बोराँणी– पागल, दीवानी, हेली–सखी,
सनकांणी– पागल–सी हो गई,

रिसाय–कुपित,
दाय–हक, हिस्सा, दान,
चौकी– नगर के चतुर्दिक रास्तों पर निगरानी के लिए नियुक्त सिपाहियों की टुकड़ी,
नरहरि–नृसिंहावतार (भक्त प्रहलाद की अन्तर्कथा)
मतवारों–मस्ती में उमड़ते–घुमड़ते,
कारी अंधियारी– 'रात' के विशेषण,
खिजावै–चिढ़ाना
भीर–संकट,
द्रोपदी– पाण्ड़वों की पत्नी (द्रोपदी चीर हरण अन्तर्कथा)
बूड़ते–डूबते,
गगन–मण्डल– शून्य स्थित सहस्रार–चक्र (आध्यात्मिक साधना के संदर्भ में),
गज ग्राह– हाथी और मगरमच्छ की अन्तर्कथा।

वस्तुनिष्ठ प्रश्न–

1. मीराँ को जहर दिया था?
   (क) सन्तों ने (ख) राणां ने
   (ग) ननद ने (घ) सास ने ( )
2. मीराँ की भक्ति किस प्रकार की थी?
   (क) माधुर्य भक्ति (ख) सख्य भक्ति
   (ग) दाम्पत्य भक्ति (घ) दास्य भक्ति ( )
3. मीराँ किसकी अनन्य भक्त थी?
   (क) राम (ख) कृष्ण
   (ग) विष्णु (घ) शिव ( )
4. मीराँ का काव्य किस प्रकार का है?
   (क) वीर काव्य (ख) सरल काव्य
   (ग) गीति काव्य (घ) हास्य काव्य ( )

अतिलघूत्तरात्मक प्रश्न–

1. मीराँ के काव्य की प्रमुख भाषा कौनसी है?
2. मीराँ स्वयं को किसकी दासी मानती है?
3. सोना, कुन्दन कैसे बनता है?
4. सास–ननद ने मीराँ को क्या क्या कष्ट दिए?

लघूत्तरात्मक प्रश्न–

1. 'द्रोपदी की लाज राखी, तुरत बढ़ायो चीर' का आशय स्पष्ट कीजिए।
2. हरि! तुम हरो जन की भीर' से क्या तात्पर्य है?
3. हे री मैं तो दरद दीवानी मेरा दरद न जाणै कोय' पंक्ति में मीराँ किस दर्द की बात कर रही है?
4. 'बूड़ते गज ग्राह मार्‌यो, कियो बाहर नीर' के आधार पर अन्तर्कथा अपने शब्दों में लिखिए।

निबंधात्मक प्रश्न–

1. पठित पदों के आधार पर मीराँ की काव्यगत विशेषताएँ लिखिए।
2. मीराँ की विरह वेदना अपने शब्दों में लिखिए।
3. 'हरि तुम हरो जन की भीर' के आधार पर कृष्ण के उद्धारक रूप का विस्तृत वर्णन कीजिए।
4. पावस के बादलों ने मीराँ की व्यथा बढ़ा दी, कैसे? विस्तार से लिखिए।

व्याख्यात्मक प्रश्न–

1. हेली म्हाँसू ..... म्हारी दाय।
2. हे री मै तो ..... साँवलिया होय।

*****

रसखान

कवि–परिचय

रसखान हिन्दी के प्रसिद्ध कवि हुए हैं। इनका जन्म सन् 1548 में हुआ माना जाता है। इनका मूल नाम सैयद इब्राहिम था। कृष्ण भक्ति ने उन्हें ऐसा मुग्ध कर दिया कि गोस्वामी विट्ठलनाथ से दीक्षा ली और ब्रजभूमि में जा बसे। सन् 1628 के लगभग उनकी मृत्यु हुई। इनकी सारी कविता कृष्ण की भक्ति में रची गई है।

'सुजान रसखान' और 'प्रेमवाटिका' इनकी उपलब्ध कृतियाँ हैं। इन्होंने गीतिकाव्य का आश्रय न लेकर कवित्त सवैया को भावाभिव्यक्ति का माध्यम बनाया है। इनके काव्य में कृष्ण की रूप–माधुरी, ब्रज–महिमा, राधा–कृष्ण की प्रेम–लीलाओं का मनोहर वर्णन मिलता है। इनके काव्य में ब्रज–भाषा का अत्यन्त सरस और मनोरम प्रयोग मिलता है, जिसमें जरा भी शब्दाडम्बर नहीं है। इन्होंने अपने काव्य में प्रेम की मार्मिक अभिव्यंजना की है।

पाठ–परिचय

रसखान सचमुच रस की खान है। प्रस्तुत सवैयों में अपने आराध्य कृष्ण के प्रति प्रेम की निश्छलता, आडम्बरहीनता, भावुकता, एकनिष्ठ आकुलता आदि की भाव धारा प्रवाहित होती है। उनकी संपूर्ण कविता में एक भावुक ह्रदय छलकता हुआ दिखाई देता है। सहज प्रेम की महत्ता बताई गई है। कहीं श्रीकृष्ण के बालरूप का सुन्दर चित्रण करते हुए उनके सामीप्य सुख के आनंद का वर्णन किया है तो कहीं रसखान श्रीकृष्ण से जुड़ी प्रत्येक वस्तु पर आठों सिद्धि तथा नौ निधियों को न्यौछावर कर देना चाहते हैं। कवि हर स्थिति में ब्रजभूमि पर ही जन्म लेना चाहता है। रसखान के छन्दों में उनका कृष्ण प्रेम व्याकुलता में जैसे तटबन्ध तोड़कर बहना चाहता है। उनकी रचनाओं में रससिक्त करने की जो शक्ति है वह उनके रसखान नाम को सार्थक करती है।

सवैया

(1) सेस महेस गनेस दिनेस, सुरेसहु जाहि निरन्तर गावै ।
जाहि अनादि अनन्त अखण्ड अछेद अभेद सुवेद बतावे।
नारद से सुक व्यास रटे पचिहारे तऊ पुनि पार न पावे।
ताहि अहीर की छोहरिया छछिया भर छाछ पे नाच नचावे।।

(2) आजु गई हुती भोर ही हौं रसखानि रई बहि नन्द के भौनहिं।
वाको जियौ जुग लाख करोर जसोमति को सुख जात कह्यौ नहिं।

तेल लगाइ लगाइ कै अंजन भौंहैं बनाइ बनाइ डिठौनहिं।
डालि हेमलनि हार निहारत वारत ज्यौ पुचकारत छौनहिं।।

(3) धूरिभरे अति सोभित स्यामजू जैसी बनी सिर सुन्दर चोटी।
खेलत खात फिरै अंगना पग पैंजनी बाजति पीरी कछोटी।
वा छबि कों रसखानि बिलोकत वारत काम कला निधि कोटी।
काग के भाग बड़े सजनी हरि–हाथ सों लै गयौ माखन–रोटी।।

(4) मानुष हौ तौ वही रसखानि बसौं ब्रज गौकुल गाँव के ग्वारन।
जौ पसु हौं तो कहा बस मेरो चरौं नित नंद की धेनु मँझारन।।
पाहन हौं तो वही गिरि को जो धरयौ कर छत्र पुरन्दर–कारन।
जो खग हौं तो बसेरो करौ, मिलि कालिंदी–कूल कदंब की डारन।।

(5) वा लकुटी अरु कामरिया पर राज तिहूँ पुर को तजि डारौं।
आठहु सिद्धि नवौं निधि को सुख नंद की गाइ चराइ बिसारौं।।
ए रसखानि जबै इन नैनन तें ब्रज के बन–बाग तड़ाग निहारौं।
कौटिक लौं कलधौंत के धाम करील की कुंजन ऊपर वारौं।।

(6) बैन वहीं उनको गुन गाइ औ कान वही उन बैन सों सानी।
हाथ वही उन गात सरै अरू पाइ वही जु वही अनुजानी।।
जान वही उन आन के संग औ मान वही जु करै मनमानी।
त्यौं रसखानि वही रसखानि जु है रसखानि सों है रसखानि।।

(7) सेस सुरेस दिनेस गनेस प्रजेस धनेस महेस मनावौ।
कोऊ भवानी भजौ, मन की सब आस सबै विधि जाइ पुरावौ।।
कोऊ रमा भजि लेहु महा धन, कोऊ कहुँ मनवांछित पावौ।
पै रसखानि वहीं मेरो साधन, और त्रिलोक रहौ कि नसावौ।।

शब्दार्थ–

अनादि– जिसका आरम्भ नहीं;
अनन्त– जिसका अन्त नहीं;
अखण्ड– जिसके खण्ड नहीं;
अभेद– जिसको जाना ना जा सके।
भौनहिं– भवन;
अंजन–काजल;
डिठौनहिं– काजल का टीका (नजर न लगे इस हेतु),
हेमलनि– हेमपुष्प;
वारत– न्यौछावर
छौनहि–बेटा।

धूरिभरे– धूल से भरे हुए
कछोटी–लंगोटी;
धेनु– गाय;
पुरंदर –इन्द्र;
कदंब–एक प्रसिद्ध वृक्ष
कामरिया–कम्बल;
कलधौंत– स्वर्ण मंड़ित;
बैन–वाणी; गात–शरीर
आठहु सिद्धि–आठ सिद्धियाँ (अणिमा, महिमा, गरिमा, लघिमा, प्राप्ति, प्राकाम्य, ईशत्व और वशित्व);
सुरेस– देवताओं के देवता
प्रजेस–ब्रह्म
महेस–शिव
नसावौ– नष्ट, नाश।
पैंजनी– पायल;
बिलोकत–देखना
मंझारन– बीच में;
कालिंदी–कूल–यमुना किनारे;
लकुटी– लाठी;
बिसारौं– भूलना;
करील–कटीली झाडियाँ
सेस–शेषनाग;
नवौं निधि– नौ निधियाँ (महापद्म, पद्म, शंख, मकर, कच्छप, मुकुन्द, कुन्द, नील, बर्च)
दिनेस–सूर्य
धनेस–विष्णु
पुरावौ– पूरी करना

वस्तुनिष्ठ प्रश्न–

1. 'ताहि अहीर की छोहरिया छछिया भरी छाछ पे नाच नचावै।'
श्रीकृष्ण गोपियों की छछिया भर छाछ के लिए उनके इशारों पर नाचते हैं। क्यों?
(क) गोपियों के सहज प्रेम के रस के कारण
(ख) उन्हें नाचने, गाने में आनंद आने के कारण
(ग) गोपियों से स्वार्थ सिद्ध करने के कारण
(घ) गोपियों को मूर्ख बनाकर दही–छाछ प्राप्त करने के कारण ( )
2. काग के भाग्य की सराहना क्यों की गई है?
(क) माखन–रोटी मिलने के कारण
(ख) गोपियों के दर्शन–सुख के कारण
(ग) श्रीकृष्ण के स्पर्श–सुख के कारण
(घ) ब्रज का पक्षी होने के कारण ( )
3. 'त्यौं रसखानि वही रसखानि जु है रसखानि सों है रसखानि।' पंक्ति में अलंकार है–
(क) उपमा (ख) श्लेष (ग) यमक (घ) रूपक ( )
4. रसखान का हार्दिक लगाव प्रकट हुआ है–
(क) जन्मभूमि के प्रति (ख) कर्मभूमि के प्रति
(ग) ब्रजभूमि के प्रति (घ) भारत–भू के प्रति ( )

अतिलघूत्तरात्मक प्रश्न–

1. एक लकुटी और कामरिया पर कवि सब कुछ न्यौछावर करने को क्यों तैयार है?
2. आपके विचार से कवि पशु, पक्षी और पहाड़ के रूप में श्री कृष्ण का सान्निध्य क्यों प्राप्त करना चाहता है?

3. ब्रजभूमि के प्रति कवि का प्रेम किन–किन रूपों में अभिव्यक्त हुआ है?
4. मुख व कानों की सार्थकता किसमें है?

लघूत्तरात्मक प्रश्न–

1. 'कोटिक लौं कलधौत के धाम करील की कुंजन ऊपर वारौं।' पंक्ति का भाव–सौन्दर्य लिखिये।
2. 'जो खग हौं तो बसेरो करौ, मिलि कालिन्दी–कूल कदंब की डारन।' पंक्ति का शिल्प सौन्दर्य स्पष्ट कीजिए।
3. नारद, सुकदेव तथा व्यास आदि ऋषि–मुनि भी श्रीकृष्ण के स्वरुप एवं उनकी लीला को समझ न सके। क्यों?
4. 'रसखान' रस की खान है। कैसे? स्पष्ट करें।

निबंधात्मक प्रश्न–

1. श्रीकृष्ण के बाल–रूप के वर्णन को अपने शब्दों में लिखिए।
2. रसखान के सवैयों में जिस प्रकार ब्रजभूमि के प्रति प्रेम अभिव्यक्त हुआ है, उसी तरह आप अपनी मातृभूमि के प्रति अपने मनोभावों को अभिव्यक्त कीजिए।
3. 'श्रीकृष्ण का सान्निध्य एवं ब्रजभूमि का सामीप्य पाना रसखान के लिए अलौकिक आनंद की अनुभूति है।' इस आधार पर रसखान की कृष्णभक्ति की विशेषताएं लिखिए।

व्याख्यात्मक प्रश्न–

1. आजु गई हुती ..... पुचकारत छौनहि।
2. बैन वहीं उनको ..... सो है रसखानि।

*****

मैथिली शरण गुप्त

कवि–परिचय

भारतीय संस्कृति के अनन्य प्रस्तोता मैथिलीशरण गुप्त का जन्म उत्तरप्रदेश के झांसी जिले के चिरगाँव नामक स्थान पर हुआ। वे हिन्दी के लोकप्रिय कवि थे। कवि–कर्म में इनकी प्रवृत्ति का श्रेय महावीर प्रसाद द्विवेदी को है। इनकी कृति 'भारत–भारती' ने हिन्दी प्रेमियों को अपनी ओर आकृष्ट किया। इस कृति ने राष्ट्रीय स्वाभिमान तथा गौरव की हूँकार भरी और स्वतंत्रता हेतु जन आन्दोलन की नवीन पृष्ठभूमि तैयार की। साकेत, यशोधरा, जय भारत, द्वापर, विष्णुप्रिया, पंचवटी, नहुष, जयद्रथ वध इनकी प्रमुख रचनाएँ हैं।

पाठ–परिचय

गुप्तजी को भारतीय संस्कृति का प्रवक्ता और प्रस्तोता कहना उपयुक्त रहेगा। प्रस्तुत दोनों कविताएँ भारत–भारती से ली गई हैं। मंगलाचरण में माँ भारती की आराधना की है। इसके अतिरिक्त उन्होंने 'आदर्श' और 'आर्य स्त्रियाँ' कविताओं में भारतीय आदर्श और स्त्रियों के सतीत्व भाव को उकेरा है। देश में ऐसे सन्त हुए जिन्होंने वसुधैव कुटुम्बकम् की भावना की स्थापना हेतु अपना सर्वस्व न्यौछावर कर दिया। ऐसे अद्वितीय संतों के आदर्श को गुप्तजी ने प्रस्तुत कविता में दर्शाया है।

'आर्य स्त्रियाँ' कविता में गुप्तजी ने भारतीय स्त्री के संस्कार, तप, तेज को वर्णित किया है। भारतीय संस्कृति के प्रति निष्ठा ने गुप्तजी के काव्य को पूर्ण रूप से भारतीयता के रंग में रंग दिया है।

।। मंगलाचरण ।।

मानस–भवन में आर्य्यजन जिसकी उतारें आरती–
भगवान! भारतवर्ष में गूँजे हमारी भारती।
हो भद्रभावोद्भाविनी वह भारती हे भगवते।
सीतापते! सीतापते! !गीतापते! गीतापते! ।। 1।।

आदर्श

आदर्श जन संसार में इतने कहां पर हैं हुए?
सत्कार्य्य–भूषण आर्य्यगण जितने यहाँ पर हैं हुए।
हैं रह गये यद्यपि हमारे गीत आज रहे सहे।
पर दूसरों के भी वचन साक्षी हमारे हो रहे।। (1)

गौतम, वसिष्ठ समान मुनिवर ज्ञानदायक थे यहाँ
मनु, याज्ञवल्क्य–समान सप्तम विधि–विधायक थे यहाँ,
वाल्मीकि–वेदव्यास–से गुण–गान–गायक थे यहाँ,
पृथु, पुरू, भरत, रघु–से अलौकिक लोक–नायक थे यहाँ।। (2)

लक्ष्मी नहीं, सर्वस्व जावे, सत्य छोडेंगे नहीं,
अन्धे बनें पर सत्य से सम्बन्ध तोडेंगे नहीं
निज सुत–मरण स्वीकार है पर वचन की रक्षा रहे,
है कौन जो उन पूर्वजों के शील की सीमा कहे? (3)

सर्वस्व करके दान जो चालीस दिन भूखे रहे,
अपने अतिथि–सत्कार में फिर भी न जो रूखे रहे।
पर–तृप्ति कर निज तृप्ति मानी रन्तिदेव नरेश ने,
ऐसे अतिथि–सन्तोष कर पैदा किये किस देश ने? (4)

आमिष दिया अपना जिन्होंने श्येन–भक्षण के लिए,
जो बिक गए चाण्डाल के घर सत्य–रक्षण के लिए।
दे दीं जिन्होंने अस्थियां परमार्थ–हित जानी जहाँ,
शिबि, हरिश्चन्द्र, दधीचि–से होते रहे दानी यहाँ।। (5)

सत्पुत्र पुरू–से थे जिन्होंने तात–हित सब कुछ सहा,
भाई भरत से थे जिन्होंने राज्य भी त्यागा अहा।
जो धीरता के, वीरता के प्रौढ़तम पालक हुए,
प्रह्लाद, ध्रुव, कुश, लव तथा अभिमन्यु–सम बालक हुए।। (6)

वह भीष्म का इन्द्रिय–दमन, उनकी धरा–सी धीरता,
वह शील उनका और उनकी वीरता, गम्भीरता,
उनकी सरलता और वह विशाल विवेकता,
है एक जन के अनुकरण में सब गुणों की एकता।। (7)

आर्य–स्त्रियाँ

केवल पुरूष ही थे न वे जिनका जगत को गर्व था,
गृह–देवियाँ भी थी हमारी देवियाँ ही सर्वथा।
था अत्रि–अनसूया–सदृश गार्हस्थ्य दुर्लभ स्वर्ग में,
दाम्पत्य में वह सौख्य था जो सौख्य था अपवर्ग में।। (8)

निज स्वामियों के कार्य्य में समभाग जो लेतीं न वे,

अनुरागपूर्वक योग जो उसमें सदा देतीं न वे।
तो फिर कहातीं किस तरह 'अर्द्धांगिनी' सुकुमारियाँ?
तात्पर्य्य यह–अनुरूप ही थी नरवरों के नारियाँ।। (9)

हारे मनोहत पुत्र को फिर बल जिन्होंने था दिया,
रहते जिन्होंने नव–वधू के सुत–विरह स्वीकृत किया।
द्विज–पुत्र–रक्षा–हित जिन्होंने सुत–मरण सोचा नहीं,
विदुला, सुमित्रा और कुन्ती–तुल्य माताएँ रहीं।। (10)

बदली न जो, अल्पायु वर भी वर लिया सो वर लिया,
मुनि को सताकर भूल से, जिसने उचित प्रतिफल दिया।
सेवार्थ जिसने रोगियों के था विराम लिया नहीं,
थीं धन्य सावित्री, सुकन्या और अंशुमती यहीं।। (11)

मूँदे रही दोनों नयन आमरण 'गान्धारी' जहाँ,
पति–संग दमयन्ती, स्वयं वन–वन फिरी मारी जहाँ।
यों ही जहाँ की नारियों ने धर्म्म का पालन किया,
आश्चर्य क्या फिर ईश ने जो दिव्य–बल उनको दिया।। (12)

अबला जनों का आत्मबल संसार में था वह नया,
चाहा उन्होंने तो अधिक क्या, रवि–उदय भी रूक गया?
जिस क्षुब्ध मुनि की दृष्टि से जलकर विहग भू पर गिरा,
वह भी सति के तेज–सम्मुख रह गया निष्प्रभ निरा।। (13)

शब्दार्थ–

साक्षी–गवाह,	लोकनायक– संसार का नेतृत्व करने वाले,		शील–मर्यादा,
आमिष–मांस,	श्येन–बाज,	सोख्य– सुख,	द्विज–ब्राह्मण,
तुल्य–समान,	विराम–विश्राम,	ईश–ईश्वर,	क्षुब्ध–दुःखी,
विहग–पक्षी,	निष्प्रभ–प्रभाहीन,	निरा–बिल्कुल,	अर्द्धांगिनी–पत्नी,

परमार्थ–दूसरों के हित के लिए,

विदुला–सिन्धुराज से हारकर निश्चेष्ट बैठे संजय नामक राजकुमार की माता विदुला जिन्होंने अपने पुत्र को युद्ध के लिए उत्साहित किया और विजयश्री दिलाई,

सुकन्या– राजा शर्याति की पुत्री जिसने अनजाने में तपस्यारत ऋषि च्यवन की आँखें फोड़ दी थी और बाद में उनकी पत्नी बनकर उनकी सेवा की।

अंशुमती– सुव्रत नामक मुनीश्वर की स्त्री थी, जो लोगों की सेवा करती थी।

वस्तुनिष्ठ प्रश्न–

1. मैथिलीशरण गुप्त को जिस नाम से जाना जाता है, वह है–
   (क) महाकवि (ख) राष्ट्र कवि (ग) राज कवि (घ) ओज कवि ( )
2. गुप्त जी की अक्षय कीर्ति का आधार स्तम्भ है–
   (क) रेणुका (ख) कुरुक्षेत्र (ग) भारत भारती (घ) हूँकार ( )
3. खड़ी बोली हिन्दी के उन्नायक कवि के रूप में जो प्रतिष्ठित है–
   (क) सुमित्रानन्दन पंत (ख) हरिवंश राय बच्चन
   (ग) मैथिलीशरण गुप्त (घ) धर्मवीर भारती ( )
4. गुप्त जी द्वारा रचित महाकाव्य है–
   (क) नहुष (ख) किसान (ग) जयद्रथ वध (घ) साकेत ( )

अतिलघूत्तरात्मक प्रश्न–

1. कवि मानस भवन में किसकी आरती उतारने की बात कह रहा है?
2. चाहे लक्ष्मी चली जाय, लेकिन भारत–जन को किसका साथ नहीं छोड़ने के लिए कहा गया है?
3. आदर्शों के नाम पर केवल गीत रह गये हैं, पंक्ति में कवि ने ऐसा क्यों कहा है?
4. 'आमिष दिया अपना जिन्होंने श्येन भक्षण के लिए।' किसने अपना आमिष काट कर श्येन को खाने को दिया?

लघूत्तरात्मक प्रश्न–

1. वाल्मीकि–वेदव्यास–से गुण–गान–गायक थे यहाँ।
   पृथु, पुरु, भरत, रघु–से अलौकिक लोकनायक थे यहाँ।। उपरोक्त पंक्तियों के कला सौन्दर्य को लिखिये।
2. अपने पुत्र का मरण किसने स्वीकार किया और क्यों?
3. हमारे देश में सुकुमारियों को अर्द्धांगिनी क्यों कहा गया? अर्द्धांगिनी का तात्पर्य क्या है?
4. द्विज पुत्रों की रक्षार्थ अपने पुत्रों को मृत्यु–पथ पर अग्रसर कर दिया? ऐसी कौनसी वीर माता थी तथा प्रसंग क्या था?

निबंधात्मक प्रश्न–

1. मंगलाचरण का भाव अपने शब्दों में लिखिए।
2. भारतीय वाङ्मय में कौन कौन सी आर्य नारी रत्न हुई हैं। संस्कार व ज्ञान की दृष्टि से उनके वैशिष्ट्य का वर्णन करो।
3. भारतीय ऋषि परम्परा के आलोक पुंज ऋषि मुनि तथा मनस्वी, तपस्वी कौन हुए हैं? उनका आदर्श स्थापना में क्या योगदान रहा?
4. पठित पाठ में आए पौराणिक प्रसंगों का वर्णन अपने शब्दों में कीजिए।

व्याख्यात्मक प्रश्न–

1. आदर्श जन संसार ..... हमारे हो रहें।
2. लक्ष्मी नही सर्वस्व ..... शील की सीमा कहे।
3. मूँदे रही दोनों नयन ..... दिव्यबल उनको दिया।

सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला'

कवि–परिचय

छायावादी कवियों में विलक्षण प्रतिभा के धनी सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' का जन्म सन् 1897 ई. में हुआ। निराला जी ऐसे युगान्तकारी कवि रहे जिनकी कविता में तत्कालीन समाज में जी रहे मानव; जिसमें स्वयं निराला भी हैं, की पीड़ा, परवशता एवं परतंत्रता के प्रति तीव्र आक्रोश, अन्याय तथा असमानता के प्रति गहरे विद्रोह की विपरीत विषम जीवन स्थितियों के प्रति संघर्ष करने की गूँज सुनायी देती है।

यद्यपि उन्होंने कविता के साथ उपन्यास, कहानी, आलोचना आदि विधाओं में भी लिखा किन्तु मूलतः निराला कवि थे। जो जीवन के यथार्थ का चित्रण पूरी कल्पनाशीलता से करते थे। बंगला, अंग्रेजी, संस्कृत तथा हिन्दी पर उनका असाधारण अधिकार था। वे अभिव्यक्ति के लिए नये काव्य–रूप खोजते एवं भाषा को नयी अभिव्यक्ति–भंगिमाएँ प्रदान करते थे तथा जीवन परिवर्तन का माध्यम काव्य को बनाते थे।

अनामिका, परिमल, गीतिका, तुलसीदास, कुकुरमुत्ता, अणिमा, अपरा, नये पत्ते, अर्चना, आराधना, राम की शक्ति पूजा, गीत गूँज तथा सांध्य काकली उनकी प्रसिद्ध काव्य–कृतियाँ हैं। निराला जी की समस्त रचनाओं को 'निराला ग्रंथावली' के आठ खण्डों में प्रकाशित कर दिया गया है।

हिन्दी में निराला को मुक्त छन्द के प्रणेता के रूप में जाना जाता है। उनकी कविता बहुआयामी है– उसमें ओजस्वी भावों के ज्वालामुखी का विस्फोट है, तो नारी के अलौकिक एवं दिव्य सौन्दर्य का चित्रण है। साधारण जन के कष्टों का साधारण भाषा में वर्णन है।

पाठ–परिचय

'जागो फिर एक बार' शीर्षक से ही उन्होंने दो कविताएँ लिखी जिनमें से एक कविता में प्रातःकालीन मनोरम दृश्यों का चित्रण है और जागने का आह्वान है तो दूसरी कविता में परतन्त्रता में सुप्त, निराश भारतीय जनता को उनके गौरवमय अतीत की याद दिलाते हुए उसे जागने का आह्वान किया गया है।

निराला जी प्रस्तुत कविता में यह रेखांकित करते हैं कि 'योग्य जन जीता है'। योग्य जन जीता है पश्चिम का ही सिद्धान्त नहीं, गीता का भी यही उद्देश्य है। कवि इस कविता में गुरु गोविन्दसिंह के ओजस्वी शौर्य की याद दिलाता है जिन्होंने नारा दिया था, 'सवा लाख से एक लड़ाऊँ तब गोविन्द सिंह नाम कहाऊँ'। निराला जी इस कविता में भारतवासियों की इस प्रवृत्ति पर भी चोट करते हैं कि हम आध्यात्मिक क्षेत्र में तो अग्रणी बने और जीवन की नश्वरता को स्वीकारते रहे। जबकि शौर्यवान होते हुए भी पराधीन हो गए। निरालाजी भारतवासियों को इसी पराधीनता के विरुद्ध संघर्ष करने की प्रेरणा देते हैं।

भिक्षुक नामक कविता में कवि ने भिक्षुक का शब्द चित्र प्रस्तुत करते हुए पेट की भूख के लिए संघर्ष का मार्मिक यथार्थ चित्र प्रस्तुत किया है। उसके दर्द को स्वयं कवि आत्मसात करने के लिए भिक्षुक को अभिमन्यु की भाँति साहसी तथा संघर्षशील होने का आह्वान करता है। भिक्षुक के दर्द से कवि ने तारतम्य स्थापित किया है तथा दूषित सामाजिक संरचना पर करारा प्रहार किया है।

**** ****

जागो फिर एक बार

जागो फिर एक बार!
समर अमर कर प्राण,
गान गाए महासिन्धु–से
सिन्धु–नद–तीरवासी!
सैन्धव तुरंगों पर
चतुरंग चमूसंग,
सवा सवा लाख पर
एक को चढ़ाऊँगा,
गोविन्द सिंह निज
नाम जब कहाऊँगा,
किसने सुनाया यह
वीर–जन–मोहन अति
दुर्जय–संग्राम–राग,
फाग का खेला रण
बारहों महीने में?–
शेरों की मांद में
आया है आज स्यार
जागो फिर एक बार!
सत् श्री अकाल,
भाल–अनल धक–धक कर जला,
भस्म हो गया था काल–
तीनों गुण ताप त्रय,
अभय हो गये थे तुम
मृत्युंजय व्योमकेश के समान,
अमृत–सन्तान! तीव्र
भेदकर सप्तावरण–मरण लोक,

शोकहारी। पहुँचे थे वहाँ
जहाँ आसन है सहस्रार
जागो फिर एक बार!
सिंह की गोद से
छीनता रे शिशु कौन?
मौन भी क्या रहती वह
रहते प्राण? रे अंजान।
एक मेषमाता ही
रहती है निर्निमेष–
दुर्बल वह–
छिनती सन्तान जब
जन्म पर अपने अभिशप्त
तप्त आँसू बहाती है,
किन्तु क्या,
योग्य जन जीता है।
पश्चिम की उक्ति नहीं–
गीता है, गीता है–
स्मरण करो बार–बार
जागो फिर एक बार!
पशु नहीं, वीर तुम,
समर शूर, क्रूर नहीं,
काल–चक्र में ही दबे
आज तुम राज–कुँवर! समर–सरताज!
पर क्या है,
सब माया है–माया है,
मुक्त हो सदा ही तुम,
बाधा–विहीन–बन्ध छन्द ज्यों,
डूबे आनन्द में सच्चिदानन्द रूप
महामन्त्र ऋषियों का
अणुओं परमाणुओं में फूँका हुआ
''तुम हो महान, तुम सदा हो महान्
है नश्वर यह दीन भाव,
कायरता, कामपरता।

ब्रह्म हो तुम
पद–रज भर भी है नहीं पूरा यह विश्व–भार''
जागो फिर एक बार!

भिक्षुक

वह आता–
दो टूक कलेजे के करता
पछताता पथ पर आता।
पेट–पीठ दोनों मिलकर हैं एक,
चल रहा लकुटिया टेक,
मुट्ठीभर दाने को, भूख मिटाने को,
मुँह फटी पुरानी झोली को फैलाता
दो टूक कलेजे के करता
पछताता पथ पर आता।
साथ दो बच्चे भी हैं सदा हाथ फैलाये,
बायें से वे मलते हुए पेट चलते हैं
और दाहिना दयादृष्टि पाने की ओर बढ़ाये
भूख से सूख ओंठ जब जाते,
दाता–भाग्यविधाता– से क्या पाते
घूँट आँसुओं के पीकर रह जाते,
चाट रहे जूठी पत्तल वे
कभी सड़क पर खड़े हुए,
और झपट लेने को उनसे कुत्ते भी हैं अड़े हुए।
ठहरो, अहो है मेरे हृदय में,
अमृत में सींच दूंगा
अभिमन्यु जैसे हो सकोगे तुम
तुम्हारे दुःख मैं अपने हृदय में खींच लूँगा।

शब्दार्थ–

समर–युद्ध,
चमू चतुरंग– सेना के चारों अंग (हाथी, घोड़ा, पैदल, रथी),
माँद–गुफा,
दुर्जय– जिसे कठिनाई से जीता जा सके,
अनल–आग,
तीनो गुण– सत, रज, तम,

त्रयताप–दैहिक,दैविक,भौतिक, व्योमकेश–शिव, मेषमाता–भेड़,
निर्निमेष–टकटकी, अपलक, नश्वर–नाशवान

वस्तुनिष्ठ प्रश्न–

1. सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' कवि हैं?
   (क) प्रगतिवादी (ख) प्रयोगवादी
   (ग) हालावादी (घ) छायावादी ( )
2. 'जागो फिर एक बार!' कविता में कौनसा भाव है?
   (क) उत्साह (ख) शोक
   (ग) करुण (घ) जुगुप्सा ( )

अतिलघूत्तरात्मक प्रश्न–

1. 'शेर की माँद में आया है स्यार' यहां 'स्यार' शब्द किसके लिए आया है?
2. 'भिक्षुक' कविता में कौनसा रस है? लिखिए।
3. 'जागो फिर एक बार' में कवि युवा पीढ़ी को क्या संदेश दे रहा है?
4. 'सैन्धव तुरंगों पर, चतुरंग चमूसंग
   सवा सवा लाख पर, एक को चढ़ाऊँगा।' इन काव्य पंक्तियों में प्रयुक्त अलंकार को लिखिए।

लघूत्तरात्मक प्रश्न–

1. सिंह की गोद से, छीनता रे शिशु कौन? पंक्ति का आशय स्पष्ट कीजिए।
2. 'तुम्हारा दुःख मैं अपने हृदय से खींच लूँगा। इसके लिए कवि के अनुसार भिक्षुक को क्या करना होगा? स्पष्ट कीजिए।
3. 'योग्य जन जीता है, पश्चिम की उक्ति नहीं गीता है।' पंक्ति का भाव स्पष्ट कीजिए।
4. 'भिक्षुक' का शब्द–चित्र कैसा है? लिखिए।

निबंधात्मक प्रश्न–

1. 'जागो फिर एक बार।' कविता का केन्द्रीय भाव स्पष्ट कीजिए।
2. 'भिक्षुक' कविता में करुणा का प्रतिबिम्ब झलकता है। 'पठित कविता के आधार पर समझाइये।
3. 'जागो फिर एक बार' कविता में ओज तथा दार्शनिकता का समन्वय है।' इस कथन की समीक्षा कीजिए।
4. पठित पाठ के आधार पर निराला के काव्य की विशेषताओं का वर्णन कीजिए।

व्याख्यात्मक प्रश्न–

1. समर अमर कर ..... आज आया है स्यार।
2. पशु नहीं वीर तुम ..... जागो फिर एक बार।
3. ठहरो, अहो है मेरे ..... अपने हृदय में खींच लूँगा।

*****

सुमित्रानन्दन पंत

कवि–परिचय

सुमित्रा नन्दन पंत का जन्म सन् 1900 ई. में कुमायूँ प्रदेश में कौसानी ग्राम में हुआ था। उन्होंने जिस परिवेश में जन्म लिया और जिसमें वे बड़े हुए, वह प्रकृति का शान्त, सुन्दर व शिव रूप था। प्रकृति की उसी आभामयी और मनोरम भूमि ने उन्हें मानवता के प्रति समर्पित होने के लिए प्रेरित किया। वे आस्तिक तो थे ही, साथ ही विश्व एकता, मानव कल्याण की सांस्कृतिक विचारधारा और मान्यताओं में विश्वास रखते थे। पंत अपनी कोमल भावनाओं, प्रकृति प्रेम, मानवतावाद और समन्वय भावना के कारण आधुनिक कवियों में शीर्षस्थ है।

इनकी प्रमुख काव्य रचनाएँ 'ग्रन्थि, ''पल्लव'', 'गुंजन', 'युगान्त', 'युगवाणी', 'ग्राम्या', 'स्वर्ण किरण', अणिमा, 'वाणी', 'कला और बूढ़ा चाँद', 'स्वर्ण धूलि' आदि हैं। लोकायतन पंत जी का महाकाव्य है। 'चिदम्बरा', इनकी चुनी हुई कविताओं का संग्रह है, जिसे भारतीय ज्ञानपीठ पुरस्कार प्राप्त हुआ।

पाठ–परिचय

पंतजी प्रकृति के कुशल चितेरे एवं सुकुमार कवि थे। प्रस्तुत पाठ में पंतजी की 'पर्वत प्रदेश में पावस' कविता उद्धृत है। यह कविता छायावादी शैली के प्रकृति–वर्णन का श्रेष्ठ उदाहरण है। प्रकृति अनादि काल से मनुष्य की चिर–सहचरी रही है। प्राकृतिक–सौन्दर्य हमेशा से ही मनुष्य को गुदगुदाता रहा है। इस कविता में कवि ने पर्वतीय प्रदेश में वर्षा ऋतु में होने वाले परिवर्तन का हृदयग्राही चित्र प्रस्तुत किया है। कविता में कवि ने मानवीकरण के माध्यम से जड़ प्रकृति को चेतन रूप में चित्रित कर उसके आह्लादकारी सौन्दर्य का वर्णन किया है।

**** ****

पर्वत प्रदेश में पावस

पावस ऋतु थी, पर्वत प्रदेश,
पल–पल परिवर्तित प्रकृति–वेश!
मेखलाकार पर्वत अपार
अपने सहस्र दृग सुमन फाड़
अवलोक रहा है बार–बार
नीचे जल में निज महाकार,

–जिसके चरणों में पला ताल
दर्पण–सा फैला है विशाल !
गिरि का गौरव गाकर झर्–झर्
मद में नस–नस उत्तेजित कर
मोती की लड़ियों–से सुन्दर
झरते हैं झाग–भरे निर्झर !
गिरिवर के उर से उठ–उठकर
उच्चाकांक्षाओं – से तरूवर
हैं झाँक रहे नीरव नभ पर
अनिमेष, अटल, कुछ चिन्तापर !
–उड़ गया, अचानक लो भूधर !
फड़का अपार वारिद के पर!
रव–शेष रह गए हैं निर्झर!
है टूट पड़ा भू पर अम्बर!
धँस गए धरा में सभय शाल !
उठ रहा धुआँ, जल गया ताल !
–यों जलद यान में विचर–विचर !
था इन्द्र खेलता इन्द्रजाल !
इस तरह मेरे चितरे हृदय की!
बाह्य प्रकृति बनी चमत्कृत चित्र थी!
सरल शैशव की सुखद सुधि सी वही!
बालिका मेरी मनोरम मित्र थी !

शब्दार्थ–

पावस–वर्षाऋतु,	मेखलाकार– करधनी के आकार का,	दृग– नेत्र,
अवलोकन–देखना,	महाकार– विशाल स्वरूप,	नीरव– ध्वनि रहित, शान्त,
अनिमेष– अपलक,	भूधर–पर्वत,	शैशव– बाल्यकाल,

पर–पंख, शाल– एक प्रकार का पहाड़ी वृक्ष वारिद– बादल

वस्तुनिष्ठ प्रश्न–

1. 'उड़ गया अचानक लो भूधर! फड़का अपार वारिद के पर' इस पंक्ति में भूधर किसके पंख लगाकर उड़ गया ?
   (क) पारे के (ख) बादल के
   (ग) पेड़ों के (घ) फूलों के ( )
2. कवि ने सरल शैशव की सुखद सुधि सी किसे कहा है ?
   (क) प्रकृति को (ख) बालिका को
   (ग) माँ को (घ) पिता को ( )

अतिलघूत्तरात्मक प्रश्न–

1. 'पर्वत प्रदेश में पावस' कविता में कवि ने किस ऋतु का वर्णन किया है?
2. नस–नस किसकी उत्तेजित है?
3. 'दर्पण सा फैला है विशाल' यहाँ दर्पण सा किसे कहा गया है?
4. इन्द्र कौनसे यान में बैठकर इन्द्रजाल खेलता है?

लघूत्तरात्मक प्रश्न–

1. वर्षा ऋतु में प्रकृति में आये परिवर्तन को अपने शब्दों में लिखिए।
2. 'है टूट पड़ा भू पर अम्बर' पंक्ति का आशय स्पष्ट कीजिए।
3. 'पर्वत प्रदेश में पावस' कविता में कवि ने अचेतन प्रकृति को चेतन रूप में चित्रित किया है। इस कथन को स्पष्ट कीजिए।

निबंधात्मक प्रश्न–

1. 'पन्त प्रकृति के सुकुमार कवि हैं।' इस कथन को पठित कविता के आधार पर स्पष्ट कीजिए।
2. 'प्रकृति मनुष्य की चिर सहचरी रही है।' इस कथन के संदर्भ में प्रकृति और पर्यावरण के प्रति हमारे क्या दायित्व है। स्पष्ट कीजिए।
3. 'पर्वत प्रदेश में पावस' कविता के आधार पर पंत की काव्यगत विशेषताओं का विस्तृत वर्णन कीजिए।

व्याख्यात्मक प्रश्न–

1. मेखलाकार पर्वत ..... है विशाल।
2. उड़ गया ..... जल गया ताल।
3. गिरि का गौरव ..... कुछ चिन्ता पर।

*****

रामधारी सिंह दिनकर

कवि–परिचय

राष्ट्रीय–सांस्कृतिक काव्यधारा में दिनकर अग्रणी कवि थे। मैथिलीशरण गुप्त के बाद दिनकर राष्ट्रकवि के रूप में जाने गए। कविता में सामाजिक चेतना की मुखरता के कारण उन्हें युग–चारण भी कहा गया। दिनकर का जन्म 1908 ई. में बिहार के मुंगेर जिले के सिमरिया गाँव के एक साधारण किसान परिवार में हुआ। उनकी बी.ए. तक की शिक्षा पटना विश्वविद्यालय में हुई। उन्होंने विभिन्न विभागों में अपनी सेवाएँ दीं। बाद में सभी पद छोड़कर उन्होंने गृह मंत्रालय में हिन्दी सलाहकार का पद संभाला। दिनकर ने काव्य, निबन्ध, इतिहास और सांस्कृतिक विषयों के लेखन के द्वारा हिन्दी साहित्य को गौरवान्वित किया। आपकी प्रमुख कृतियों में रेणुका, हूँकार, रसवन्ती, कुरुक्षेत्र, उर्वशी, परशुराम की प्रतीक्षा और संस्कृति के चार अध्याय हैं। भारत सरकार ने उन्हें पदम्भूषण से अलंकृत किया। उनकी शोधकृति 'संस्कृति के चार अध्याय' को साहित्य अकादमी और काव्यकृति 'उर्वशी' को भारतीय ज्ञानपीठ पुरस्कार मिला। 25 अप्रैल, 1974 को दिवंगत हुए दिनकर ने अपनी ओजस्वी वाणी से भारत की महत्ता का गौरवगान किया है।

पाठ–परिचय

प्रस्तुत कविता–'अनल किरीट' दिनकर की काव्ययात्रा के प्रथम चरण की कविता है। कविता में उदात्त और ओजभाव है, जिसमें कवि कहता है कि साहस, वीरता और संघर्षशीलता मनुष्य के बुनियादी गुणधर्म हैं। सफल और सार्थक जीवन इसके बिना संभव नहीं है। संघर्षशील व्यक्ति ही जीवन में सफलता प्राप्त करता है। ये सभी के लिए प्रेरणादायक कविता है।

**** ****

अनल–किरीट

लेना अनल–किरीट भाल पर ओ आशिक होने वाले।
कालकूट पहले पी लेना, सुधा बीज बोने वाले।

धरकर चरण विजित शृंगों पर झण्डा वही उड़ाते हैं,
अपनी ही उँगली पर जो खंजर की जंग छुड़ाते हैं।
पड़ी समय से होड़, खींच मत तलवों से काँटे रुककर,

फूंक–फूंक चलती न जवानी चोटों से बचकर, झुककर।

नींद कहाँ उनकी आँखों में जो धुन के मतवाले हैं?
गति की तृषा और बढ़ती, पड़ते पग में जब छाले हैं।

जागरूक की जय निश्चित है, हार चुके सोने वाले,
लेना अनल–किरीट भाल पर ओ आशिक होने वाले।

जिन्हें देखकर डोल गयी हिम्मत दिलेर मरदानों की,
उन मौजों पर चली जा रही किश्ती कुछ दीवानों की।

बेफिक्री का समाँ कि तूफाँ में भी एक तराना है,
दाँतों उँगली धरे खड़ा अचरज से भरा जमाना है।

अभय बैठ ज्वालामुखियों पर अपना मंत्र जगाते हैं,
ये हैं वे, जिनके जादू पानी में आग लगाते हैं।

रूह जरा पहचान रखें इनकी जादू–टोने वाले,
लेना अनल–किरीट भाल पर, आशिक होने वाले।

शब्दार्थ–

अनल–आग,	किरीट–मुकुट,	भाल–ललाट,
आशिक–प्रेमी,	कालकूट– हलाहल विष,	सुधा– अमृत,
शृंग– चोटी (शिखर),	खंजर–कटार,	जंग–लडाई,
होड़– प्रतिस्पर्धा,	धुन–इरादे,	तृषा– प्यास,
दिलेर– वीर, साहसी,	मौजों–लहरे,	किश्ती–नाव,
दीवाना–पागल,	बेफिक्री– निश्चिंतता,	समाँ–दृश्य,
तूफाँ–समुद्री आँधी,	तराना–गीत,	अचरज–आश्चर्य,
अभय–निर्भय,	रूह–आत्मा,	जरा–वृद्धावस्था।

वस्तुनिष्ठ प्रश्न–

1. 'अनल–किरीट' शब्द से कवि दिनकर का तात्पर्य है–
   (क) अनल–ज्वाल (ख) अनल–माल
   (ग) मुश्किलों का ताज (घ) अनल–भाल ( )
2. ऐसे लोगों को नींद नहीं आती जो–
   (क) हिम्मत वाले हैं (ख) धीरज वाले हैं

(ग) धुन के मतवाले हैं (घ) साहस वाले हैं ( )

अतिलघूत्तरात्मक प्रश्न–

1. 'कालकूट पहले पी लेना' पंक्ति में 'कालकूट' शब्द का क्या अर्थ है?
2. 'पड़ी समय से होड़ खींच मत पाँवों से काँटे रुककर।' पंक्ति में 'होड़' शब्द का आशय स्पष्ट कीजिए।
3. जीवन संग्राम में किन व्यक्तियों की जय निश्चित होती है?
4. 'दाँतों उँगली धरे खड़ा अचरज से भरा जमाना है।' काव्य पंक्ति में प्रयुक्त मुहावरे का अर्थ लिखिए।

लघूत्तरात्मक प्रश्न–

1. सुधा बीज बोने वालों को कैसी परिस्थितियों का सामना करना पड़ता है?
2. 'फूंक–फूंक चलती न जवानी चोटों से बचकर झुककर।' पंक्ति में प्रयुक्त अलंकार बताते हुए परिभाषा लिखिए।
3. ऐसे कौनसे व्यक्ति हैं जिनके जादू पानी में भी आग लगाने का कार्य करते हैं? समझाइये।
4. विजित शृंगों पर किस प्रकार के लोग झण्डा उड़ाते हैं? स्पष्ट कीजिए।

निबंधात्मक प्रश्न–

1. 'अनल–किरीट' कविता उदात्त और ओज भावमयी है।' पठित कविता के आधार पर उक्त कथन को समझाइये।
2. पठित कविता अनल किरीट का केन्द्रीय भाव लिखते हुए कवि का कविता में निहित उद्देश्य स्पष्ट कीजिए।
3. अनल–किरीट कविता के आधार पर दिनकर के काव्य की विशेषताएँ लिखिए।
4. प्रस्तुत कविता 'अनल–किरीट' का कला सौन्दर्य स्पष्ट कीजिए।

व्याख्यात्मक प्रश्न–

1. पड़ी समय में..... जब छाले हैं।
2. अभय बैठ ..... होने वाले।

*****

श्याम नारायण पाण्डेय

कवि–परिचय

वीर रस के श्रेष्ठ कवियों में पाण्डेय जी की गणना है। प्राचीन भारतीय संस्कृति के प्रति विशेष अनुराग उनके काव्य में परिलक्षित होता है। इनका जन्म सं. 1907 में हुआ। प्राचीन संस्कृति के प्रतीक महापुरूषों के वीर कृत्य इनके काव्यों के आधार बने। पद्मिनी की गाथा को लेकर 'जौहर' काव्य की रचना हुई। 'हल्दीघाटी' काव्य में राणा प्रताप के जीवन की घटनाओं का ओजमय वर्णन है। युद्ध–वर्णन सजीव एवं चित्रोपम है। घटनाओं और दृश्यों के वर्णन में ये इतने पटु है कि वे नेत्रों के सम्मुख नृत्य करने लगते हैं। भाषा खड़ीबोली है जिसमें वेग, ओज एवं प्रवाह रहता है। आपकी रचनाएँ प्रसाद एवं ओज गुण प्रधान होने के कारण लोकप्रिय है।

'त्रेता के दो वीर', 'माधव', 'हल्दी घाटी' और 'जौहर' आप की प्रसिद्ध रचनाएँ हैं।

पाठ–परिचय

वीर रस की श्रेष्ठ कविता 'मेवाड़ का सिंहासन' समूचे मेवाड़ के कालजयी इतिहास का निर्माण करने वाले बलिदानी अमर हुतात्माओं का स्मरण कराती है। मेवाड़ का सिंहासन भगवान एकलिंग का आसन है स्वयं राणा इसके दीवान है। अतः इसकी रक्षा का आह्वान किया गया है। कविता के वाचन मात्र से रोमांच तथा जोश उत्पन्न हो जाता है। मेवाड़ का इतिहास, इतिहास का एक–एक क्षण, युद्ध, बलिदान तथा उद्भट बलिदानी योद्धा हमारे समक्ष साकार एवं जीवंत हो जाते हैं।

**** ****

मेवाड़ का सिंहासन

यह एकलिंग का आसन है, इस पर न किसी का शासन है।
नित सिहर रहा कमलासन है, यह सिंहासन, सिंहासन है।।
यह सम्मानित अधिराजों से, अर्चित है राज समाजों से।
इसके पद रज पोंछे जाते, भूपों के सिर के ताजों से।।
इसकी रक्षा के लिए हुई कुर्बानी पर कुर्बानी है।
राणा ! तू इसकी रक्षा कर, यह सिंहासन अभिमानी है।।
खिलजी तलवारों के नीचे थरथरा रहा था अवनी–तल।

वह रत्नसिंह था रत्नसिंह जिसने कर दिया उसे शीतल।।
मेवाड़–भूमि बलिवेदी पर होते बलि शिशु रनिवासों के।
गोरा–बादल रण–कौशल से उज्ज्वल पन्ने इतिहासों के।।
जिस ने जौहर को जन्म दिया वह वीर पद्मिनी रानी है।
राणा ! तू इसकी रक्षा कर यह सिंहासन अभिमानी है।।
मूँजा के सिर के शोणित से जिसके भाले की प्यास बुझी।
हम्मीर वीर वह था जिसकी असि वैरी–उर कर पार जुझी।।
प्रण किया वीरवर चूँडा ने जननी–पद सेवा करने का।
कुम्भा ने भी व्रत ठान लिया रत्नों से अंचल भरने का।।
वह वीर–प्रसविनी वीर–भूमि, रजपूती की रजधानी है।
राणा ! तू इसकी रक्षा कर, यह सिंहासन अभिमानी है।।
जयमल ने जीवन दान दिया, पत्ता ने अर्पण प्राण किया।
कल्ला ने इसकी रक्षा में अपना सब कुछ कुर्बान किया।।
साँगा को अस्सी घाव लगे, मरहम–पट्टी थी आँखों पर।
तो भी उसकी असि बिजली–सी फिर गई छपाछप लाखों पर।।
अब भी करूणा की करूण कथा हम सब को याद जबानी है।
राणा ! तू इसकी रक्षा कर, यह सिंहासन अभिमानी है।।
क्रीड़ा होती हथियारों से, होती थी केलि कटारों से।
असि–धार देखने को उँगली, कट जाती थी तलवारों से।।
हल्दी–घाटी का भैरव–पथ रंग दिया गया था खूनों से।
जननी–पद–अर्चन किया गया जीवन के विकच प्रसूनों से।।
अब तक उस भीषण घाटी के कण–कण की चढ़ी जवानी है।
राणा ! तू इसकी रक्षा कर, यह सिंहासन अभिमानी है।।
भीलों में रण झंकार अभी, लटकी कटि में तलवार अभी।
भोलेपन में ललकार अभी, आँखों में है ललकार अभी।।
गिरिवर के उन्नत–शृंगों पर तरू के मेवे आहार बने।
इसकी रक्षा के लिए शिखर थे राणा के दरबार बने।।

जावरमाला के गह्वर में अब भी तो निर्मल पानी है।
राणा ! तू इसकी रक्षा कर, यह सिंहासन अभिमानी है।।

चूंडावत ने तन भूषित कर युवती के सिर की माला से।
खलबली मचा दी मुगलों में, अपने भीषणतम भाला से।।
घोड़े को गज पर चढ़ा दिया, 'मत मारो' मुगल पुकार हुई।
फिर राजसिंह–चूंडावत से अवरंगजेब की हार हुई।।

वह चामती रानी थी, जिसकी चेरि बनी मुगलानी है।
राणा ! तू इसकी रक्षा कर, यह सिंहासन अभिमानी है।।

कुछ ही दिन बीते फतह सिंह मेवाड़–देश का शासक था।
वह राणा तेज उपासक था तेजस्वी था अरि–नाशक था।।
उसके चरणों को चूम लिया कर लिया समर्चन लाखों ने।
टकटकी लगा उसकी छवि को देखा कर्जन की आँखों ने।।

सुनता हूँ उस मर्दाने की दिल्ली की अजब कहानी है।
राणा ! तू इसकी रक्षा कर, यह सिंहासन अभिमानी है।।

शब्दार्थ–

चेरी–सेविका,
अजब–अनोखी,
असिधार– तलवार की धार,
विकच– खिले हुए, विकसित,
प्रसून–पुष्प,
उन्नत श्रृंग– ऊँचे शिखर,
भूषित–अलंकृत, सजा–धजा
भूप–राजा,
अरिनाशक–शत्रु का संहार करने वाला,
वीर प्रसविनी– वीरों को जन्म देने वाली,
अवनि तल– भूतल,
कटि–कमर,
गह्वर –खड्डा,
चामती– चारूमति रानी।

वस्तुनिष्ठ प्रश्न–

1. श्याम नारायण पाण्डेय कौनसे रस के कवि थे?
   (क) श्रृंगार (ख) शांत
   (ग) वीर (घ) करूण ( )
2. कवि ने एकलिंग का आसन किसे कहा है?
   (क) दिल्ली के सिंहासन को (ख) जयपुर के सिंहासन को
   (ग) मालवा के सिंहासन को (घ) मेवाड़ के सिंहासन को ( )
3. जौहर को जन्म देने वाली रानी का नाम है–
   (क) रानी दुर्गावती (ख) झाँसी रानी

(ग) रानी पद्मिनी (घ) रानी दमयंती ( )

4. 'हल्दी घाटी' नामक प्रसिद्ध काव्य के रचनाकार है –
(क) रामधारी सिंह दिनकर (ख) रामनरेश त्रिपाठी
(ग) रामचन्द्र शुक्ल (घ) श्यामनारायण पाण्डेय ( )

अतिलघूत्तरात्मक प्रश्न–

1. मेवाड़ के सिंहासन के लिए लोगों ने क्या किया?
2. कवि ने वीर प्रसविनी वीर–भूमि किसे कहा है?
3. वीरों ने जननी के पद का अर्चन किससे किया था?
4. राणा फतहसिंह की सुन्दर छवि को टकटकी लगाकर किसने देखा?

लघूत्तरात्मक प्रश्न–

1. कवि ने मेवाड़ के सिंहासन का महत्व कविता में प्रतिपादित किया है। अपने शब्दों में लिखिए।
2. असिधार की जाँच मेवाड़ के वीर कैसे करते थे?
3. हल्दीघाटी का भैरवपथ खून से क्यों रंग दिया था?
4. चूण्डावत ने जिस युवती के सिर से अपना तन भूषित किया वह कौन थी तथा चूण्डावत ने ऐसा क्यों किया?

निबंधात्मक प्रश्न–

1. 'मेवाड़ का सिंहासन' कविता का सार अपने शब्दों में लिखिए।
2. 'मेवाड़ का सिंहासन' कविता की वर्तमान में प्रासंगिकता सिद्ध कीजिए।
3. निम्नलिखित वीरों के वीरता एवं बलिदानी प्रसंगों का वर्णन कीजिए। सांगा, कुंभा, हम्मीर, पद्मिनी, कल्ला, चामती रानी, हाड़ीरानी, जयमल।
4. मेवाड़ का सिंहासन कविता का काव्य सौन्दर्य लिखिए।

व्याख्यात्मक प्रश्न–

1. खिलजी तलवारों से ..... इतिहासों के।
2. चूण्डावत ने तन ..... हार हुई।

*****

दुष्यन्त कुमार

कवि–परिचय

दुष्यन्त कुमार का जन्म 1933 में उत्तर प्रदेश के बिजनौर जिले के राजपुर नवाड़ा गाँव में हुआ था। आपका पूरा नाम दुष्यन्त कुमार त्यागी है। काव्य रचना के आरम्भ में आपने अपना नाम दुष्यन्त कुमार परदेशी रखा। बाद में केवल दुष्यन्त कुमार रह गया। बचपन से ही कविता लेखन में रुचि थी।

प्रारम्भिक शिक्षा मुजफ्फरनगर के दयानन्द सरस्वती विद्यालय में हुई बाद में मुरादाबाद जिले से हाई स्कूल परीक्षा उत्तीर्ण की। इलाहाबाद विश्वविद्यालय से हिन्दी विषय में स्नातकोत्तर परीक्षा पास की। वहीं पर साहित्यिक संस्था 'परिमल' व 'नये पत्र' से जुड़कर साहित्यिक जीवन प्रारम्भ किया। 1958 में आकाशवाणी में भी काम किया। सन् 1960 में आकाशवाणी भोपाल केन्द्र पर रहे। सन् 1961 में आप मध्यप्रदेश के भाषा विभाग में सहायक संचालक नियुक्त हुए। 1975 में भोपाल में ही आपका स्वर्गवास हुआ।

'आवाज के घेरे', सूर्य का स्वागत, आंगन में एक वृद्धा, छोटे छोटे सवाल, दुहरी जिन्दगी (उपन्यास), मसीहा मर गया, मन के कोण (नाटक), साये में धूप (गजल संग्रह), एक कंठ विषपायी (काव्य नाटक) आदि प्रमुख रचनाएँ हैं।

पाठ–परिचय

नयी कविता के सशक्त हस्ताक्षर और कवि दुष्यन्त कुमार के गजल संग्रह 'साये में धूप' (1975) से चयनित दो गजलें आग जलनी चाहिए' तथा आदमी की पीर' में व्यवस्था परिवर्तन का स्वर प्रमुख रूप से मुखरित हुआ है। 'आग जलनी चाहिए' में देश में व्याप्त दुर्व्यवस्था में आमूलचूल परिवर्तन का प्रतीकों के माध्यम से आह्वान किया गया है तथा आदमी की पीर में नकारात्मक, विपरीत परिस्थितियों में युवा पीढ़ी की पीड़ा को शिष्ट क्रांति का सकारात्मक स्वर तथा प्रेरणा का संकेत दिया है। दोनों गजलें गेयशैली में है।

**** ****

आग जलनी चाहिए

हो गई है पीर पर्वत–सी पिघलनी चाहिए
इस हिमालय से कोई गंगा निकलनी चाहिए।

आज यह दीवार, परदों की तरह हिलने लगी

शर्त लेकिन थी कि ये बुनियाद हिलनी चाहिए।

हर सड़क पर, हर गली में, हर नगर, हर गाँव में
हाथ लहराते हुए हर लाश चलनी चाहिए।

सिर्फ हंगामा खड़ा करना मेरा मकसद नहीं
मेरी कोशिश है कि ये सूरत बदलनी चाहिए।

मेरे सीने में नहीं तो तेरे सीने में सही
हो कहीं भी आग, लेकिन आग जलनी चाहिए।

आदमी की पीर

इस नदी की धार में ठंडी हवा आती तो है
नाव जर्जर ही सही, लहरों से टकराती तो है।

एक चिनगारी कहीं से ढूँढ़ लाओ दोस्तों
इस दिये में तेल से भीगी हुई बाती तो है।

एक खँडहर के हृदय–सी, एक जंगली फूल–सी
आदमी की पीर गूँगी ही सही, गाती तो है।

एक चादर साँझ ने सारे नगर पर डाल दी
यह अँधेरे की सड़क उस भोर तक जाती तो है।

निर्वचन मैदान में लेटी हुई है जो नदी,
पत्थरों से, ओट में, जा–जाके बतियाती तो है।

दुख नहीं कोई कि अब उपलब्धियों के नाम पर,
और कुछ हो या न हो, आकाश–सी छाती तो है।

शब्दार्थ–

बुनियाद–नींव,
मकसद– उद्देश्य,
हंगामा–उत्पात (निरर्थक झगड़ा),
सूरत–समाज के हालात,
जर्जर– पुरानी कमजोर,
निर्वचन– बिना बोले हुए (बिना वचन के),
उपलब्धियां– जो मिला है, प्राप्त हुआ है।

वस्तुनिष्ठ प्रश्न–

1. 'साये में धूप' नामक गजल संग्रह का प्रकाशन वर्ष है–
   (क) सन् 1960 (ख) सन् 1957
   (ग) सन् 1984 (घ) सन् 1975 ( )
2. 'आदमी की पीर' गजल संकेत करती है–
   (क) व्यक्ति की पीड़ा की ओर
   (ख) व्यक्ति की हताशा की ओर
   (ग) सामाजिक कुण्ठा की ओर
   (घ) देश की संभावनाओं की ओर ( )

अतिलघूत्तरात्मक प्रश्न–

1. पीर का पर्वत के समान होने से कवि का क्या तात्पर्य है?
2. 'यह बुनियाद हिलनी चाहिए'। यहाँ 'बुनियाद' का क्या अर्थ है?
3. 'नाव जर्जर ही सही, लहरों से टकराती तो है। यहाँ कवि जर्जर के माध्यम से क्या कहना चाहते हैं?
4. 'यह अंधेरे की सड़क उस भोर तक जाती तो है।' कवि ने अंधेरे की सड़क किसे कहा है?

लघूत्तरात्मक प्रश्न–

1. 'हाथ लहराते हुए हर लाश चलनी चाहिए' पंक्ति का आशय स्पष्ट कीजिए।
2. आज यह दीवार परदों की तरह हिलने लगी शर्त यह थी कि यह बुनियाद हिलनी चाहिए।' इन काव्य पंक्तियों का भाव स्पष्ट कीजिए।
3. 'एक खंडहर के हृदय–सी एक जंगली फूल–सी'। इस पंक्ति में कौनसा अलंकार प्रयुक्त हुआ है? परिभाषा भी दीजिए।
4. अगर हंगामा खड़ा करना कवि का मकसद नहीं है तो उसका मकसद क्या है? और वह क्या करना चाहता है?

निबंधात्मक प्रश्न–

1. 'आग जलनी चाहिए' कविता का सार अपने शब्दों में लिखिए।
2. 'आदमी की पीर' गजल का काव्य सौन्दर्य स्पष्ट कीजिए।
3. पठित गजलों के आधार पर दुष्यन्त कुमार के काव्य की विशेषताओं का वर्णन कीजिए।

व्याख्यात्मक प्रश्न–

1. हर सड़क पर ..... आग जलनी चाहिए।
2. एक खंडहर के ..... बतियाती तो है।

*****

कन्हैयालाल सेठिया

कवि–परिचय

कन्हैया लाल सेठिया राजस्थान के मूर्धन्य साहित्यकारों में रहे हैं। कवि कन्हैयालाल सेठिया का जन्म 11 सितम्बर, 1919 ई. को राजस्थान के सुजानगढ़ शहर के एक धर्मप्राण व्यवसायी परिवार में हुआ। इनकी प्रारंभिक शिक्षा सुजानगढ़ में तथा उच्च शिक्षा कलकत्ता में हुई। देश की आजादी के लिए हुए राष्ट्रीय आन्दोलन में सेठिया जी की सक्रिय भूमिका रही। इनकी पहली पुस्तक 'रमणीयाँ रा सोरठा; सन् 1940 में मारवाड़ी में प्रकाशित हुई। इसके बाद खड़ी बोली में इनकी कविताओं का संकलन 'अग्नि वीणा' के नाम से 1942 में प्रकाशित हुआ। नामानुरूप इस संकलन की रचनाओं में देश भक्ति का स्वर प्रबलता से मुखरित हुआ है। तदुपरान्त खड़ी बोली और मारवाड़ी दोनों में इन्होंने समान रूप से साहित्य सृजन किया। अब तक इनकी खड़ी बोली में 18 तथा मारवाड़ी में 14 रचनाएँ प्रकाशित हो चुकी हैं। इनकी प्रमुख रचनाओं में 'रमणीयाँ रा सोरठा', मीझर', सबद, मायड़ रो हेलो, 'धर कूचा धर मंजला, अग्नि वीणा, बनफूल, आज हिमालय बोला, मर्म अनाम, स्वगत, देह–विदेह, आकाश–गंगा, वामन विराट और श्रेयस आदि उल्लेखनीय हैं।

श्री कन्हैयालाल सेठिया को अनेक पुरस्कारों से सम्मानित किया गया है। जिनमें भारतीय ज्ञानपीठ नई दिल्ली द्वारा 'मूर्ति देवी पुरस्कार', राजस्थानी साहित्य अकादमी द्वारा साहित्य मनीषी सम्मान, राजस्थानी भाषा, साहित्य एवं संस्कृति अकादमी का सर्वोच्च सूर्यमल्ल मिश्रण शिखर पुरस्कार उल्लेखनीय है।

पाठ–परिचय

प्रस्तुत कविता 'धरती धोरां री में राजस्थान की वीर प्रसूता भूमि के विविध स्वरूपों का कवि ने साक्षात्कार कराया है। कविता में राजस्थान के विभिन्न अंचलों की प्रमुख विशेषताओं का उल्लेख करते हुए कवि ने प्राकृतिक सौन्दर्य के शब्द चित्र मनोरम ढंग से प्रस्तुत किए हैं।

**** ****

धरती धोरां री

धरती धोरां री
आ तो सुरगां नै सरमावै,
इ पर देव रमण नै आवे,
इ रो जस नर नारी गावै,
धरती धोरां री!

सूरज कण कण नै चमकावै,
चन्दो इमरत रस बरसावै,
तारा निछरावळ कर ज्यावै,
धरती धोरां री!

काळा बादळिया घहरावै,
बिरखा घूघरिया घमकावै,
बिजळी डरती ओला खावै,
धरती धोरां री!

लुळ लुळ बाजरियो लैरावै,
मक्की झालो देर बुलावै,
कुदरत दोन्यूं हाथ लुटावै,
धरती धोरां री!

पंछी मधरा मधरा बोलै,
मिसरी मीठै सुर स्यूं घोलै,
झीणूं बायरियो पंपोळे,
धरती धोरां री!

नारा नागौरी हिंद ताता,
मदुआ ऊँट अणूंता खाथा!
इ रै घोड़ां री के बातां?
धरती धोरां री!

इ रा फळ फुलड़ा मन भावण,
इ रै धीणों आंगण आंगण
बाजै सगळां स्यू बड़ भागण
धरती धोरां री!

इ रो चित्तौड़ो गढ़ लूंठो,
ओ तो रण वीरां रो खूंटो,
इ रो जोधाणूं नौ कूंटो,
धरती धोरां री!

आबू आभै रै परवाणै,
लूणी गंगाजी ही जाणै,
ऊभो जयसलमेर सिंवाणै,
धरती धोरां री!

इ रो बीकाणूं गरबीलो,
इ रो अलवर जबर हठीलो,
इ रो अजयमेर भड़कीलो,
धरती धोरां री!

जैपर नगरयां में पटराणी,

कोटा बूँदी कद अणजाणी?
चम्बल कैवे आं री काणी,
धरती धोरां री!

कोनी नांव भरतपुर छोटो,
घूम्यो सूरजमल रो घोटो,
खाई मात फिरंगी मोटो,
धरती धोरां री!

इ स्यूं नहीं माळवो न्यारो,
मोबी हरियाणो है प्यारो,
मिलतो तीन्यां रो उणियारो,
धरती धोरां री!

ईडर पालनपुर है ईं रा,
सागी जामण जाया बीरा,
अै तो टुकड़ा मरू रै जी रा,
धरती धोरां री!

सोरठ बंध्यो सारेठां लारै,
भेळप सिंध आप हंकारै
मूमल बिसर्‌यो हेत चितारै,
धरती धोरां री!

इ पर तनड़ो मनड़ो वारां,
इ पर जीवण प्राण उंवारां,
इ री धजा उड़ै गिगनारां,
मायड़ कोड़ां री!

इ नै मोत्यां थाळ बधावां,
इ री धूळ लिलाड़ लगावां,
इ रो मोटो भाग सरावां,
धरती धोरां री!

इ रै सत री आण निभावां,
इ रै पत नै नहीं लजावां,
इ नै माथो भेंट चढ़ावां
मायड़ कोड़ां री,
धरती धोरां री!

शब्दार्थ–

धोरां– रेत के टीले, रमण– लीला, इमरत–अमृत, निछरावल–न्यौछावर,
लूळ,लूळ्–झुक,झुक लैरावे– लहराना, झालो– इशारा, मधरा–मधुर,
खूंटो– केन्द्र, मदुआ– मस्त, कद– कब, कोनी– नहीं,
लारै–साथ, संग, धजा– ध्वजा, लिलाड़– मस्तक, उणियारो– शक्ल, सूरत,
फिरंगी– अंग्रेज, काणी– कहानी।

वस्तुनिष्ठ प्रश्न–

1. राजस्थान की धरती की तुलना किससे की गई है?
   (क) आकाश (ख) स्वर्ग
   (ग) पाताल (घ) सृष्टि ( )
2. 'ओ तो रण वीराँ रो खूँटो' में खूँटों किसके लिए प्रयुक्त हुआ है?
   (क) चित्तौड (ख) बीकानेर
   (ग) अजमेर (घ) भरतपुर ( )
3. भरतपुर के राजा का क्या नाम था ?
   (क) रतन मल (ख) सूरज मल
   (ग) भरत सिंह (घ) रतन सिंह ( )

अतिलघूत्तरात्मक प्रश्न–

1. 'धरती धोरां री' कविता का मूल भाव क्या है?
2. कवि ने किस प्रान्त की धरती को 'धोरां री' धरती कहा है?
3. कवि के अनुसार नगरों की पटरानी कौनसा नगर है?
4. राजस्थान की धरती पर अमृत की वर्षा कौन करता है?

लघूत्तरात्मक प्रश्न–

1. 'आ तो सुरगां नै सरमावै, ई पर देव रमण नै आवै' का आशय स्पष्ट कीजिए।
2. 'धरती धोरां री' कविता में कवि धरती पर क्या–क्या न्यौछावर करने की बात करता है?
3. 'धरती धोरां री' कविता में विविध शहरों की विशेषताओं का वर्णन किया गया है। शहरों के नाम लिखते हुए उनकी विशेषताएँ भी स्पष्ट करें।

निबंधात्मक प्रश्न–

1. 'धरती धोरां री' कविता के आधार पर कन्हैयालाल सेठिया जी के काव्य सौन्दर्य को स्पष्ट कीजिए?
2. 'धरती धोरां री' कविता में जन्म भूमि के प्रति प्रबल अनुराग की अभिव्यक्ति हुई है? उदाहरण सहित स्पष्ट कीजिए।

व्याख्यात्मक प्रश्न–

1. नारा नागौरी ..... नौ कूंटो।
2. जैपर नगर्यां में ..... फिरंगी मोटो।

*****

मित्रता

–आचार्य रामचन्द्र शुक्ल

लेखक–परिचय

शुक्लजी हिन्दी के श्रेष्ठ समालोचक, मौलिक निबंधकार, गंभीर लेखक और कर्मठ साहित्यकार थे। ये हिन्दी के वैज्ञानिक समीक्षा के जनक कहे जाते हैं। इनकी कृतियों में गंभीर चिन्तन और सूक्ष्म–दृष्टि का अद्‌भुत सामंजस्य दीख पड़ता है। शैली में सजीवता एवं रोचकता लाने के लिए हास्य व्यंग्य का समावेश उनकी अपनी विशेषता है। 'चिन्तामणि' में संगृहीत भावों और मनोविकारों पर लिखे गये इनके निबंध हिन्दी–साहित्य में बेजोड़ माने जाते हैं। शुक्लजी की भाषा प्रौढ़–गम्भीर, परिष्कृत और सूत्रात्मक है, जो गम्भीर विवेचना और गवेषणात्मक चिन्तन के लिए सर्वथा उपयुक्त है। शुक्लजी की कृतियों में 'चिन्तामणि', 'रस मीमांसा', त्रिवेणी, हिन्दी–साहित्य का इतिहास, जायसी–ग्रन्थावली की भूमिका उल्लेखनीय है।

पाठ–परिचय

'मित्रता' निबंध में शुक्लजी ने बताया है कि मित्रों का चयन करते समय बहुत सतर्कता रखनी चाहिए। केवल बाह्य रंग रूप से मित्रता स्वयं को धोखा देना है, सामने वाले का अतीत तथा चरित्र देखकर मित्रता हेतु आगे आना चाहिए। विश्वासपात्र मित्र से बड़ी भारी रक्षा रहती है। वह सच्चे पथ–प्रदर्शक के समान होता है और मुसीबत के समय अपने मित्र को आगे बढ़ाने के लिए प्रोत्साहित करता है। आदर्श मित्र के लक्षणों पर प्रकाश डालते हुए शुक्लजी ने मित्रता की आवश्यकता और मित्र के कर्त्तव्यों का उल्लेख किया है। इसी के साथ शुक्लजी ने इस बात पर भी जोर दिया है कि बुरी संगति पाँव में बँधी चक्की की तरह होती है जो व्यक्ति को वैचारिक भ्रष्टता तथा पतन की ओर धकेलती है।

**** ****

जब कोई युवा पुरुष अपने घर से बाहर निकलकर बाहरी संसार में अपनी स्थिति जमाता है, तब पहली कठिनता उसे मित्र चुनने में पड़ती है। यदि उसकी स्थिति बिल्कुल एकांत और निराली नहीं रहती तो उसकी जान–पहचान के लोग धड़ाधड़ बढ़ते जाते हैं और थोड़े ही दिनों में कुछ लोगों से उसका हेल–मेल हो जाता है। यही हेल–मेल बढ़ते–बढ़ते मित्रता के रूप में परिणत हो जाता है। मित्रों के चुनाव की उपयुक्तता पर उसके जीवन की सफलता निर्भर हो जाती है, क्योंकि संगति का गुप्त प्रभाव हमारे आचरण पर बड़ा भारी पड़ता है। हम लोग ऐसे समय में समाज में प्रवेश करके अपना कार्य आरंभ करते हैं, जब कि हमारा चित्त कोमल और हर तरह का संस्कार ग्रहण करने योग्य रहता है। हमारे भाव

अपरिमार्जित और हमारी प्रवृत्ति अपरिपक्व रहती है। हम लोग कच्ची मिट्टी की मूर्ति के समान रहते हैं, जिसे जो जिस रूप में चाहे, उस रूप में ढाले– चाहे राक्षस बनाए, चाहे देवता। ऐसे लोगों का साथ करना हमारे लिए बुरा है, जो हमसे अधिक दृढ़ संकल्प के हैं, क्योंकि हमें उनकी हर बात बिना विरोध के मान लेनी पड़ती है। पर ऐसे लोगों का साथ करना और भी बुरा है, जो हमारी ही बात को ऊपर रखते हैं, क्योंकि ऐसी दशा में न तो हमारे ऊपर कोई नियंत्रण रहता है और न हमारे लिए कोई सहारा रहता है। दोनों अवस्थाओं में जिस बात का भय रहता है, उसका पता युवकों को प्रायः बहुत कम रहता है। यदि विवेक से काम लिया जाए तो यह भय नहीं रहता, पर युवा पुरुष प्रायः विवेक से कम काम लेते हैं। कैसे आश्चर्य की बात है कि लोग एक घोड़ा लेते हैं तो उसके सौ गुण–दोष को परख कर लेते हैं, पर किसी को मित्र बनाने में उसके पूर्व आचरण और स्वभाव आदि का कुछ भी विचार और अनुसंधान नहीं करते। वे उसमें सब बातें अच्छी–ही–अच्छी मानकर अपना पूरा विश्वास जमा देते हैं। हँसमुख चेहरा, बातचीत का ढंग, थोड़ी चतुराई या साहस– ये ही दो–चार बात किसी में देखकर लोग चटपट उसे अपना बना लेते हैं। हम लोग यह नहीं सोचते कि मैत्री का उद्देश्य क्या है? क्या जीवन के व्यवहार में उसका कुछ मूल्य भी है। यह बात हमें नहीं सूझती कि यह ऐसा साधन है, जिससे आत्मशिक्षा का कार्य बहुत सुगम हो जाता है। एक प्राचीन विद्वान का वचन है, ''विश्वासपात्र मित्र से बड़ी भारी रक्षा रहती है। जिसे ऐसा मित्र मिल जाए उसे समझना चाहिए कि खजाना मिल गया।'' विश्वासपात्र मित्र जीवन की एक औषध है। हमें अपने मित्रों से यह आशा रखनी चाहिए कि वे उत्तम संकल्पों से हमें दृढ़ करेंगे, दोषों और त्रुटियों से हमें बचायेंगे, हमारे सत्य, पवित्रता और मर्यादा के प्रेम को पुष्ट करेंगे, जब हम कुमार्ग पर पैर रखेंगे, तब वे हमें सचेत करेंगे, जब हम हतोत्साहित होंगे, तब हमें उत्साहित करेंगे। सारांश यह है कि हमें उत्तमतापूर्वक जीवन–निर्वाह करने में हर तरह से सहायता देंगे। सच्ची मित्रता में उत्तम वैद्य की–सी निपुणता और परख हेाती है, अच्छी–से–अच्छी माता का–सा धैर्य और कोमलता होती है। ऐसी ही मित्रता करने का प्रयत्न प्रत्येक व्यक्ति को करना चाहिए।

छात्रावस्था में मित्रता की धुन सवार रहती है। मित्रता हृदय से उमड़ी पड़ती है। पीछे के जो स्नेह–बंधन होते हैं, उनमें न तो उतनी उमंग रहती है, न उतनी खिन्नता। बाल–मैत्री में जो मग्न करने वाला आनंद होता है, वह और कहाँ? कैसी मधुरता और कैसी अनुरक्ति होती है, कैसा अपार विश्वास होता है? हृदय से कैसे–कैसे उद्‌गार निकलते हैं? वर्तमान कैसा आनंदमय दिखाई पड़ता है और भविष्य के संबंध में कैसी लुभाने वाली कल्पनाएँ मन में रहती हैं। कितनी जल्दी बातें लगती हैं और कितनी जल्दी मानना होता है।

''सहपाठी की मित्रता'' इस उक्ति में हृदय के कितने भारी उथल–पुथल का भाव भरा हुआ है। किन्तु जिस प्रकार युवा पुरुष की मित्रता स्कूल के बालक की मित्रता से दृढ़, शांत और गंभीर होती है, उसी प्रकार हमारी युवावस्था के मित्र बाल्यावस्था के मित्रों से कई बातों में भिन्न होते हैं। मैं समझता हूँ कि मित्र चाहते हुए बहुत–से लोग मित्र के आदर्श की कल्पना मन में करते होंगे। पर इस कल्पित आदर्श से तो हमारा काम जीवन के झंझटों में चलता नहीं। सुन्दर प्रतिभा, मनभावनी चाल और स्वच्छंद प्रकृति, ये ही दो–चार बातें देखकर मित्रता की जाती है, पर जीवन–संग्राम में साथ देने वाले मित्रों में इनसे कुछ अधिक बातें चाहिए। मित्र केवल उसे नहीं कहते, जिसके गुणों की तो हम प्रशंसा करें, पर जिससे हम स्नेह न कर सकें, जिससे अपने छोटे–छोटे काम ही हम निकालते जाएँ, पर भीतर–ही–भीतर घृणा करते रहें। मित्र सच्चे पथ–प्रदर्शक के समान होना चाहिए, जिस पर हम पूरा विश्वास कर सकें। मित्र भाई के समान होना चाहिए, जिसे हम अपना प्रीति–पात्र बना सकें। हमारे और हमारे मित्र के बीच सच्ची

सहानुभूति होनी चाहिए। ऐसी सहानुभूति जिससे एक के हानि–लाभ को दूसरा अपना हानि–लाभ समझे।

मित्र का कर्त्तव्य इस प्रकार बताया गया है, ''उच्च और महान कार्यों में इस प्रकार सहायता देना, मन बढ़ाना और साहस दिलाना कि तुम अपनी–अपनी सामर्थ्य से बाहर काम कर जाओ।'' यह कर्तव्य उसी से पूरा होगा, जो दृढ़ चित्त और सत्य–संकल्प का हो। इससे हमें ऐसे ही मित्रों की खोज में रहना चाहिए जिनमें हमसे अधिक आत्मबल हो। हमें उनका पल्ला उसी तरह पकड़ना चाहिए, जिस तरह सुग्रीव ने राम का पल्ला पकड़ा था। मित्र हों तो प्रतिष्ठित और शुद्ध हृदय के हों, मृदुल और पुरुषार्थी हों, शिष्ट और सत्यनिष्ठ हों, जिससे हम अपने को उनके भरोसे पर छोड़ सकें और यह विश्वास कर सकें कि उनसे किसी प्रकार का धोखा न होगा।

जो बात ऊपर मित्रों के संबंध में कही गयी है, वही जान–पहचानवालों के संबंध में भी ठीक है। जान–पहचान के लोग ऐसे हों, जिनसे हम कुछ लाभ उठा सकते हों, जो हमारे जीवन को उत्तम और आनंदमय बनाने में कुछ सहायता दे सकते हों, यद्यपि उतनी नहीं जितनी गहरे मित्र दे सकते हैं। मनुष्य का जीवन थोड़ा है, उसमें खाने के लिए समय नहीं। यदि क,ख और ग हमारे लिए कुछ नहीं कर सकते हैं, न कोई बुद्धिमानी या विनोद की बातचीत कर सकते हैं, न कोई अच्छी बात बतला सकते हैं, न सहानुभूति द्वारा हमें ढ़ाढ़स बंधा सकते हैं, न हमारे आनंद में सम्मिलित हो सकते हैं, न हमें कर्त्तव्य का ध्यान दिला सकते हैं, तो ईश्वर हमें उनसे दूर ही रखे।

आजकल जान–पहचान बढ़ाना कोई बड़ी बात नहीं है। कोई भी युवा पुरुष ऐसे अनेक युवा पुरुषों को पा सकता है, जो उसके साथ थियेटर देखने जाएँगे, नाचरंग में जाएँगे, सैर–सपाटे में जाएँगे, भोजन का निमंत्रण स्वीकार करेंगे। यदि ऐसे जान–पहचान के लोगों से कुछ हानि न होगी, तो लाभ भी न होगा। पर यदि हानि होगी तो बड़ी भारी होगी।

कुसंग का ज्वर सबसे भयानक होता है। यह केवल नीति और सद्‌वृत्ति का ही नाश नहीं करता, बल्कि बुद्धि को भी क्षय करता है। किसी युवा पुरुष की संगति यदि बुरी होगी तो वह उसके पैरों में बँधी चक्की के समान होगी, जो उसे दिन–रात अवनति के गड्‌ढे में गिराती जाएगी और यदि अच्छी होगी तो सहारा देने वाली बाहु के समान होगी, जो उसे निरंतर उन्नति की ओर उठाती जाएगी।

इंग्लैण्ड के एक विद्वान को युवावस्था में राज–दरबारियों में जगह नहीं मिली। इस पर जिंदगी भर वह अपने भाग्य को सराहता रहा। बहुत–से लोग तो इसे अपना बड़ा भारी दुर्भाग्य समझते, पर वह अच्छी तरह जानता था कि वहाँ वह बुरे लोगों की संगति में पड़ता जो उसकी आध्यात्मिक उन्नति में बाधक होते। बहुत–से लोग ऐसे होते हैं, जिनके घड़ी भर के साथ से भी बुद्धि भ्रष्ट हो जाती है, क्योंकि उनके ही बीच में ऐसी–ऐसी बातें कही जाती हैं जो कानों में न पड़नी चाहिए, चित्त पर ऐसे प्रभाव पड़ते हैं, जिनसे उसकी पवित्रता का नाश होता है। बुराई अटल भाव धारण करके बैठती है। बुरी बातें हमारी धारणा में बहुत दिनों तक टिकती हैं। इस बात को प्रायः सभी लोग जानते हैं कि भद्‌दे व फूहड़ गीत जितनी जल्दी ध्यान पर चढ़ते हैं, उतनी जल्दी कोई गंभीर या अच्छी बात नहीं। एक बार एक मित्र ने मुझसे कहा कि उसने लड़कपन में कहीं से बुरी कहावत सुनी थी, जिसका ध्यान वह लाख चेष्टा करता है कि न आए, पर बार–बार आता है। जिन भावनाओं को हम दूर रखना चाहते हैं, जिन बातों को हम याद करना नहीं चाहते, वे बार–बार हृदय में उठती हैं और बेंधती हैं। अतः तुम पूरी चौकसी रखो, ऐसे लोगों को साथी न बनाओ जो अश्लील, अपवित्र और फूहड़ बातों से तुम्हें हँसाना चाहें। सावधान रहो। ऐसा न हो कि पहले–पहल तुम इसे एक बहुत सामान्य बात समझो और सोचो कि एक बार ऐसा हुआ, फिर ऐसा न होगा, अथवा तुम्हारे चरित्रबल का ऐसा प्रभाव पड़ेगा कि ऐसी बातें बकने वाले आगे चलकर

आप सुधर जाएँगे। नहीं, ऐसा नहीं होगा। जब एक बार मनुष्य अपना पैर कीचड़ में डाल देता है, तब फिर यह नहीं देखता कि वह कहाँ और कैसी जगह पैर रखता है। धीरे–धीरे उन बुरी बातों में अभ्यस्त होते–होते तुम्हारी घृणा कम हो जाएगी। पीछे तुम्हें उनसे चिढ़ न मालूम होगी, क्योंकि तुम यह सोचने लगोगे कि चिढ़ने की बात ही क्या है। तुम्हारा विवेक कुंठित हो जाएगा और तुम्हें भले–बुरे की पहचान न रह जाएगी। अंत में होते–होते तुम भी बुराई के भक्त बन जाओगे। अतः हृदय को उज्ज्वल और निष्कलंक रखने का सबसे अच्छा उपाय यही है कि बुरी संगति की छूत से बचो। एक पुरानी कहावत है–

''काजल की कोठरी में कैसो ही सयानो जाय।
एक लीक काजल की लागि है पै लागि है।

शब्दार्थ–

परिणत– बदला हुआ;
अपरिमार्जित– जो साफ सुथरा न हो, अस्वच्छ;
अपरिपक्व– जो पका न हो, अविकसित;
विवेक– भले बुरे की पहचान करने की शक्ति;
हतोत्साहित–जिसमें उत्साह न रहा हो;
पथ–प्रदर्शक– मार्ग बताने वाला;
पुरूषार्थी– उद्योगशील, परिश्रमी;
लीक– रेखा, निशान;
आध्यात्मिक– आत्मा की उन्नति से सम्बन्धित।
स्वच्छंद प्रकृति– मनमाना काम करने का स्वभाव
उपयुक्तता– अनुकूलता, औचित्य;
संस्कार–परिष्कार, शुद्धि;
नियंत्रण– प्रतिबंध, रोक;
अनुसंधान– खोज;
खिन्नता– उदासीनता;
अनुरक्ति– अनुराग,
सयानो– चतुर, समझदार;
औषध–दवाई,
पल्ला पकड़ना– सहारा लेना,
निष्कलंक– बेदाग, साफ सुथरा

वस्तुनिष्ठ प्रश्न–

1. जब कोई युवा घर से निकलकर बाहरी संसार में आता है, तो उसे पहली कठिनाई होती है–
   (क) रहने की (ख) भोजन की
   (ग) काम धन्धे की (घ) मित्र चुनने की ( )
2. किसी को मित्र बनाने से पूर्व हमें विचार और अनुसंधान करना चाहिए–
   (क) उसकी बुद्धि का (ख) उसकी दौलत का
   (ग) उसके धैर्य का (घ) उसके आचरण और स्वभाव का ( )
3. मित्रता की धुन सवार रहती है–
   (क) बाल्यावस्था में (ख) युवावस्था में
   (ग) प्रौढ़ावस्था में (घ) छात्रावस्था में ( )
4. कुसंग के ज्वर के कारण क्षय होता है–
   (क) समय का (ख) श्रम का
   (ग) साहस का (घ) नीति सद्वृत्ति एवं बुद्धि का ( )

अतिलघूत्तरात्मक प्रश्न–

1. लोगों से हेलमेल का सिलसिला किसमें बदल जाता है?
2. विश्वास पात्र मित्र हमारी सहायता कैसे करेंगे?
3. युवा पुरुष की मित्रता कैसी होती है?
4. किसी युवा पुरुष की बुरी संगति को लेखक ने किसके समान बताया है?

लघूत्तरात्मक प्रश्न–

1. मित्रों के चुनाव की उपयुक्तता का जीवन पर क्या प्रभाव पड़ता है?
2. जो हमारी बात को ऊपर रखते हैं, उनका साथ हमारे लिये ज्यादा बुरा है। कैसे?
3. प्राचीन विद्वान के मित्रता को लेकर क्या विचार है? लिखिए।
4. मित्र का कर्त्तव्य क्या है?

निबंधात्मक प्रश्न–

1. मित्र बनाते समय मैत्री का उद्देश्य क्या होना चाहिए। विस्तार से लिखिए।
2. विश्वास पात्र मित्र को खजाना, औषध और माता के समान क्यों माना है?
3. अच्छे मित्र की क्या–क्या विशेषताएँ बताई गई हैं? पठित पाठ के आधार पर लिखिए।
4. इंग्लैण्ड के विद्वान को राज–दरबारियों में स्थान न मिलने पर उसकी प्रतिक्रिया कैसी रही?
5. इतिहास में वर्णित किसी मित्र का ऐसा प्रसंग लिखिए जो मित्र के जीवन में सकारात्मक सोच या परिवर्तन लाया हो।
6. अगर आप मित्र बनाते हैं तो मित्र में किन बातों का ध्यान रखेंगे तथा आपके मित्र के प्रति क्या–क्या कर्त्तव्य होंगे? अपने विचार लिखिए।

व्याख्यात्मक प्रश्न–

1. दोनों अवस्थाओं ..... अनुसंधान नहीं करते।
2. सहपाठी की मित्रता ..... चलता नहीं।
3. जान–पहचान के ऐसे ..... उनसे दूर ही रखे।
4. जब एक बार ..... छूत से बचो।

*****

महाकवि जयशंकर प्रसाद

–शिवपूजन सहाय

लेखक–परिचय

शिवपूजन सहाय एक कर्मठ पत्रकार, साहित्यसेवी और राष्ट्रभाषा के अनन्य उपासक थे। उनके लेखन का आरम्भ ललित गद्य लेखन से हुआ, जिसमें स्वाभाविकता और सहजता के साथ ठेठ देहाती बोलचाल की भाषा का तानाबाना है। उन्होंने कहानियाँ, निबन्ध आदि विधाओं में लिखा तथा 'मतवाला' जैसे पत्र का सम्पादन किया। इनका 'वे दिन वे लोग' संस्मरणात्मक रेखाचित्र है, लेकिन व्यंग्य–विनोद से पुष्ट मुहावरेदार भाषा में लिखित, चित्रोपमता के गुणों से परिपूरित है।

पाठ–परिचय

शिवपूजन सहाय ने जयशंकर प्रसाद को बहुत नजदीक से देखा था और इस रेखाचित्र में सहाय जी ने प्रसाद के व्यक्तित्व के अछूते प्रसंगों को रूपायित किया है। उनकी दृष्टि में प्रसाद जी महान साहित्यकार के अतिरिक्त विलक्षण प्रतिभा के धनी थे। इस रेखाचित्र में उनकी विलक्षणता को विस्तृत रूप दिया है।

**** ****

सन् 1912 में मैट्रिक पास करते ही मैं मुगलसराय चला गया। वहाँ मेरी दूसरी शादी के बड़े साले रेलवे–गार्ड थे। उनके एक मित्र पंडित बदरी द्विवेदी राजघाट (काशी) स्टेशन पर टिकट–चेकर थे, जिनके बड़े भाई पंडित शिवप्रसाद द्विवेदी बनारस की दीवानी अदालत में मुनसरिम थे। इन्हीं मुनसरिम साहब की कोशिश–सिफारिश से मैं उस कचहरी में हिन्दी नकलनवीस नियुक्त हुआ। उस समय वहाँ कोई हिन्दी लिखने वाला क्लर्क नहीं था।

नियुक्ति से पहले मेरी योग्यता–परीक्षा हुई। बाबू गौरीशंकर प्रसाद वकील ने मेरी जाँच की। मेरी लिखावट उनको शुद्ध और सुन्दर जँची। मैंने इन्ट्रेंस क्लास (सन् 1909) तक उर्दू–फारसी पढ़ी थी। सन् 1910 में इण्ट्रेंस ही मैट्रिक हो गया। तब मैं एकाएक संस्कृत हिन्दी पढ़ने लगा। इसलिए उर्दू भी फारसी लिपि में खुशखत ही लिखता था। खुशखत होने के कारण मैं उक्त वकील साहब का तो स्नेहभाजन हुआ ही, ऐडिशनल मुंसिफ बाबू रघुवरदयाल का भी कृपापात्र हुआ। मुंसिफ साहब आगरा–निवासी थे। उनके दफ्तर में एक सज्जन श्री राधाकृष्णजी थे। वह गोवर्धनसराय मुहल्ले के रहने वाले थे।

गोवर्धनसराय में ही प्रसादजी का घर है। वही सज्जन प्रेरक बने। हिन्दी का प्रेमी तो मैं था ही;

स्कूल में पढ़ते समय से ही आरा की नागरी–प्रचारिणी–सभा में प्रायः जाया करता। अदालत की नौकरी से छुट्टी मिलने पर काशी–नागरी–प्रचारिणी सभा में भी जाने लगा। अखबार पढ़ने का शौक खूब था। वकील साहब भी 'सभा' के कोई पदाधिकारी थे। वह मुझे नागराक्षर में लिखने के लिए कुछ काम दिया करते थे। उसके लिए पैसे भी दिलवाते। दफ्तर में भी रोज की बाहरी आमदनी से कुछ हिस्सा मिलता ही था। उन दिनों कचहरी (अरदली–बाजार) से कम्पनी बाग (ना.प्र.सभा) तक या बेनिया–बाग (गोवर्धनसराय) तक की सवारी एक–डेढ़ आना एक्का–भाड़ा लगता था। मैं दोनों जगहों का चक्कर काटा करता। जान–पहचान तो किसी से थी नहीं। दूर से ही बाबू श्यामसुन्दरदास को 'सभा' में देख लेता और कभी प्रसादजी को भी, उनके घर जाकर अपना परिचय मैं कैसे देता? संकोच के मारे साहस न होता था।

मैं रहता था खजुरी मुहल्ले में–कचहरी से थोड़ी ही दूर– उपर्युक्त मुनसरिम साहब के घर पर। मेरे बड़े साले ने व्यवस्था करा दी थी। वहाँ पंडित अम्बिकाप्रसाद वैद्य भी रहते थे। वह मिर्जापुर के निवासी थे। वह प्रायः भारतेन्दु सखा प्रेमघनजी की चर्चा किया करते थे। वह साहित्यिक न होने पर भी साहित्यानुरागी होने के कारण प्रसादजी को भी जानते थे। मुनसरिम साहब विश्वविख्यात ज्योतिषाचार्य पंडित सुधाकर द्विवेदी के गोतिया दामाद थे। इसलिए वैद्यजी कभी–कभी ज्योतिषीजी के घर से हिन्दी पत्र–पत्रिकाएँ लाया करते थे। उन्हें मैं रातों–रात पढ़ डालता था। 'सभा' के वाचनालय में थोडी ही देर ठहरने का समय मिलता था; क्योंकि बासा बहुत दूर था, अतः पढ़ने की भूख नहीं मिटती थी।

मैं आरा की नागरी–प्रचारिणी–सभा में ही 'इन्दु' देख चुका था। सम्भवतः वह सन् 1910 में ही निकला था। उन दिनों उसकी बड़ी प्रसिद्धि थी। काशी में रहते समय 'इन्दु–कार्यालय' देखने की बड़ी उत्कण्ठा हुई। 'सभा' के वाचनालय में एक पाठक से परिचय हुआ। उनका नाम अब याद नहीं। वही पथ–प्रदर्शक बने। उस समय मन में विचित्र कुतूहल था। दर्शनोत्कण्ठा के सिवा कोई कामना न थी। पूर्वोक्त श्री राधाकृष्ण की प्रेरणा से 'प्रसादजी' का घर देख चुका था। किसी दिन 'सभा' की ओर न जाकर प्रसादजी के घर की ही परिक्रमा कर आता था। उस समय पंडित रूपनारायण पाण्डेयजी 'प्रसादजी' के यहाँ रहते थे। वह भारत–धर्म–महामण्डल की मासिक–पत्रिका 'निगमागम चन्द्रिका' का सम्पादन करते थे। उनको भी पहले–पहल वहीं देखा।

'प्रसादजी' महान साहित्यकार के अतिरिक्त और भी बहुत–कुछ थे। उनकी स्मृति–शक्ति विलक्षण थी। उनमें स्वजातीय गुण भी पर्याप्त मात्रा में था। वह अनेक कलाओं में मर्मज्ञ थे। काशी की विशेषताओं के भी विशेषज्ञ थे। विभिन्न व्यवसायों की पारिभाषिक शब्दावली का भण्डार उनके पास भरपूर था। वैदिक वाङ्मय और प्राचीन इतिहास में उनकी गहरी पैठ थी। संस्कृत–साहित्य के प्रमुख अंगों का अध्ययन–मनन करने में तो वह निरन्तर तत्पर रहते ही थे, कई भारतीय शास्त्रों में भी उनकी बड़ी गहन गति थी। अपने पैतृक व्यापार में वह पूरे दक्ष थे। विद्याव्यसनी ऐसे थे कि जब सारा संसार निद्रा–निमग्न हो जाता था तब उनको स्वाध्याय में तन्मय होने का अवकाश मिलता था।

बनारस चौक की कोतवाली के पीछे मस्जिद के सामने नरियरी बाजार में उनकी लगभग सवा सौ वर्ष की पुश्तैनी दुकान जर्दा–सुर्ती की थी। उसके सामने के तख्ते पर सफेदा बिछवा कर वह प्रायः नित्य संध्योपरान्त रात्रि में बैठते थे। उसी पर एक कोने में पानवाला भी अपनी चँगेली लिए बैठता था। उसके बीड़े और दुकान के जाफरानी जर्दे का दौर लगभग दस–ग्यारह बजे रात तक चलता रहता था। हिन्दी–साहित्य के बड़े–बड़े धुरन्धर महारथी वहीं आकर उनसे काव्य–शास्त्र–विनोदेन समय–यापन करते थे। हिन्दी–संसार के सुप्रसिद्ध कलाविद् रायकृष्णदासजी, श्री प्रेमचन्द, महाकवि रत्नाकर, प्राध्यापक लाला

भगवानदीन, आचार्य रामचन्द्र शुक्ल आदि महानुभाव वहाँ प्रायः आसन ग्रहण करके साहित्य की शास्त्रीय समस्याओं पर विचार–विमर्श और भाव–विनिमय करते थे। रायसाहब प्राचीन भारतीय शिल्पकला और मूर्तिकला पर, लाला भगवानदीन शब्दों की व्युत्पत्ति और निरुक्ति पर, रत्नाकर जी ब्रज भाषा–साहित्य की बारीकियों पर, आचार्य शुक्ल जी संस्कृत–साहित्य की विविध प्रवृत्तियों पर तथा प्रेमचन्द जी कथा–साहित्य के मनोवैज्ञानिक पक्ष पर जब बातें करने लगते थे तब 'प्रसाद जी' की सरस्वती का मुखर होना देखकर चकित रह जाना पड़ता था।

वैदिक ऋचाएँ और उपनिषदों के लच्छेदार वाक्य तो उन्हें कण्ठस्थ थे ही, संस्कृत–महाकवियों ने किस शब्द का कहाँ किस अर्थ में कैसा चमत्कारपूर्ण प्रयोग किया है, इसको भी वह सोदाहरण उपस्थित करते चलते थे। शालिहोत्र और आयुर्वेद–शास्त्रों के महत्त्वपूर्ण प्रकरणों पर उनके प्रवचन सुनने से उनके विस्तृत ज्ञान पर आश्चर्य होता था। हाथी, घोड़ा, गाय आदि के लक्षणों की परख और उनके स्वामियों पर उनके शुभाशुभ लक्षणों के अनिवार्य प्रभाव का वर्णन उनसे सुनने पर एक अत्यन्त रोचक और विस्मयकारी प्रसंग उपस्थित हो जाता था। इसी प्रकार हीरा, मोती, मूँगा आदि रत्नों के गुण–दोषों के प्रभाव का वर्णन भी शास्त्रीय प्रमाणों के साथ करते थे। एतद्विषयक ग्रन्थों के मौखिक उद्धरण सुनकर उनकी स्मरण–शक्ति की प्रखरता पर बड़ा कुतूहल होता था।

'प्रसादजी' हलवाई वैश्य थे। अपने हाथों ही स्वादिष्ट भोजन बनाते थे। भोज आदि में यदि एक सौ अतिथियों को भोजन कराना है तो बादाम और पिस्ते की बर्फी बनवाने में कितना मेवा और मावा लगेगा, कितनी चीनी और केसर–इलायची पड़ेगी, इसका चिट्ठा भी तैयार करा देते थे और जबानी ही बोलकर लिखवाते थे। इसी तरह और–मिठाइयों के सामान की मिकदार बतला देते थे। भोटानी सौदागर जब शिलाजीत, पहाड़ी शहद, कस्तूरी आदि बेचने आते थे तब उनकी चीजों की परीक्षा करने में अद्‌भुत कौशल का परिचय देते थे। भंग–बूटी तो स्वयं बहुत अच्छी बनाते और मित्रों को पिलाते थे। अपने घरेलू व्यवसाय के लिए जर्दा, किमाम, इत्र आदि भी अपनी देख–रेख में बनवाते थे। अधिकतर देशी रजवाड़े और जमींदार रईस ही उनके बँधे ग्राहक थे। किमाम और इत्र के तैयार होने पर छोटी–सी शीशी में अन्तरंगी मित्रों को प्रेमोपहार भी दिया करते थे। जाड़े में जो मुश्क अम्बर (कस्तूरी का इत्र) बनाते थे वह लिहाफ में लगने पर पूस–माघ के जाड़े में भी पसीना पैदा करके अपना कमाल दिखाता था। उत्तम श्रेणी का किमाम भी वैसा ही जौहर दिखाता था। बीड़े पर सींक से उसकी लकीर खींच देने से जाड़े की रात में भी ललाट पर पसीना आ जाता था और गरम पोशाक उतार देनी पड़ती थी। काठौषधियों और जड़ी–बूटियों के गुणों को बखानते समय वैद्यक ग्रन्थों के श्लोक कहने लगते थे तो वैद्यराज ही प्रतीत होते थे।

बनारस के पुराने रईसों, पंडितों, नर्तकों, लावनीबाजों, गुण्डों, गायिकाओं और फक्कड़ों की बहुत–सी अद्‌भुत कहानियाँ सुनाया करते थे, जो मनोरंजक होने के साथ–साथ शिक्षाप्रद भी होती थीं और जिनसे पता चलता था कि उस अतीत युग के गुणी और कलावन्त कितने उदार और निष्ठावान होते थे। रईसों की गरीबनिवाजी, पंडितों का स्वाभिमान, नर्तकों की नृत्य–निपुणता, लावनीबाजों की रचना–चातुरी, गुण्डों का निर्बलों की सहायता में सहयोग, गायिकाओं का मर्यादा–पालन और फक्कड़ों की गरीबपरवरी उनसे सुनकर उस युग का दृश्य मनश्चक्षुओं के सामने आ जाता था। मासिक 'हंस' का जो 'काशी–अंक' निकला था उसमें उनके लिखवाये हुए कई ऐसे लेख छपे थे। उनके अभिन्न मित्रों में भारत कला–भवन के जन्मदाता श्री रायकृष्णदासजी के पास भी पुराने संस्मरणों का खजाना है, परन्तु रायसाहब से लेकर उसे साहित्य–भण्डार से संचित करने वाला कोई नहीं है।

'प्रसादजी' अपनी जवानी में कुश्ती भी लड़ चुके थे। उनका कसरती शरीर बड़ा गठीला था।

उन्होंने मल्ल–विद्या का भी अध्ययन किया था। पहलवानों के अजीब किस्से तो सुनाते ही थे, दाव–पेंच के बहुतेरे नाम भी उन्हें याद थे। कई व्यापार–क्षेत्रों के दलालों की बोली में कैसे–कैसे विचित्र अर्थबोधक शब्द हैं और उनका रूप कितनी सावधानी से गढ़ा गया है, यह भी वह बतलाते थे। सुनारों और मल्लाहों की बोली के रहस्य भी वह जानते थे। खेद है कि उस समय उनकी बातचीत का महत्त्व ध्यान में नहीं आया। विशिष्ट व्यक्तियों के जीवन की दिनचर्या लिखते चलने का काम साहित्य की समृद्धि के लिए किया जाना चाहिए। यदि 'प्रसादजी' की बातें उस समय आँक ली गयी होती तो आज वे साहित्य की अमूल्य सम्पत्ति समझी जातीं। किन्तु उनके जीवनकाल में ही उनका उत्कर्ष बहुतों को असह्य हो गया था। उनकी रचनाओं की कटु–से–कटु आलोचना होती रही, पर उन्होंने कभी उस पर ध्यान न दिया। वह स्वान्तः सुखाय लिखते थे, अर्थ या यश की कामना से नहीं।

इस निर्मम संसार ने जीते–जी न प्रेमचन्द को परखा, न 'प्रसादजी' को और न 'निराला' को ही। जब ये संसार से चले गये तब इनके गुणगान के साथ यह भी अनुभूत होने लगा कि साहित्य–क्षेत्र में ये अमोघ मेधा–शक्ति लेकर आये थे। 'प्रसादजी' की जो अवज्ञा और उपेक्षा हुई वह किसी से छिपी नहीं है। पर हिन्दी को 'प्रसादजी' कविता, कहानी, उपन्यास, नाटक, निबन्ध आदि के रूप में जो निधि दे गये उसका मूल्यांकन करके आज गौरव का अनुभव किया जा रहा है। जगत् की यही परम्परागत रीति जान पड़ती है कि वह युग की विभूति को उसके विलीन हो जाने के बाद ही पहचानता है।

'प्रसादजी' कभी किसी कवि–सम्मेलन में नहीं जाते थे। मित्र–गोष्ठी में सस्वर कविता–पाठ करते थे। गंगा में बजड़े पर मित्र मण्डली को बड़ी उमंग से गाकर अनेक कविताएँ सुनाते थे, पर सार्वजनिक सभाओं में कभी नहीं। गोरखपुर में अखिल भारतीय हिन्दी–साहित्य–सम्मेलन का अधिवेशन 'प्रताप' सम्पादक श्री गणेशशंकर विद्यार्थी के सभापतित्व में हुआ था। वहाँ के कवि–सम्मेलन की अध्यक्षता के लिए 'प्रसादजी' के पास तार आया। तार में सभापति विद्यार्थीजी और राजर्षि टण्डनजी के नाम अंकित थे। उसे पाते ही अन्यमनस्कता से उसको अलग रखकर बातें करने लगे। उनके परम स्नेहभाजन और हिन्दी के प्रसिद्ध कथाकार पंडित विनोदशंकर व्यास वहीं बैठे थे। व्यासजी ने उनसे बड़ा आग्रह किया कि स्वीकृति–सूचना भेजकर गोरखपुर अवश्य चलिए, हम लोग साथ चलेंगे। पर वह हँसकर बात टाल गये। किन्तु काशी–नागरी–प्रचारिणी सभा के कोशोत्सव–स्मारक के अवसर पर जीवन में केवल एक ही बार उनको सार्वजनिक समारोह में कविता–गान करना पड़ा था। हिन्दी शब्द–सागर के सम्पादकों का सम्मान करने का जो आयोजन हुआ था और उसके साथ जो कवि–सम्मेलन हुआ उसके अध्यक्ष थे प्रसादजी के साहित्यगुरु महामहोपाध्याय देवीप्रसाद शुक्ल कविचक्रवर्ती। आचार्य श्यामसुन्दरजी के आग्रह पर भी जब 'प्रसादजी' कविता–पाठ करने को तैयार न हुए तब उनके गुरु के अध्यक्ष–पद से आदेशानुसार उन्हें कविता–गान करना पड़ा। उनके ललित–माधुर्य कण्ठ–स्वर से सारी सभा मंत्र–मुग्ध हो रही। अपनी कविता गाते समय वह स्वयं भी भाव–विभोर हो जाते थे।

उस समय काशी में हिन्दी–साहित्य के धुरन्धर महारथियों का बड़ा अच्छा जमघट था। सबके साथ उनका सद्भावपूर्ण सम्बन्ध था। एक बार प्रेमचन्दजी ने अपने 'हंस' में उनके ऐतिहासिक नाटकों पर संपादकीय मत प्रकट करते हुए लिख दिया था कि 'प्रसादजी' प्राचीन इतिहास के गड़े मुर्दे उखाड़ा करते हैं। किन्तु जिस समय यह मत प्रकाशित हुआ उस समय भी प्रेमचन्दजी सदा की भांति 'प्रसादजी' के साथ बैठकर निर्विकार चित्त से साहित्यिक संलाप करते रहे। दोनों महारथियों में कभी किसी प्रकार का मनोमालिन्य अथवा वैमनस्य नहीं हुआ। उनकी तीव्र आलोचना करने वाले सज्जन भी उनके पास पहुँचकर यथोचित आदर–मान ही पाते थे। किसी के प्रति उनके मन में कोई राग–द्वेष न था। उनकी अभ्यर्थना

करने के लिए कई संस्थाओं से अनुरोध होते रह गये, पर वह सम्मानित होने के लिए कभी कहीं काशी के बाहर नहीं गये। एकान्त भाव से साहित्य–समाराधन में संलग्न रहकर ही सारा जीवन बिता दिया।

'प्रसादजी' छायावाद और रहस्यवाद के युग में उत्पन्न हुए थे। खड़ी बोली हिन्दी में ही कविता करते थे। किन्तु प्राचीन ब्रजभाषा–काव्य में भी मर्मज्ञ थे। पुरानी कविताएँ काफी कण्ठस्थ थीं। ब्रजभाषा–साहित्य के बड़े अनुरागी और प्रशंसक थे। काशी में होली के बाद 'बुढ़वा मंगल' का महोत्सव गंगा की मध्य धारा में हुआ करता था। चैत की चटकीली चाँदनी में प्रशस्त बजड़ों पर सजीले शामियानों में नृत्य–गान का दर्शनीय आयोजन होता था। उन सुसज्जित बजड़ों के चारों ओर दर्शकों और श्रोताओं की नौकाएँ रात–भर डटी रहती थीं। 'प्रसादजी' की नाव पर उनके साहित्यिक बन्धु भी संगीत का आनन्द लूटते थे। काशी की सुप्रसिद्ध गायिकाएँ सूर और तुलसी के विनय–पद जब गाने लगती थीं, 'प्रसादजी'–भाव–विह्वल हो उठते। एक दिन काशी–नरेश के बजड़े पर विद्याधरी ने जब सूर का एक पद (अब मैं नाच्यो बहुत गोपाल) गाया तब 'प्रसादजी' के सजल नेत्रों से अनवरत अश्रुधारा प्रवाहित हो चली।

उनके घर पर दरवाजे के सामने ही जो शिव–मन्दिर है उसमें फाल्गुनी महाशिवरात्रि को महोत्सव हुआ करता था। उनके परिवार की यह पुरानी परम्परा थी। उनमें अधिकतर साहित्यिक–सेवियों का ही समागम होता था। उस गान–वाद्य के समारोह में भी काशी की कोई सर्वश्रेष्ठ गायिका केवल शास्त्रीय संगीत सुनाने आती थी। नृत्य नहीं होता था, पर गेय पद शुद्ध साहित्यिक आनन्द देने वाले ही होते थे। बड़े शान्तभाव से और बड़ी शिष्टता के साथ वह उत्सव सम्पन्न होता था। इसी प्रकार अपने वंश की मर्यादा का निर्वाह वह प्रत्येक पर्व पर करते थे। श्रावणी पूर्णिमा (रक्षाबंधन) के दिन चाँदी और ताँबे के सब तरह के बड़े–छोटे सिक्कों की राशि अपने आगे लेकर बैठते थे। अधिकांश ब्राह्मणों की दक्षिणा बँधी–बँधायी थी, जिन्हें पूर्ववत् अपना अंश मिल जाता था। होली, दीवाली, दशहरा, सब त्योहारों में उनके परिवार की पुरानी प्रथा का पालन विधिवत् होता था। उनका घराना काशी में बहुत प्रतिष्ठित माना जाता रहा और उससे लाभान्वित होने वाले लोग उसे दरबार की संज्ञा देते थे। 'प्रसादजी' को देखते ही अनेक काशी–निवासी 'हर–हर महादेव' मात्र कहकर उन्हें करबद्ध प्रणाम करते थे। यह प्रतिष्ठा बनारस में केवल काशी–नरेश को ही प्राप्त है। किन्तु बड़े राग–रंग वाले धनी घराने में पैदा होकर भी अपने निष्कलंक चरित्र के प्रभाव से ही वह इस प्रतिष्ठा के आजीवन अधिकारी बने रहे।

शब्दार्थ–

मुनसरिम = मुन्शी,
खुशखत = सुलेख;
दर्शनोत्कण्ठा = दर्शन की इच्छा;
मिकदार= मात्रा;
किमाम= सुगन्धित द्रव्य;
लिहाफ= रजाई;
बजड़ा = एक प्रकार की नौका।
नकलनवीस = अदालत में नकल देने वाला;
ऐडिशनल = अतिरिक्त;
भोटानी सौदागर = भूटानी सौदागर;
शालिहोत्र=अश्व विद्या, शालिहोत्रि की विद्या
लावनी बाजों = लावनी गाने वाले;
बुढ़वा मंगल = एक लोक नाट्य,

वस्तुनिष्ठ प्रश्न–

1. प्रेमचंद जी की पत्रिका का नाम था–
   (क) हंस (ख) इन्दु
   (ग) निगमागम चन्द्रिका (घ) कोई नहीं ( )
2. किसका घराना काशी में बहुत प्रतिष्ठित माना जाता था–
   (क) शिवपूजन सहाय (ख) प्रसाद
   (ग) प्रेमचन्द (घ) निराला ( )

अतिलघूत्तरात्मक प्रश्न–

1. शिवपूजन सहाय जी की कचहरी में नियुक्ति किस रूप में हुई?
2. प्रसाद जी की पुश्तैनी दुकान किस की थी?
3. प्रसाद जी के लेखन कार्य का उद्देश्य क्या था?
4. प्रसादजी के साहित्य गुरु कौन थे?
5. प्रसादजी किस युग में उत्पन्न हुए थे?

लघूत्तरात्मक प्रश्न–

1. प्रसादजी की पुश्तैनी दुकान पर किन–'किन साहित्यकारों द्वारा किन–किन विषयों पर विचार विमर्श होता था? स्पष्ट कीजिए।
2. 'प्रसादजी की स्मरण शक्ति बड़ी विलक्षण थी।' उदाहरण सहित स्पष्ट कीजिए।
3. साहित्यकारों के जीवन की विडम्बना को अपने शब्दों में स्पष्ट कीजिए।
4. उनकी तीव्र आलोचना करने वाले सज्जन भी उनके पास पहुँचकर यथोचित आदर–मान ही पाते थे। उदाहरण द्वारा स्पष्ट कीजिए।

निबंधात्मक प्रश्न–

1. शिवपूजन सहाय के 'महाकवि जयशंकर प्रसाद' रेखाचित्र के आधार पर प्रसादजी के व्यक्तित्व की विशेषताएँ स्पष्ट कीजिए?
2. 'महाकवि जयशंकर प्रसाद' पाठ का सार अपने शब्दों में लिखिए?
3. शिवपूजन सहाय की दृष्टि में ''प्रसादजी महान साहित्यकार के अतिरिक्त और भी बहुत कुछ थे।'' स्पष्ट कीजिए?
4. प्रसादजी के परिवार में त्योहारों को किस प्रकार मनाया जाता था? स्पष्ट कीजिए। वर्तमान में त्योहार मनाने के तरीकों में क्या परिवर्तन आया है। स्पष्ट कीजिए।

व्याख्यात्मक प्रश्न–

1. वैदिक ऋचाएँ..... कुतूहल होता था।
2. इस निर्मम संसार ..... बाद ही पहचानता है।
3. एक बार प्रेमचन्द जी ..... बिता दिया।
4. काशी में ..... प्रवाहित हो चली।
5. श्रावणी पूर्णिमा ..... अधिकारी बने रहे।

*****

फिर से सोचने की आवश्यकता है

–हजारी प्रसाद द्विवेदी

लेखक–परिचय

प्रसिद्ध निबंधकार आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी का जन्म 1907 में बलिया जिले के ''दुबे का छपरा'' नामक गाँव में हुआ एवं मृत्यु 1979 में हुई। आचार्य द्विवेदी ने काशी विश्वविद्यालय में अध्ययन के बाद शान्ति निकेतन में लगभग बीस वर्ष तक कार्य किया। यहाँ रहते हुए उन पर रवीन्द्र नाथ टैगोर के मानवतावादी दर्शन का गहरा प्रभाव पड़ा। उन्होंने आलोचना और निबंध विधा को समृद्ध किया। उनके द्वारा लिखे गये चारों उपन्यास (बाणभट्ट की आत्मकथा, पुनर्नवा, अनामदास का पोथा, चारु चन्द्रलेख) अत्यंत श्रेष्ठ एवं चर्चित हैं। उनके द्वारा लिखित प्रमुख पुस्तकें हैं– हिन्दी साहित्य की भूमिका, कबीर, सूर साहित्य, अशोक के फूल, कल्पना, विचार और वितर्क, हिन्दी साहित्य का आदिकाल आदि। उनके निबंध मानव मन पर गहरा प्रभाव डालते हैं।

पाठ–परिचय

आचार्य द्विवेदी ने प्रस्तुत निबंध में स्वतंत्र देश में राष्ट्रभाषा के प्रति जो भाव हैं उस पर चिन्ता प्रकट की है। अधिकतर लोगों द्वारा बोली और समझी जाने वाली भाषा को भुलाकर अंग्रेजी की गुलामी करना वे अनुचित मानते हैं और देशवासियों को इस विषय पर फिर से सोचने के लिए प्रेरित करते हैं। आज विशेषकर युवा पीढ़ी की उपेक्षा झेल रही है–हमारी भाषा।

**** ****

आजकल मेरे मन में एक बड़ा सवाल उठा हुआ है। बहुत पहले मैं इसका जवाब पा चुका था, सन्तुष्ट भी था, लेकिन हाल में देश में अनेक ज्ञानी–गुणी लोगों के सम्पर्क में आने के बाद चित्त विचलित हो उठा। मैंने जो उत्तर पाया था, वह क्या सही था? यद्यपि भीतर से आवाज आती है कि उत्तर तुमने पाया था वही सही है और जो विचिकित्सा इस समय खड़ी है वह गलत है, तो भी मेरे चित्त में आज नये सिरे से उस प्रश्न का उत्तर पाने के लिए प्रयत्न शुरू हो गया है। सत्संगति की महिमा कम–से–कम इस देश में अज्ञात नहीं रह गई है और मैं तो व्याकुलता के साथ अनुभव कर रहा हूँ कि सत्संगति ने मेरे अन्तरतम को आलोड़ित कर रखा है। भीतर की आवाज केवल आदत का नतीजा है। इस खास ढंग से सोचते रहने वाला आदमी उसी ढंग की आवाज सुना करता है। जिन लोगों की वाणी पर विश्वास करके आज तक चलता रहा हूँ, वे ऐसा नहीं मानते। रवीन्द्रनाथ ने कहा कि तू लोगों की बात पर कान न दे, हजार–हजार आकर्षण से खिंचा–खिंचा भटकता न फिर। ऐसा हो कि तेरा हृदय जाने कि तेरे हृदय में

ही तेरा राजा बैठा है–

लोकेर कथा दिस ने काने,
फिरिस ने आज हजार टाने,
येन रे होर हृदय जाने, हृदय तोर आछेन राजा।

बैठा होगा, लेकिन आज दुनिया की बातों को अनसुनी करने की शक्ति नहीं रह गई है। हजार–हजार आकर्षण बुरी तरह खींच रहे हैं और हृदय–देश में स्थित राजा की आज्ञा के पालन में झिझक अनुभव हो रही है।

प्रश्न यह है कि काम निकाल लेना बुद्धिमानी है, या मान के लिए मर मिटना मनुष्यत्व की निशानी है? पहला मत उन लोगों का है जो समझदार माने जाते हैं, जो भावुक नहीं होते, जिनकी दृष्टि सीधे परिणाम तक पहुँची होती है। वे हाथ पर रखे हुए आँवले के फल के समान प्रत्येक वस्तु की उपयोगिता और अनुपयोगिता को स्पष्ट देख लेते हैं। उनकी दृष्टि में काम बड़ी चीज है, मान केवल भावुकता का नाम है। ऐसे समझदार लोग काम को बड़ा मानते हैं, मान उनकी दृष्टि में नगण्य है। पुराने काव्य की उतावली नायिका के समान वे कहते हैं कि–

मान घटे तें कहा घटि है,
जो पै प्रान पियारे के दर्शन पैये।

दूसरे मत में मानने वाले लोग सचमुच भावुक होते हैं। उनकी दृष्टि में मान का बड़ा महत्त्व है। वे मान के साथ दिए गए विष को पी लेते हैं और गर्वपूर्वक घोषणा करते हैं कि–

मान सहित विष खाइके शंभु भये जगदीश।
बिना मान अमृत पिए राहु कटायो सीस।।

ऐसे लोगों ने अनेक प्रकार के तत्त्व–दर्शन बना रखे हैं। केवल जीवन–धारण के लिए उपयोगी प्रयोजनों के पीछे दौड़ना पशु का धर्म है। मनुष्य प्रयोजन के पीछे दौड़ने के लिए नहीं बना है, प्रयोजनों से जो अतीत धर्म है, वही मनुष्यत्व है। शक्ति, प्रेम, दया, सहानुभूति आदि गुण, स्थूल प्रयोजनों की सिद्धि करें तो, और न करें, तो बड़े हैं और पालनीय हैं। आवश्यकता पड़ने पर मनुष्य को इन वास्तविक धर्मों की रक्षा के लिए अपने–आप को बलि चढ़ा देना चाहिए। मनुष्य इसलिए मनुष्य है कि उसमें मनुष्यत्व–धर्म है–

जलदानेन हि जलदः – न हि जलदो पुंजिता धूमः।

जलद वह है जो जल दे सके, पूंजित धूम को जलद नहीं कह सकते। पहली श्रेणी के लोग समझदार कहे जाते हैं, दूसरी श्रेणी के भावुक।

जो लोग समझदार हैं, उनकी बात सुनकर मन अचरज से अवाक् ही रहता है कि इस देश की राज्य–व्यवस्था यदि ठीक चलती है, दस पढ़े–लिखे आदमियों को अगर ठीक से अन्न मिल जाता है, तो अंग्रेजी को क्यों छोड़ा जाए? आखिर डेढ़ सौ वर्षों तक हम लोग अंग्रेजी के दावेदार रहे हैं। इतिहास को धो–पोंछ कर फेंक नहीं दिया जा सकता। सिर्फ इसलिए कि वह हमारे पुराने शासकों की भाषा थी, अंग्रेजी को विदेशी नहीं कहा जा सकता है! क्या यह तथ्य नहीं है कि इस देश के बीसियों बाप–बेटों का

पत्र–व्यवहार अंग्रेजी में होता है? बहुत से ऐसे बाप–बेटों और पति–पत्नियों की नामावली आसानी से गिना दी जा सकती है। क्या हमारे नेता–गण अपना काम इसी भाषा में नहीं चाहते थे? डेढ़ सौ वर्षों के निरन्तर अभ्यास के कारण समूचे देश में यह भाषा प्रतिष्ठित हुई है, क्यों इसका निरादर किया जाय? यह क्या भारतवर्ष का परम सौभाग्य नहीं है कि उसकी आधी फीसदी जनता इस संसार की सर्वश्रेष्ठ भाषा से परिचित है? इस महिमामयी भाषा की तुलना में देशी भाषाओं में क्या धरा है? सिर गिनने से देश का नाम नहीं चलता, दिमाग गिनना है। तुम कहते हो, देश की जनता सौ फीसदी देशी–भाषा जानती है। यह केवल सिर गिनना मात्र है। गिनती दिमाग की होनी चाहिए। देश की आधी फीसदी की भी आधी फीसदी दफ्तर की फाइलों पर नोट लिखने की कला में प्रवीण है और उस आधी फीसदी की आधी फीसदी देश–विदेश में लाज–हया छोड़कर अंग्रेजी बोल लेने की कला में पूर्ण दक्ष सिद्ध हो चुकी है, तो क्या हुआ? दिमाग की गणना होनी चाहिए! अंग्रेजी अब इस देश में विदेशी भाषा नहीं है। वह भी हमारी राष्ट्रीय भाषा है! अभी भी अंग्रेजों के बहुत से बच्चे इस भाषा को बोलते हैं।

और देशी भाषाओं में रखा ही क्या है! तुलसीदास की रामायण से या तुकाराम के अभंगों से देश का शासन नहीं चल सकता। भारतवर्ष में एक भी भाषा ऐसी नहीं है, जिसमें कोई समझदार न्यायाधीश फैसला लिख सके। वह फाँसी की सजा दे सकता है, लेकिन दण्डित व्यक्ति को उसी की भाषा में समझा नहीं सकता कि क्यों उसे फाँसी दी गई। यदि वह पूछे कि दयानिधान, मुझे यह तो बता दीजिए कि मुझे फाँसी क्यों दी गई, तो उत्तर यह है कि तुम मूर्ख लोगों की भाषा में इतनी शक्ति नहीं कि हमारे निर्णय को व्यक्त कर सकें। यदि जानना ही चाहते हो तेा हमारी ही जैसी अंग्रेजी जानने वाले किसी वकील को हजार–पाँच सौ रूपया देकर ठीक कर लो, जो समझा सके कि क्यों तुम्हें फाँसी दी गई। तुम्हें सिर्फ फाँसी पर झूल जाने का अधिकार है। क्यों और कैसे का निर्णय बड़े लोगों के बीच की बात है। देशी भाषाओं में फैसला नहीं लिखा जा सकता। जनता का शासन केवल बात की बात है। जनता की भाषा का नारा केवल वोट प्राप्त करने वालों के लटकों में से एक है। शासन की मशीन नारों पर नहीं चलती, फाइलों पर नोट लिखने की विद्या बड़ी मेहनत से सीखी जा सकती है। जनता की सुविधा की थोथी दलील पर परिवर्तन नहीं किया जा सकता।

ऊपर के वाक्यों को पढ़ने वाले व्यक्ति के मन में प्रतिक्रिया हो सकती है कि मैं व्यंग्य और विनोद की भाषा लिख रहा हूँ, परन्तु मैं सच्चाई के साथ कहता हूँ कि मैंने बुद्धिमान लोगों से जो बाते सुनी हैं, उनका यही अर्थ हो सकता है। मैंने पंडितों और प्रतिष्ठित व्यक्तियों के प्रति आजीवन श्रद्धा का भाव बनाए रखा है, मैंने ऐसे लोगों की प्रत्येक बात को आदर और श्रद्धा से सुनने का नियम बनाया है और इसीलिए आज मेरा चित्त बहुत चंचल है मैं व्याकुल भाव से सोचता हूँ कि आज से दस वर्ष पहले तक जिन दीवानों ने सर पर कफन बाँधकर देश की कोटि–कोटि जनता को शोषण और परमुखापेक्षिता से बचाने के लिए अचिन्तनीय यातनाएँ सही थी, उन्होंने क्या यही स्वप्न देखा था? आज खुल्लमखुल्ला कहा जाने लगा कि स्वतन्त्रता–प्राप्ति के नवीन आवेश में संविधान बनाने वाले देशभक्तों ने देश की भाषा–सम्बन्धी नीति को गलत ढंग से स्वीकार किया। अब नशा उतर गया है। पद–पद पर गोलियों के सामने सीना तान देने वाले दीवानों की संख्या घट गई है। इनको मूर्ख तो क्या कहा जाए, पर काम उन्होंने बुद्धिमानी का नहीं किया। स्वतंत्रता दिवस के अवसर पर जब बुद्धिमान लोग अपनी तरक्की का स्वप्न देखा करते थे, उस समय झंडा लेकर चिल्ला–चिल्लाकर अपनी सांस्कृतिक स्वतन्त्रता की घोषणा करने वाले 'अनपढ़' नौजवानों का जमाना लद चुका है, अब हमें धैर्य और विवेक के साथ विचार करना चाहिए। डेढ़ सौ वर्षों तक अनेक अपमान और तिरस्कार की छाया में सीखी हुई मालिकों की बोली को यों ही नहीं भुला देना चाहिए। वह

वस्तुतः हमारी राष्ट्रीय जबान हो गई हैं आज जो विदेशों में हमारी धाक है, वह इसी बोली के कारण है। यह गलत बात है कि गाँधी और नेहरू ने कोई बड़ी बात कही है, इसलिए दुनिया उनकी पूजा करती है। उनकी पूजा का प्रधान कारण अंग्रेजी बोली है। देखो देश में इस बोली की पढ़ाई का स्तर गिरता जा रहा है, ऐसा न हो कि गाढ़े पसीने की यह कमाई यों ही नष्ट हो जाए। इसे बचाओ, दरिद्र देशी भाषाओं के आक्रमण से कहीं यह मार न डाली जाए। सुनता हूँ और सोचता हूँ कि सचमुच ही क्या कोई अनर्थ होने जा रहा है? सचमुच ही जिन लोगों ने अपने प्राणों की आहुति दी थी, उनमें पागलपन ही पागलपन था, या कहीं होश–हवाश भी था? इतने बुद्धिमान लोगों की बात क्या यों ही टाल दी जाए? आखिर ये लोग अनुभवी हैं। बिना सोचे–समझे कुछ नहीं कहते। इनकी बातों में कुछ–न–कुछ सार तो अवश्य होगा।

लेकिन फिर मैं सोचता हूँ कि प्राण देने का साहस जिन्होंने किया था उनको इतनी आसानी से छोड़ा भी नहीं जा सकता। कितने लोग हैं जो किसी आदर्श के लिए कष्ट सहन कर सकते हैं? कितने लोग है जो उसी प्रकार उठकर अनीति और अत्याचार का विरोध कर सकते हैं? जिस प्रकार स्वतन्त्रता की रट लगाने वाले भावावेशी नौजवानों ने किया था? मनुष्य क्या केवल इसलिए पैदा हुआ है कि जो कुछ जैसा है, उसे चुपचाप स्वीकार कर लें? मेरा अन्तरतम ऐसा नहीं मानना चाहता। केवल अक्लमन्दी से सिर छिपा लेना ही बड़ी बात होती, तो मनुष्य कीड़े–मकोडों से अधिक न होता। मनुष्य इसलिए 'मनुष्य' है कि उसने सृष्टि की धारा को अपने पुरुषार्थ से अनुकूल दिशा में मोड़ा है। कई बार उस पर गलत ढंग की अक्लमन्दी का नशा छा जाता है। वह अपनी दुर्बलताओं को तत्त्वचिन्तक मनीषी की भाषा में महनीय बनाने का प्रयत्न करता है। अपनी आदतों को फलसफे का रूप देता है, परन्तु इससे गलतियाँ या दुर्बलताएँ बड़ी नहीं हो जाती। जो तर्क इस दृष्टि से दिये जाते हैं कि हमारी आदतें और लतें चारित्र्य का बाना धारण करके प्रकट हों, वे तर्काभास मात्र हैं। अन्तर्यामी सब समय तर्कों के द्वारा अपनी योजना नहीं प्रकट करते। भावावेग, तर्कों की अपेक्षा अधिक गहराई से निकलते हैं। वे अन्तरतम में बैठे हुए अज्ञात देवता के तर्जनी–संकेत पर चलते हैं। तथाकथित अक्लमन्दी और कई बार निष्क्रियता लत और आदत के इंगित का नामान्तर मात्र होती है।

कदाचित् आज यह सोचने की आवश्यकता आ पड़ी है कि हम अपनी दुर्बलताओं को महनीय बनाने का यत्न तो नहीं कर रहे हैं, अपनी निष्क्रियता को तत्त्ववाद का रूप तो नहीं दे रहे हैं, अपनी अक्षमताओं को गौरव देने के लिए तर्काभासों का सहारा तो नहीं ले रहे हैं? क्या करोड़ों की उपेक्षा करके कुछ थोड़े–से–लोगों की सुविधा को बहुत बड़ा लाभ माना जा सकता है? या सचमुच स्वभाषा की उपेक्षा से देश महान् बनेगा? हमें फिर से सोचना पड़ेगा।

शब्दार्थ–

विचिकित्सा–संदेह,
तत्त्वदर्शन–सार,
निष्क्रियता–काम न करना
परमुखापेक्षिता– दूसरे का मुँह देखना,
आलोड़ित–मंथन किया हुआ,
पुँजित–एकत्रित,
तत्त्वचिन्तक– दार्शनिक,
अचिन्तनीय–जिसका चिंतन या बोध न हो सके,
नामान्तर– दूसरा नाम,
अभंग–पद,
तर्काभास–तर्क का आभास मात्र,
इंगित–इशारा,

वस्तुनिष्ठ प्रश्न–

1. केवल जीवन धारण के लिए उपयोगी प्रयोजनों के पीछे दौड़ना क्या है?

(क) ईश्वर धर्म (ख) मानव धर्म
(ग) सांसारिक धर्म (घ) पशु धर्म ( )

2. हमारे देश में कौनसी भाषा का वर्चस्व बना हुआ है–
(क) संस्कृत (ख) उर्दू
(ग) अंग्रेजी (घ) हिन्दी ( )

3. जो समझदार लोग हैं, उनकी दृष्टि रहती है–
(क) मान पर (ख) मन पर
(ग) काम पर (घ) परिणाम पर ( )

4. लेखक के अन्तरतम को किस भावना ने आलोड़ित कर रखा है?
(क) आक्रोश ने (ख) दुःख ने
(ग) सत्संगति ने (घ) प्रसन्नता ने ( )

अतिलघूत्तरात्मक प्रश्न–

1. 'बात पर कान न देना' मुहावरे का अर्थ लिखते हुए वाक्य प्रयोग कीजिए।
2. लेखक का चित्त कब विचलित हो उठा?
3. वर्तमान समय में बुद्धिमानी किस में है?
4. लेखक की दृष्टि में मनुष्यत्व क्या है?
5. पशु का धर्म क्या है?
6. विदेशों में हमारी धाक का कारण क्या है?

लघूत्तरात्मक प्रश्न–

1. रवीन्द्रनाथ ने लोगों पर विश्वास न कर स्वयं पर ध्यान देने के विषय में क्या कहा?
2. मान को लेकर पुराने काव्य की नायिका क्या सोचती है?
3. मनुष्य को केवल मनुष्य किसलिये माना है?
4. मालिकों की बोली कौनसी थी, और उसे हमने कैसे सीखा?

निबंधात्मक प्रश्न–

1. दो तरह के मत मानने वालों के विचार स्पष्ट कीजिए।
2. स्वतंत्रता के बाद हमने अपनी दुर्बलताओं को महनीय तथा निष्क्रियता को तत्त्ववाद का रूप दिया है। उपर्युक्त पंक्ति को अपने शब्दों में समझाइये।

व्याख्यात्मक प्रश्न–

1. सत्संगति की महिमा ..... भटकता न फिर।
2. क्या हमारे नेता ..... भाषा जानती है।
3. लेकिर फिर मैं ..... मानना चाहता।
4. तुलसीदास की ..... व्यक्त कर सके।

*****

अग्नि की उड़ान

–ए.पी.जे. अब्दुल कलाम

लेखक–परिचय

भारतरत्न पूर्व राष्ट्रपति डॉ.ए.पी.जे. अब्दुल कलाम का जन्म तमिलनाडु के छोटे से द्वीप धनुषकोडी पर 15 अक्टूबर 1931 को हुआ था। इनका पूरा नाम अबुल पाकीर जैनुलआबदीन अब्दुल कलाम था। ये मिसाइल मैन के नाम से मशहूर है। उपग्रह प्रक्षेपण यान और मिसाइलों के स्वदेशी विकास में इनका महत्वपूर्ण योगदान रहा है। इन्होंने हिन्दुस्तान को परमाणु ताकत बनाया और अग्नि, पृथ्वी, त्रिशूल जैसी स्वदेशी मिसाइलों का भी निर्माण किया। देशभक्ति इनमें कूट–कूट कर भरी थी। उन्होंने भारत को 2020 तक विकसित बनाने का सपना देखा और इसके लिए युवाओं को आगे आने के लिए प्रेरित किया। वे युवाओं के सबसे बड़े प्रेरणापुंज थे। उन्हीं के अथक प्रयासों से भारत रक्षा तथा वायु आकाश प्रणालियों में आत्मनिर्भर बन सका। वे महान् भारत के वास्तविक प्रतीक, आदर्श नागरिक और सर्वाधिक सकारात्मक भारतीय थे। वे कहते थे कि महान् सपने देखने वालों के सपने हमेशा श्रेष्ठ होते हैं और इसी को उन्होंने अपनी मनसा, वाचा, कर्मणा से जिंदगी की आखिरी साँस तक फलीभूत भी किया। उन्होंने भारत के विकास स्तर को विज्ञान के क्षेत्र में अत्याधुनिक करने के लिए एक विशिष्ट सोच प्रदान की तथा अनेक वैज्ञानिक प्रणालियों तथा रणनीतियों को कुशलतापूर्वक सम्पन्न कराने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। जितने ये श्रेष्ठ व्यक्तित्व के धनी थे उतना ही इनका लेखन प्रखर था। ऐसे प्रबुद्ध राष्ट्र भक्त, चिंतक, वैज्ञानिक का 27 जुलाई 2015 को युवाओं के बीच कर्म संदेश देते हुए देहावसान हो गया।

पाठ–परिचय

प्रस्तुत आत्मकथा में अब्दुल कलाम से मिसाइल मैन बनने की पूरी कहानी है। लेखक ने अपने व्यक्तिगत जीवन के संघर्ष के साथ अपनी वैज्ञानिक उपलब्धियों का भी विवरण इसमें दिया है। साथ ही वे इसमें यह भी बताते हैं कि तकनीकी परियोजनाएँ किस प्रकार के प्रबंधन और सहयोग से सफल होती है। वे बताते हैं कि सामूहिक प्रयास से ही कोई परियोजना सफल हो सकती है। राष्ट्रीय आकांक्षा, वैज्ञानिक आत्मनिर्भरता एवं प्रौद्योगिकी दक्षता हासिल करने के भारत के प्रयासों का पूरा चित्रण इसमें किया गया है। उनकी इस आत्मकथा का एक अंश ही यहां संकलित किया गया है।

**** ****

टेक्नोलॉजी विज्ञान से भिन्न एक सामूहिक गतिविधि है। यह किसी एक व्यक्ति की बुद्धि या समझ पर आधारित नहीं होती बल्कि कई व्यक्तियों की आपसी बौद्धिक प्रतिभा पर आधारित होती है। मेरा मानना है कि आई॰जी॰एम॰डी॰पी॰ की सबसे बड़ी सफलता का तथ्य यह नहीं है कि देश ने रिकॉर्ड

समय के भीतर पाँच मिसाइल प्रणालियाँ विकसित कर लेने की क्षमता हासिल कर ली, बल्कि तथ्य यह है कि इसके माध्यम से वैज्ञानिकों एवं इंजीनियरों की कुछ सर्वश्रेष्ठ टीमें तैयार हो गई। अगर कोई मुझसे भारतीय रॉकेट विज्ञान में मेरी व्यक्तिगत उपलब्धि के बारे में पूछता है तो मैं बताऊँगा कि मैंने नौजवानों की टीमों के लिए एक ऐसा माहौल तैयार किया जिसमें वे अपने दिल और आत्मा को सहर्ष अपने मिशन में लगा सकें।

अपने निर्माण के दौर में टीमें बच्चों की तरह ही होती हैं। वे एकदम उत्तेजनशील, ओजस्विता, उत्साह एवं उत्सुकता से भरपूर और अपने को विशिष्ट दिखाने की इच्छा लिये होती हैं। हालाँकि बहकाए हुए अभिभावक अपने व्यवहार से इन बच्चों की सकारात्मक विशेषताओं, गुणों को नष्ट कर सकते हैं। टीमों की सफलता के लिए काम का माहौल ऐसा होना चाहिए जो कुछ नया करने का अवसर प्रदान करे। डी॰टी॰डी॰एंड पी॰ (एयर), इसरो, डी॰आर॰डी॰ओ॰ और दूसरी जगहों पर काम करने के दौरान मैंने ऐसी चुनौतियों का मुकाबला किया है; लेकिन अपनी टीमों को हमेशा ऐसा माहौल देना सुनिश्चित किया जिसमें वे कुछ नया कर सकें और जोखिम उठा सकें।

एस॰एल॰वी॰–3 परियोजना और बाद में आई॰जी॰एम॰डी॰पी॰ के दौरान हमने पहले परियोजना टीमें बनानी शुरू कीं तो इन टीमों में काम कर रहे लोगों ने अपने को अपने संगठनों की महत्त्वाकांक्षाओं की अग्रिम पंक्ति में पाया। चूँकि इन टीमों में एक तरह से मनोवैज्ञानिक निवेश किया गया था, इसलिए वे बहुत ही सुस्पष्ट और अति संवेदनशील बन गई। सामूहिक यश लेने के लिए वे एक–दूसरे से व्यक्तिगत रूप से विषमानुपात में काम करने की उम्मीद करते।

मैं यह जानता था कि संगठन व्यवस्था में किसी भी तरह की असफलता टीम में किए गए निवेश को बेकार कर देगी। इन टीमों को औसत कार्य समूहों के जिम्मे कर दिया जाता और वहाँ भी ये असफल हो सकती थीं तथा मान्य शर्तों के तहत उनके लिए जो बड़ी–बड़ी महत्त्वाकांक्षाएँ सँजोई गई थी, वे पूरी नहीं हो पातीं। कई अवसरों पर तो संगठन अपनी शक्ति खो चुकने के किनारे पर था, अतः कई प्रतिबंध लगाने पड़े।

एस॰एल॰वी॰ परियोजना के शुरुआती वर्षों में मुझे शीर्ष स्तर पर प्रायः अधीरता का सामना करना पड़ा था, क्योंकि काम में प्रगति तत्काल नजर नहीं आ रही थी। कई लोगों का मानना था कि एस॰एल॰वी॰–3 पर अब संगठन का नियंत्रण नहीं रह गया था, जिससे टीमें उच्छृंखल हो जाएँगी और अनुशासनहीनता फैलेगी तथा संगठन में अव्यवस्था मच जाएगी और संदेह पैदा होने लगेंगे। लेकिन सभी अवसरों पर ये आशंकाएँ काल्पनिक साबित हुईं। संगठनों में कई व्यक्ति बहुत ही मजबूत स्थिति में थे। उदाहरण के लिए, वी॰एस॰एस॰सी॰ में, जिन्होंने टीमों को सौंपे गए सांगठनिक लक्ष्यों के प्रति प्रतिबद्धता एवं जिम्मेदारियों को हमेशा कम करके आंका, वे हमेशा गलत सिद्ध हुए।

जब आप एक परियोजना टीम के रूप में काम करते हैं तो आपको सफलता की कसौटी के लिए मिली–जुली दृष्टि विकसित करनी होगी। हर टीम के काम में हमेशा बहुविध और विरोधाभासी उम्मीदें बनी रहती हैं। अच्छी परियोजना टीमें उस मूल तत्त्व और उन मुख्य लोगों को फौरन पहचान लेने में समर्थ होती हैं, जिनसे सफलता की कसौटी तय कर ली जानी चाहिए। टीम के नेता की भूमिका का एक निर्णायक पक्ष ऐसे मुख्य लोगों से उनकी जरूरतों के बारे में बातचीत कर लेने तथा उनको प्रभावित करने का होता है और टीम नेता को यह भी सुनिश्चित करना होता है कि जैसे–जैसे परिस्थितियाँ विकसित हों या बदलें, तत्त्व पर नजर जमी रहे, मुख्य लोगों और अन्य लोगों के बीच संवाद नियमित रूप से जारी रहे।

एस॰एल॰वी॰–3 टीम ने स्वयं ही आंतरिक सफलता की कसौटी विकसित की थी। स्वयं ही अपने स्पष्ट मानदंड, उम्मीदें और लक्ष्य निर्धारित किए थे। हमें सफलता हासिल करने के लिए क्या–क्या करने की जरूरत है और हम सफलता को कैसे आँकेंगे, यह भी हमने खुद ही तय किया था। उदाहरण के लिए, हम अपने कार्यों को किस तरह पूरा करने जा रहे हैं, कौन क्या करेगा और किन मापदंडों के अनुसार करेगा, समय सीमाएँ क्या हैं और संगठन में टीम दूसरों के संदर्भ में ख़ुद कैसे काम करेगी।

किसी भी टीम में सफलता की कसौटी तक पहुँचने की प्रक्रिया बहुत ही जटिल एवं कौशलयुक्त होती है; क्योंकि एक ही छत के नीचे काफी कुछ घटित होता है। जबकि साधारण तौर पर टीम बाहर से परियोजना के लक्ष्यों को हासिल करने के उद्देश्य से ही काम करती है। लेकिन मैने बार–बार देखा है कि लोग यही तय नहीं कर पाते कि वे क्या करना चाहते हैं और फिर भी कार्यशाला में जब उनके सामने कोई काम होता है तो वे उसे करना नहीं चाहते। असल में एक परियोजना टीम के सदस्य को जासूस की तरह होना चाहिए। उसे यह देखते रहना चाहिए कि परियोजना का काम किस प्रकार आगे बढ़ रहा है और फिर परियोजना की जरूरतों के बारे में स्पष्ट, व्यापक और गहरी समझ बनाने के लिए विभिन्न सबूतों को एक साथ रखकर उन पर विचार करना चाहिए।

दूसरे स्तर पर परियोजना नेता को टीमों एवं कार्य केन्द्रों के बीच सम्बन्ध को बढ़ावा देने तथा विकसित करने का काम करना चाहिए। दोनों ही पक्षों को अपनी आपसी समझ के बारे में बहुत ही स्पष्ट होना चाहिए और दोनों को ही परियोजना में बराबर का पूर्ण रूप से साझेदार होना चाहिए। फिर भी दूसरे स्तर पर हरेक पक्ष को दूसरे पक्ष की क्षमताओं का आकलन करते रहना चाहिए और एक–दूसरे की शक्ति एवं कमजोरियों के बारे में जानते रहना चाहिए, ताकि यह तय किया जा सके कि क्या किए जाने की जरूरत है और इसे कैसे किया जाना चाहिए। दरअसल यह पूरा खेल ठेकेदारी की प्रक्रिया के रूप में देखा जा सकता है। यह संभावनाएँ तलाशने और किसी समझौते पर पहुँचने को लेकर है, जिसमें एक पार्टी दूसरी से कुछ अपेक्षाएँ करती है। यह दूसरी पार्टी के दबावों को यथार्थवादी समझ के बारे में है, यह सफलता की कसौटी को बताने के बारे में और उन साधारण नियमों की व्याख्या करने के बारे में है जिसमें कार्य करने से सम्बन्ध स्थापित करने के बारे में बताया जाता है। लेकिन इन सबसे ऊपर यह तकनीकी एवं व्यक्तिगत स्तरों पर स्पष्ट सम्बन्ध विकसित करने को लेकर है। आई॰जी॰एम॰डी॰पी॰ में शिवधानु पिल्लै और उनकी टीम ने स्व विकसित तकनीक– पी॰ए॰सी॰ई यानि प्रोग्राम एनालिसिस कंट्रोल एंड इवेल्यूएशन के माध्यम से इस क्षेत्र में उल्लेखनीय काम करके दिखाया था। वह रोजाना बारह से एक बजे तक परियोजना टीम के सदस्यों तथा किसी एक कार्य केन्द्र के साथ बैठने और उनके बीच सफलता का स्तर बनाने का काम करते। सफलता कैसे हासिल की जाए और भविष्य की दृष्टि क्या हो, इसकी योजना ही सफलता के लिए प्रेरणा उत्पन्न करती है; जो कि मैंने खुद पाया है, और हमेशा चीजों को साकार बनाती है।

तकनीकी प्रबंधन की अवधारणा की ज़ड़े विकासात्मक प्रबंधन मॉडलों में निहित हैं, जोकि साठ के दशक के शुरू में सद्भाव एवं उत्पादनमुखी प्रबंधन ढाँचे के बीच विवाद से शुरू हुई थी। मुख्य रूप से दो तरह की प्रबंधन स्थितियाँ होती हैं, एक–प्राइमल, जिसमें आर्थिक कर्मचारी का मूल्य महत्ती होता है और दूसरी–रेशनल, जिसमें संगठनात्मक कर्मचारी का मूल्य मुख्य होता है। प्रबंधन को लेकर मेरी जो अवधारणा है वह उस कर्मचारी के इर्द–गिर्द है, जो तकनीकी व्यक्ति है। जबकि प्राइमल मैनेजमेंट स्कूल व्यक्तियों को उनकी स्वतन्त्रता के लिए मान्यता देता है; जबकि रेशनल मैनेजमेंट उन्हें उनकी निर्भरता के लिए अभिस्वीकृति देता है। मैं उन्हें उनकी अन्तनिर्भरता के रूप में लेकर चलता हूँ। जहाँ प्राइमल मैनेजर

स्वतंत्र उद्यम लेकर चलते हैं वहीं रेशनल मैनेजर आपसी सहयोग से काम करता है– और मैं एक अंतर्निर्भर संयुक्त उद्यम लेकर चलता हूँ, सभी को साथ लेकर–नेटवर्क, संसाधनों, कार्यक्रम निर्धारण, मूल्य, लागत आदि सभी को।

अब्राहम मैसलो पहले व्यक्ति थे, जिन्होंने स्व कार्यान्वयन के नए मनोविज्ञान को अवधारणा के स्तर पर बहस के लिए प्रस्तुत किया। यूरोप में रुडोल्फ स्टैनर और रेग रेवांस ने इस अवधारणा को व्यक्तिगत शिक्षा की प्रणाली तथा संगठनात्मक नवीनीकरण के रूप में विकसित किया। एंग्लो–जर्मन प्रबंध दार्शनिक फ्रिट्ज शुएशर ने बौद्ध अर्थशास्त्र की शुरुआत की। भारतीय उपमहाद्वीप में महात्मा गाँधी ने जमीनी स्तर की टेक्नोलॉजी पर जोर दिया और ग्राहक को सम्पूर्ण व्यावसायिक गतिविधि के केन्द्र बिन्दु में रखा। जे॰आर॰डी॰ टाटा प्रगति की ओर ले जाने वाला बुनियादी ढाँचा लेकर आए। डॉ॰ होमी जहाँगीर भाभा और प्रो. विक्रम साराभाई ने परमाणु ऊर्जा पर आधारित उच्च टेक्नोलॉजी एवं अंतरिक्ष कार्यक्रमों की शुरुआत की और साथ ही सम्पूर्णता व प्रवाह के प्राकृतिक नियमों पर स्पष्ट जोर दिया। डॉ. भाभा एवं प्रो. साराभाई के विकासात्मक दर्शन को आगे बढ़ाते हुए डॉ. एम॰एम॰ स्वामीनाथन ने भारत में हरित क्रान्ति लाने के लिए एकता के एक और प्राकृतिक सिद्धान्त पर काम किया। डॉ. वर्गीज कुरियन ने सहकारिता आन्दोलन को सशक्त बनाकर डेयरी उद्योग में एक नई क्रान्ति ला दी। प्रो. सतीश धवन ने अंतरिक्ष में मिशन प्रबंधन की अवधारणाओं को विकसित किया।

आई॰जी॰एम॰डी॰पी॰ में मैंने अंतरिक्ष शोध में डॉ. ब्रह्मप्रकाश द्वारा स्थापित उच्च टेक्नोलॉजी को अनुकूल बनाते हुए प्रो. साराभाई की दृष्टि और प्रो. धवन के मिशन को शामिल करने की कोशिश की। भारतीय निर्देशित मिसाइल कार्यक्रम में अंतर्निहितता के प्राकृतिक नियम को भी जोड़ने की कोशिश की, जिससे टेक्नोलॉजी प्रबंधन की सम्पूर्ण स्वदेशी किस्में विकसित हो सकें।

तकनीकी प्रबंधन का वृक्ष तभी फैलता है जब सकल रूप में जरूरतों, नवीनीकरण, अंतर्निर्भरता और प्राकृतिक प्रवाह का स्व कार्यान्वयन होता है। विकास के प्रतिरूप ही विकास की प्रक्रिया के लक्षण होते हैं, जिनका मतलब यह होता है कि चीजें धीमें परिवर्तन और अचानक रूपांतरण के मिले–जुले रूप में चलती हैं। हर रूपांतरण या तो एक नई छलाँग को जन्म देता है जिससे सोच, ज्ञान अथवा क्षमता के लिए और विकसित पटल का प्रादुर्भाव होता है या फिर पुराने किसी पटल पर जा गिरता है। अच्छा प्रबंध ऊपर उठने तथा पीछे गिरने की प्रक्रिया को इस प्रकार अनवरत जारी रखता है कि ऊपर उठने की आवृत्ति और उसका तात्त्विक आकार पीछे गिरने की अपरिहार्यता को सदा न सिर्फ सम्भाले रहे बल्कि निरस्त भी करता चले।

पेड़ का तना एक आणविक ढाँचे की तरह होता है, जिसमें सभी क्रियाएँ रचनात्मक होती हैं, सभी नीतियाँ आदर्शी होती हैं और सभी फैसले समकलनात्मक होते हैं। इस पेड़ की शाखाएँ संसाधन, सम्पत्तियाँ, संचालन और उत्पादन होते हैं, जो कि तने द्वारा विकसित की गयी निरन्तर प्रक्रिया से पोषित किये जाते हैं।

जब सन् 1983 में आई॰जी॰एम॰डी॰पी॰ को मंजूरी मिली थी तब हमारे पास पर्याप्त तकनीकी आधार नहीं था। बहुत थोड़े से विशेषज्ञ उपलब्ध थे; लेकिन विशेषज्ञ टेक्नोलॉजी इस्तेमाल कर पाने का सामर्थ्य भी नहीं था। कार्यक्रम के इस बहु परियोजना वातावरण ने एक चुनौती पेश की थी–एक साथ पाँच मिसाइल प्रणालियाँ विकसित करने की चुनौती। इसमे हमें संसाधनों की विवेचित भागीदारी, प्राथमिकताएँ स्थापित करने और प्रगतिशील मानव शक्ति को लगाने की जरूरत थी। आखिरकार आई॰जी॰एम॰डी॰पी॰ में अठहत्तर भागीदार थे। इनमें छत्तीस टेक्नोलॉजी केन्द्र और सार्वजनिक क्षेत्र के

इकतालीस से ज्यादा उत्पादन केन्द्र, आयुध कारखाने, निजी कारखाने और व्यावसायिक संस्थान शामिल थे। इसके अलावा सरकार में एक अलग से नौकरशाही तन्त्र था। कार्यक्रम के प्रबंधन में हमने अपनी विशिष्ट जरूरतों एवं क्षमताओं के लिए एक उपयुक्त मॉडल विकसित करने की कोशिश की थी। हमने उन विचारों को भी लिया जो दूसरी जगह सामने आये थे'; लेकिन उन पर अमल अपनी सामर्थ्य को देखते हुए ही किया। इस तरह हमारे समुचित प्रबंधन और सहकारिता उद्यम की कोशिशों ने उस प्रतिभा एवं क्षमता को प्रदर्शित करने में मदद की जो हमारी प्रयोगशालाओं, सरकारी संस्थानों तथा निजी उद्योगों में थी।

आई॰जी॰एम॰डी॰पी॰ का तकनीकी प्रबंधन दर्शन मिसाइल विकास के लिए ही विशेष नहीं है। यह सफलता एवं ज्ञान के उस राष्ट्रीय अनुरोध को प्रदर्शित करता है कि अब दुनिया फिर कभी भी बाहुबल या पैसे की ताकत से नहीं चलेगी। वास्तव में ये दोनों ही शक्तियों का प्रवाह टेक्नोलॉजी की विशिष्टता के कारण होता है। सिर्फ टेक्नोलॉजी–सम्पन्न राष्ट्र ही स्वतन्त्रता एवं सम्प्रभुता का आनन्द लेंगे। टेक्नोलॉजी सिर्फ टेक्नोलॉजी का ही आदर करती है और जैसा कि मैंने शुरू में कहा है कि टेक्नोलॉजी विज्ञान से भिन्न एक सामूहिक गतिविधि है। यह किसी एक व्यक्ति की बुद्धि से नहीं बल्कि एक–दूसरे के पारस्परिक बौद्धिक संगम का परिणाम होता है– और यह वही है जो मैने आई॰जी॰एम॰डी॰पी॰ में बनाने की कोशिश की; अठहत्तर भारतीय संस्थानों का एक ऐसा परिवार, जो मिसाइल प्रणालियां भी बनाता है।

हमारे वैज्ञानिकों के जीवन और सुख–दुःख को लेकर काफी अटकलें लगाई जाती रही है। लेकिन सही ढंग से यह पता लगाने की कोशिश नहीं की गई कि वे कहाँ जाना चाहते थे और यहाँ कैसे पहुंच गए? अपने जीवन के संघर्ष की कहानी बताते हुए मैंने अंदर कहीं–कहीं कुछ झलक देने की कोशिश की है। मुझे आशा है कि हमारे समाज में सत्तावाद के खिलाफ खड़े कुछ थोड़े से नौजवानों के समान ही यह होगी। इस सत्तावाद का एक प्रमुख लक्षण यह है कि यह लोगों को दौलत, सम्मान, प्रतिष्ठा, पदोन्नति, एक–दूसरे की जीवन–शैली से प्रभावित रहने, आयोजित सम्मान–सभी तरह के प्रतिष्ठा द्योतक जैसे अंतहीन रास्ते पर ले जाता है।

इन लक्ष्यों को आसानी से हासिल करने के लिए वे शिष्टाचार के नियमों को सीखते हैं और अपने आपको रीति–रिवाजों, परम्पराओं, आचार संहिता और इसी तरह की दूसरी चीजों में ढालते हैं। आज के नौजवान को जीवन–शैली को स्व पराजय की ओर ले जाने वाले इन रास्तों से बचना चाहिए। भौतिकता अर्जित करने के लिए कार्य करने की संस्कृति और उससे मिलने वाले प्रतिफल को अपने जीवन से अलग कर देना चाहिए। जब मैं अमीर, सत्ता–सम्पन्न शिक्षित लोगों को अपने भीतर शांति के लिए तड़पते, छटपटाते, संघर्ष करते देखता हूँ तो अहमद जलालुद्दीन और अयादुरै सोलोमन जैसे लोग याद आते हैं। पास में कुछ भी नहीं होते हुए वे कितने खुश थे।

'कोरमंडल के तट पर
जहाँ के शंख नाद करते हैं,
रेत के कण प्रकाश भरते हैं।
रही हैं वहाँ कुछ शाही शख्सियतें
जिनकी सल्तनत सागर–सी अपार थी
जिनकी संपदा रेत–सी अमोल थी
एक सूत धोती थी,
एक आधी धोती थी

एक आधी मोमबत्ती।
एक हत्था टूटा प्याला,
एक नीची दुछत्ती।'

बहुत सी चीजों पर निर्भर रहे बिना भी वे अपने को कितना सुरक्षित महसूस करते रहे होंगे। मेरा मानना है कि उन्होंने अपने भीतर से ही इसका संपोषण कर लिया होगा। वे अपने भीतरी संकेतों पर ज्यादा निर्भर रहे और बाहरी संकेतों पर बहुत ही कम, जिनका मैं ऊपर जिक्र कर चुका हूँ। क्या आप इन भीतरी संकेतों से परिचित हैं? क्या आपका इन पर विश्वास है? क्या आपके जीवन का नियंत्रण आपके अपने हाथों में है? इसे आप मुझसे लीजिए और बाहरी दबावों को दूर करने के लिए और फैसले लीजिए। इससे आपका जीवन अच्छा बनेगा और आपका समाज अच्छा होगा। अंतर्निर्देशित और मजबूत लोगों को अपना नेता बनाने से सम्पूर्ण राष्ट्र का हित होगा।

जीवन में आप अपने स्वयं के भीतरी संसाधनों के निवेश की इच्छा रखिए, खासकर अपनी कल्पना की। यही आपको निश्चित रूप से सफलता दिलाएगी। जब आप स्वयं अपनी इच्छा एवं जिम्मेदारी से कोई काम अपने हाथ में लेते हैं तो आप एक इंसान बन जाएँगे।

आप, मैं और प्रत्येक व्यक्ति को ईश्वर ने यहां अपनी–अपनी सृजनात्मक क्षमता से सब कुछ बनाने और स्वचेतन के साथ शांति से रहने के लिए भेजा है। हम अपने–अपने रास्ते अलग चुनते हैं और अपनी–अपनी नियति तय करते हैं। जीवन एक कठिनाइयों भरा खेल है। इसमें आप सिर्फ तभी जीत सकते हैं जब आप एक व्यक्ति होने का जन्मसिद्ध अधिकार हासिल कर लें। इसे प्राप्त करने के लिए आपको सामाजिक या बाहरी खतरे उठाने को तैयार रहना होगा। सुब्रह्मण्यम अय्यर द्वारा मुझे अपनी रसोई में भोजन के लिए आमंत्रित करने को आप क्या कहेंगे? मुझे इंजीनियरिंग कॉलेज में पढ़ाने के लिए मेरी बहन जोहरा ने अपनी सोने की चूड़ियाँ व हार गिरवी रखा था, इसे आप क्या कहेंगे? प्रो. स्पांडर इस पर जोर देते रहे कि मुझे उनके साथ आगे की पंक्ति में बैठकर फोटो खिंचवाना होगा, इसे क्या कहा जाए? क्या मोटर गैराज में हॉवरक्राफ्ट का निर्माण नहीं हुआ था? सुधाकर का साहस, डॉ. ब्रह्मप्रकाश का सहयोग, नारायणन का प्रबंधन, वेंकटरमण की दृष्टि, अरुणाचलम् की गतिशीलता–हरेक व्यक्ति अपने भीतर की शक्ति एवं प्रेरणा का उदाहरण है।

मैं कोई दार्शनिक नहीं हूँ। मैं तो सिर्फ टेक्नोलॉजी का एक व्यक्ति हूँ। मैंने अपना सारा जीवन रॉकेट विज्ञान को सीखने में लगाया है। लेकिन मैंने विभिन्न संगठनों में बहुत सारे भिन्न–भिन्न प्रकार के लोगों के साथ काम किया है। इसी जटिलता से मुझे व्यावसायिक जीवन की घटनाओं को समझने का अवसर मिला। अब जब मैं पीछे की ओर देखता हूँ, जोकि अब तक मैंने बताया है, तो मुझे लगता है कि यह सब मेरे स्वयं के विचार–प्रेक्षणों एवं निष्कर्षों से ज्यादा कुछ नहीं है। मेरे सहकर्मी, साथी, नेता, नाटक का असली पात्र मैं खुद, रॉकेट का जटिल विज्ञान, तकनीकी प्रबंधन के महत्वपूर्ण मसले आदि सभी आरेखी रूप में नजर आते हैं। पीड़ा एवं खुशी, उपलब्धियाँ और असफलताएँ– जो सन्दर्भ, समय व काल में भिन्न–भिन्न हैं– सब एक साथ नजर आती हैं।

जब आप हवाई जहाज से नीचे देखते हैं तो लोग, मकान, चट्टानें, खेत, पेड़–सभी एक में गड्ड–मड्ड नजर आते हैं और इनमें फर्क कर पाना बहुत ही मुश्किल होता है।

'मेरे भ्रम, मेरा मूल्य
मेरी महानता, मेरा रश्क।
मेरी कुव्वत से परे कितना तू ?

मुझमें तेरा ही तो अक्स!'

यह कहानी पहले 'अग्नि' प्रक्षेपण तक की ही है। तब से अब तक और बहुत कुछ हुआ है, हो रहा है, होता रहेगा। जीवन चलता रहेगा। अगर हम सौ करोड़ लोगों की संयुक्त क्षमता के रूप में सोचें तो यह महान् देश हर क्षेत्र में महान् उपलब्धियाँ हासिल करेगा। मेरी कहानी जैनुलाबदीन के बेटे की कहानी है, जो रामेश्वरम् की मसजिद वाली गली में सौ साल से ज्यादा तक रहे और वहीं अपना शरीर छोड़ा। यह उस किशोर की कहानी है, जिसने अपने भाई की मदद के लिए अखबार बेचे। यह कहानी शिव सुब्रह्मण्यम अय्यर एवं आयादुरै सोलोमन के शिष्य की कहानी है। यह उस छात्र की कहानी है जिसे पनदलाई जैसे शिक्षकों ने पढ़ाया। यह उस इंजीनियर की कहानी है जिसे एम॰जी॰ के॰ मेनन ने उठाया और प्रो. साराभाई जैसी हस्ती ने तैयार किया; और एक ऐसे कार्यदल नेता की कहानी, जिसे बड़ी संख्या में विलक्षण व समर्पित वैज्ञानिकों का समर्थन मिलता रहा। यह छोटी–सी एक कहानी मेरे जीवन के साथ ही खत्म हो जाएगी। मेरे पास न धन, न सम्पत्ति, न मैने कुछ इकट्ठा किया, कुछ नहीं बनाया है जो ऐतिहासिक हो, शानदार हो, आलीशान हो। पास में भी कुछ नहीं रखा है– कोई परिवार नहीं, बेटा–बेटी नहीं।

'मैं इस महान् पुण्यभूमि में
खोदा गया एक कुआँ।
देखूँ अगिनत बच्चे
खींचते पानी, मुझमें जो भरा–
कृपा की उस परवरदिगार का।
और सींचते फूल, पौधे, फसलें
नया दौर
नई नस्लें
दूर–दूर तक नियामत
मेरे खुदा की।'

मैं नहीं चाहता कि मैं दूसरों के लिए कोई उदाहरण बनूँ। लेकिन मुझे विश्वास है कि कुछ लोग मेरी इस कहानी से प्रेरणा जरूर ले सकते हैं और जीवन में सन्तुलन लाकर वह संतोष प्राप्त कर सकते हैं, जो सिर्फ आत्मा के जीवन में ही पाया जा सकता है। मेरे परदादा अबुल, मेरे दादा पाकीर और मेरे पिता जैनुलआबदीन की पीढ़ी अब्दुल कलाम के साथ खत्म होती है; लेकिन उस सार्वभौम ईश्वर की कृपा इस पुण्यभूमि पर कभी खत्म नहीं होगी, क्योंकि वह तो शाश्वत है।

शब्दावली–

1. आई.जी.एम.डी.पी– इंटीग्रेटेड गाइडेड मिसाइल डवलपमेंन्ट प्रोग्राम
2. इसरो– इंडियन स्पेस रिसर्च ऑर्गेनाइजेशन (भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन)।
3. वी.एस.एस.सी– विक्रम साराभाई स्पेस सेन्टर (विक्रम साराभाई अंतरिक्ष केन्द्र)।
4. एस.एल.वी–3 :– सेटेलाइट लॉन्च व्हीकल (उपग्रह प्रक्षेपण यान)
5. डी.आर.डी.ओ.– डिफेंस रिसर्च एण्ड डवलपमेंट ऑरगेनाइजेशन (रक्षा अनुसंधान तथा विकास संगठन)

6. हॉवर क्राफ्ट– एरोनॉटिक्स डेवलपमेंट इस्टेब्लिशमेंट में कलाम की पहली परियोजना।
7. पाँच मिसाइल– त्रिशूल, पृथ्वी, आकाश, नाग, अग्नि।

वस्तुनिष्ठ प्रश्न–

1. कलाम द्वारा रचित 'आत्मकथा' है–
   (क) महाशक्ति भारत (ख) अग्नि की उड़ान
   (ग) मेरे सपनों का भारत (घ) तेजस्वी मन ( )
2. मिसाइल–पुरुष के रूप में जाने जाते हैं–
   (क) महात्मा गांधी (ख) अब्दुल कलाम
   (ग) होमी जहांगीर भाभा (घ) प्रो. साराभाई ( )

अतिलघूत्तरात्मक प्रश्न–

1. कलाम का पूरा नाम क्या है?
2. अब्दुल कलाम के गुरु कौन थे?
3. पाँच मिसाइलों के नाम बताइये?
4. 'इसरो' का पूरा नाम क्या है?
5. 'टेक्नोलॉजी' क्या है?

लघूत्तरात्मक प्रश्न–

1. तकनीकी प्रबन्धन की स्थितियों का उल्लेख कीजिए।
2. सत्तावाद क्या है ?
3. तकनीकी प्रबंधन को विकसित करने में किन–किन महान विभूतियों का योगदान रहा ?
4. टेक्नोलॉजी विज्ञान से भिन्न एक सामूहिक गतिविधि है। स्पष्ट कीजिए।

निबंधात्मक प्रश्न–

1. 'एक सफल व्यक्तित्व के निर्माण में अनेक व्यक्तियों का योगदान रहता है।' आत्मकथा के आधार पर सिद्ध कीजिए।
2. भौतिकवादी जीवन–पद्धति ने मानव को कैसे और कहाँ तक प्रभावित किया है? कलाम के अनुसार राष्ट्र का हित कैसे व्यक्तियों के निर्माण से संभव है ? स्पष्ट कीजिए।
3. 'तकनीकी प्रबंधन में कलाम से बढ़कर कोई नहीं।' वैज्ञानिक के रूप में कलाम जी की विशेषताओं का उल्लेख कीजिए।
4. 'अग्नि की उड़ान' के लेखक का परिचय दीजिए।

व्याख्यात्मक प्रश्न–

1. जब आप एक ..... रूप से जारी रहे।
2. तकनीकी प्रबंधन ..... निरस्त भी करता चले।
3. हमारे वैज्ञानिकों के ..... पर ले जाता है।
4. बहुत–सी चीजों..... राष्ट्र का हित होगा।
5. मैं नहीं चाहता ..... वह तो शाश्वत है।

*****

हमारी काश्मीर यात्रा

–गणपति चन्द्र भंडारी

लेखक–परिचय

राजस्थान साहित्य अकादमी के मानद सदस्य श्री गणपतिचन्द्र भण्डारी राजस्थान के अत्यन्त ही लोकप्रिय कवि हैं। 'रक्त–दीप' आपकी कविताओं का संग्रह है। श्री भंडारी अनेक सामाजिक, साहित्यिक एवं शिक्षण संस्थाओं के प्राण हैं और इनके संरक्षण एवं निर्देशन में उन्होंने प्रगति के मार्ग को प्रशस्त पाया है। भंडारी जी का सजग व्यक्तित्व कवि, पर्यटक, निबंधकार, आलोचक तथा अध्यापक का सुन्दर समन्वय है। व्यंग्य एवं हास्य इनकी रचनाओं के पाथेय है; शिष्ट हास्य के फव्वारे 'परीक्षक के प्रति', 'बेवकूफ कौन ?' तथा 'भगवान से भेंट' आदि निबन्धों में छूटते दृष्टिगत होते हैं। आपकी लेखनी में प्रसादात्मकता एवं सरसता है। भाषा की स्वच्छता, विचारों की स्पष्टता, वाक्यविधान की सरलता एवं अभिव्यंजना की सुबोधता इनकी शैली के गुण हैं। सरल, निष्कपट, निरावरण व्यक्तित्व श्री भंडारी जी की कविताओं एवं निबन्धों में बोलता है। आपके व्यक्तित्व का सबसे बड़ा गुण है–आत्मीयता। निज को उपस्थित करना यदि निबन्ध का बहुत बड़ा आकर्षण है तो भंडारी जी में वह प्रचुर मात्रा में है। प्राध्यापक होने के नाते विषय के विश्लेषण की ओर आपकी रूचि अधिक है।

पाठ–परिचय

प्रस्तुत यात्रा वृतान्त में गणपति चन्द्र भण्डारी द्वारा जोधपुर से काश्मीर की रोवर स्काउटों के साथ की गयी यात्रा का जीवंत, सरस तथा काव्य युक्त वर्णन है। एक बार हम लेखक के साथ काश्मीर की वादियों की ओर बढ़ते हैं तो फिर पूरी शब्द यात्रा किये बिना रुकने का मन ही नहीं करता। काश्मीर यात्रा में स्थान–स्थान पर चाहे काश्मीर घाटी हो या जम्मू या श्रीनगर के देवोपम पर्वतीय दृश्य बड़े ही मनोहारी–अलौकिक, सुरम्य तथा मनभावन लगते हैं। भण्डारी जी की लेखनी से सृजित अनुभूति परक यात्रा वृत्त निस्संदेह पठनीय तथा हृदयंगम करने योग्य है।

**** ****

वृष राशि का सूर्य जब अपने पूर्ण यौवन–काल का प्रखर तेज इस पृथ्वी पर उड़ेलने लगता है और अपनी कोटि–कोटि भुजाएँ फैलाकर धरा–वधू के रोम–रोम का आलिंगन करने लगता है तो मरुभूमि के निवासियों को महाकवि बिहारी की यह उक्ति चरितार्थ होती हुई सी प्रतीत होती है––

कहलाने एकत बसत, अहि मयूर मृग बाघ।

जगत तपोवन सो कियो दीरघ दाघ निदाघ।।

जब निदाघ के दीर्घ दाघ से संतप्त पवन भी ''घरि एक बैठि कहूँ धामै बितवत है'' का अनुसरण करने लगता है तो मरुधरा के सैलानियों का मन उड़–उड़कर काश्मीर की शीतल बर्फीली क्रोड़ में कुलाचें भरने लगे तो क्या आश्चर्य ? ऐसे ही भीषण ग्रीष्मकाल में एक दिन अपने कुछ रोवर स्काउटों के साथ मैं जोधपुर से काश्मीर के लिये रवाना हुआ।

दो दिनों की भीड़–भरी रेल यात्रा के उपरान्त हमारा दल दिल्ली, अमृतसर होता हुआ पठानकोट पहुँचा। यहाँ से श्रीनगर तक 290 मील की यात्रा मोटरबस द्वारा करनी पड़ती है। हमने आधा किराया अग्रिम भेजकर पहिले से ही स्थान आरक्षित करवा लिया था, इसलिये स्टेशन के समीपस्थ टूरिस्ट ब्यूरो के कार्यालय से सम्पर्क स्थापित करते ही हमें अपनी बस बता दी गई। एक दिन में ही श्रीनगर पहुँचने की इच्छा वाले यात्रियों को प्रातः 9 बजे तक पठानकोट से चल देना पड़ता है, पर हम तो वहाँ पहुँचे ही 11 बजे थे। अतएव मार्ग में विश्राम करने का निश्चय करके आराम से 2 बजे रवाना हुए।

पठानकोट से जम्मू तक 69 मील का सीधा मार्ग है। पर्वत प्रदेश जम्मू के आगे से आरम्भ होता है। पठानकोट से निकलते ही हम रावी नदी की नहर के किनारे–किनारे चलते हुए माधोपुर पहुँचे जहाँ से यह नहर निकलती है और फिर टावी नदी के पुल को पार करके पाँच बजे के लगभग जम्मू शहर में प्रविष्ट हुए। दूर से ही रावी की बहन टावी नदी के उस पार पर्वत–राज हिमाचल की प्रथम श्रेणी के क्रोड़ में छिपा जम्मू नगर ऐसा सुन्दर दिखाई दिया, मानो स्वयं गिरिराज–कुमारी अपने हरे–भरे अंचल में अपने पुत्र को छिपाये हुए किसी गूढ़ विचार–धारा में निमग्न बैठी हो और टावी की जलधारा उसके लटकते हुए पाद–पद्म से कल्लोले कर रही हो।

जम्मू नगर पर्वत के ढाल पर बसा हुआ है। संकड़े किन्तु स्वच्छ बाजार हैं, शानदार होटल हैं, और विशाल डाक बँगला है जहाँ बस–स्टैंड भी है निकट ही रघुनाथ जी का प्रसिद्ध मन्दिर है। अधिकांश बस्ती हिन्दुओं की है और खाने–पीने की अच्छी सुविधा है। यहाँ कभी–कभी यात्रियों को मोटर बदलनी पड़ती है। यहीं से चढ़ाई आरम्भ होती है। हम 9 बजे संध्या को वहाँ से निकल कर हिमाचल की प्रारम्भिक श्रेणियों को पार करते हुए रात के साढ़े दस बजे के लगभग कुद नामक स्थान पर पहुँचे। अब हम समुद्र तल से 5,900 फुट ऊँचाई पर थे। यह ऊँचाई लगभग राजस्थान के शीर्षस्थ अर्बुद–गिरि की सर्वोच्च चोटी गुरु शिखर के बराबर ही थी, परन्तु ठंड यहाँ कुछ अधिक थी। कुद में चाय–पानी की कुछ दुकानें हैं और एक डाक बँगला भी, पर हमने एक दुकानदार से ही एक सस्ता कमरा किराये पर लेकर उसी में रात काटी। यहाँ कमरे कच्ची फर्श वाले और गन्दे हैं। न बिजली है न अन्य सुविधा, पर घर से भिन्न प्रकार का जीवन बिताने के लिये ही तो हम निकले थे। अतः प्रसन्नता से उसी कमरे में सिकुड़ कर लेट रहे।

जब हम कुद से रवाना हुए तो प्राची के पर्वत–शृंगों पर अरुणा की गुलाबी मुसकान फूट पड़ी थी। शीतल समीर तरुण वनस्पतियों को गुदगुदा कर जगाने लगा था और वे अपने कोमल कर–पल्लव हिला–हिलाकर मानो उसे बरज रही थीं। ऊँचे–ऊँचे पर्वतों की छाती को रौंदती हुई अपने एकरस कर्णकटु संगीत से मनुष्य के श्रम का जयघोष करती हुई हमारी बस सर्पाकार सड़क पर चली जा रही थी। 21 मील की दूरी पर हमें रामवन की छावनी के समीप चिनाब की धारा पार करनी पड़ी। इस पर बना पुल लक्ष्मण झूले के ढंग का है और उस पर सख्त पहरा रहता है। काश्मीर के सभी पुलों पर निरन्तर पहरा लगता है क्योंकि यदि एकाध पुल भी जवाब दे दे या कोई शत्रु उसे विनष्ट कर दे तो काश्मीर का भारत से सम्पर्क टूट जाय और सारा यातायात ठप्प हो जाय।

रामवन कुछ नीचे स्थान पर आया हुआ है। यहाँ से पुनः हम चिनाब की एक धारा से आँखमिचौनी खेलते हुए निरन्तर ऊपर चढ़ने लगे। कभी धारा दांईं ओर कभी बांईं ओर। कभी एकदम खड्डे में बहती हुई तो कभी ठीक हमारी मोटर के नीचे से निकल कर अठखेलियाँ करती हुई गहरी घाटियों में लुप्त! 24 मील की दूरी पर स्थित बेनिहाल नामक स्थान से आगे बढ़ते ही चारों ओर भीमकाय पर्वत अपना गर्वोन्नत मस्तक उठाये हमारा मार्ग रोकते से दिखाई दिये। यहाँ से सुप्रसिद्ध पीरपंचाल पर्वत श्रेणी की चढ़ाइ आरम्भ होती है जिसके ठीक पीछे स्वर्गोपम काश्मीर की सुरम्य घाटी है। छोटे–बड़े अनेक पर्वतों की चोटियाँ हमारे चारों ओर कभी दायें और कभी बायें घूम–घूम कर घूमर सी लेती हुई दिखाई देती थीं और हम निरन्तर ऊपर चढ़ते जाते थे। एकाएक हमें समीपस्थ चोटियों पर कुछ श्वेत रेखाएँ सी दिखाई देने लगीं–ऐसी, मानो किसी योगिराज के सिर की श्वेत जटाएँ इधर–उधर बिखर रही हों अथवा श्वेत मुक्ताओं के चूर्ण से किसी ने इन गिरिबालाओं की माँग सँवार दी हो। जब मोटर के सहयात्रियों ने यह बताया कि यह बर्फ है तो हमें एकाएक विश्वास नहीं हुआ क्योंकि श्रीनगर पहुँचने के पहले ही हिमरेखाओं से सुसज्जित शिखरों के दर्शन होने की हमने कभी कल्पना न की थी। इस एक ही पर्वत श्रेणी पर हम 8,185 फीट की ऊँचाई तक चढ़ चुके थे। देवदार और चीड़ के दीर्घकाय वृक्ष हमारा साथ छोड़ चुके थे। इस पर्वत का ऊपरी भाग ठीक जोधपुर के पहाड़ों जैसा ही नग्न और वनस्पतिहीन है। एक ओर ऊँचा पहाड़ तो दूसरी ओर भीषण खाई! सँकड़ी सी सड़क और मोटरों, बसों और ट्रकों का सर्राटे के साथ इंच–इंच भर की छेटी से निकल जाना! मोटर–चालकों के साहस, कौशल व उनकी सतर्कता की दाद देनी पड़ती है। उनकी तनिक सी असावधानी से यदि खाई की ओर बस लुढ़क जाय तो न उसके पुर्जे ही हाथ लगे न यात्रियों की अस्थियाँ ही। इसी स्थान पर बेनिहाल दर्रा (सुरंग) है जिसे पार करने पर काश्मीर की सुरम्य घाटी के दर्शन होने लगते हैं। यहाँ यातायात का कठोरता से नियंत्रण किया जाता है और एक समय में सुरंग में एक ओर की मोटरों को ही प्रविष्ट किया जाता है। जून मास में भी इस सुरंग के आसपास हमें बर्फ बिखरी मिली तो दिसम्बर की तो बात ही क्या? उस समय इस पर्वत का सारा मार्ग हिमाच्छादित हो जाता है और सुरंग का द्वार बर्फ से पट जाता है। इसलिए भारत–सरकार ने इसी पहाड़ को 9,500 फीट की ऊँचाई पर ही बेध कर नया मार्ग बनाया है जिससे कि घोर हेमन्त काल में भी काश्मीर घाटी का मार्ग चालू रह सके। यह नई सुरंग तैयार हो चुकी है और आजकल यही मार्ग काम में लिया जाता है। पास में एक और सुरंग खोदी जा रही है जिसके तैयार हो जाने पर एक मार्ग आने वाली गाड़ियों के लिये और दूसरा मार्ग जाने वाली गाड़ियों के लिए काम आयेगा। तब निश्चित समय पर ही वहाँ पहुँचना आवश्यक नहीं रहेगा। पुरानी सुरंग केवल 640 फीट लम्बी थी और इससे पीरपंचाल पर्वत–श्रेणी पर चढ़ाई–उतराई के मार्ग में लगभग 17–18 मील की कटौती हो गई है, जिससे मार्ग का खतरा भी मिट सा गया है।

सुरंग से पार होते ही आस–पास की सारी पर्वत–श्रेणियाँ लुप्त हो गई मानो विश्व भर के 'मौन, गौरव और महत्त्व के प्रतिनिधियों' की जो सभा जुड़ी हुई थी वह समाप्त हो गई हो और इस शिखर सम्मेलन के वे सारे सदस्य अपने–अपने देशों को लौट चले हों। ऐसा लगा मानो हम किसी रजत–कगारों वाले अमृत–कुण्ड के एक किनारे खड़े हों और धीरे–धीरे उस कुण्ड में अमृतपान के लिये उतरते जा रहे हों। दूर–दूर पर चारों ओर हिमाच्छादित शिखरों से घिरी हुई एक विशालकाय रजत–कटोरे–सी यह काश्मीर की उपत्यका सचमुच धरती पर स्वर्ग है! न जाने क्या समझ कर मुगल–बादशाह शाहजहाँ ने प्रकृति के इस स्वाभाविक श्रृंगार की उपेक्षा कर, उसी के द्वारा प्रदान किये गये जड़ संगमरमर के पाषाण–खण्डों से मानव द्वारा निर्मित दीवान–ए–खास पर ''गर फिरदौस बर रूए'' वाला वाक्य लिखवाया था?

अस्तु, दर्रे को पार करने के बाद हम पुनः लगभग 5,000 फीट की ऊँचाई वाली काश्मीर की सुरम्य उपत्यका में उतर आए। मध्याह्न होते–होते हम काजीकुण्ड पहुँच गए जहाँ कुछ जलपान गृह भी हैं और एक डाक बँगला भी है। यहाँ से भोजनोपरांत हमने श्रीनगर की ओर प्रस्थान किया। काजीकुण्ड से निकलते ही समतल भूमि पर बनी हुई सड़क के दोनों किनारों पर सफेदे के सीधे और ऊँचे वृक्षों की लम्बी कतारें अत्यन्त आकर्षक लग रही थीं; जैसे यात्रियों के स्वागतार्थ प्रकृति ने घाटी के प्रवेश–मार्ग पर ऊँचे–ऊँचे श्वेत खम्भों पर हरी–हरी पताकाएँ टाँग रखी हो। आगे बढ़ने पर जल से भरे हुए छोटे–छोटे चावल के खेतों में काम करते हुए कृषक दिखाई दिये।

थोड़ी–थोड़ी दूरी पर स्थित छोटे–छोटे गाँवों को पार करते हुए पामपुर के पास हम केसर के खेतों के बीच से निकले, परन्तु अभी फसल उतर चुकी थी और खेत खाली पड़े थे। फिर अखरोट और चिनार के विशालकाय छायादार वृक्षों के बीच होते हुए 5 बजे के लगभग हम श्रीनगर के मोटर अड्डे पर उतरे। एक बार फिर वहीं ताँगों और मोटरों की चिल्ल–पों, राहगीरों की भीड़–भाड़ और होटल–रेस्टोरेंटों का फिल्मी संगीत ! सरदी भी कुछ विशेष न थी। जीवन के इन अति परिचित दृश्यों से बचने के लिये हमने होटल में ठहरने का विचार त्याग कर चिनारबाग में स्थित एक डोंगे (नाव) में ठहरने का निश्चय किया। ये 'हाउस बोट' या नावघर श्री नगर की एक प्रमुख विशेषता है।

श्रीनगर झेलम नदी के दोनों ओर बसा है और उसके उत्तर–पूर्व में विशाल डल झील है। झेलम से काट कर निकाली गई व उसी में पुनः मिला दी गई छोटी–बड़ी अनेक नहरें हैं जो शहर के बीच में से निकलती हैं ओर जल–मार्ग का काम देती हैं। चिनार बाग के निकट की ऐसी ही एक नहर डलगेट पर झेलम को डल झील से मिलाती है। डलगेट डल झील और झेलम के जल की सतह का नियंत्रण करता है जिससे नावों का झेलम से डल झील में आना–जाना सम्भव होता है। झेलम पर कुल 7 स्थानों पर पुल बने हुए है जिन्हें काश्मीरी लोग ''कादल'' कहते हैं। प्रथम पुल 'अमीर कादल' विशेष महत्वपूर्ण है। श्रीनगर में कुल तीन प्रकार की नावें मिलती है। विशालकाय नावघर (हाउस बोट) जो आधुनिक जीवन की सभी सुविधाओं से सुसज्जित होते हैं और तीन सौ रुपये मासिक से हजार रूपये मासिक तक किराये वाले होते हैं। किराया उसकी विशालता, सुविधाओं व स्थिति पर निर्भर करता है। ये हाउस बोट प्रायः झेलम की मुख्य धारा में अथवा डलगेट से नेहरू पार्क तक डलझील में पड़े रहते हें और अपना स्थान नहीं छोड़ते। इनसे आने–जाने का सारा काम छोटी नुकीली डोंगियों द्वारा होता है जिन्हें 'शिकारा' कहते हैं। इन नावघरों से अलग भी सैंकड़ों शिकारे हैं जो खूब सजे सजाये होते हैं और संध्या के समय यात्रियों को डल झील में सैर कराने के लिए ले जाते हैं। तीसरी प्रकार की नावें 'डोंगा' कहलाती हैं जो नावघरों से कुछ छोटी होती हैं (लगभग 40–50 फीट लम्बी) परन्तु उनमें सजावट नहीं होती। लकड़ी की फर्श तथा तीन कमरे व एक रसोई और कुछ खुला आँगन होता है। ये सस्ती मिल जाती हैं और जहाँ चाहो ले जाई जा सकती हैं। हमने भी ऐसे ही एक डोंगे में डेरा डाला। डोंगों के मालिक सभी मुसलमान हैं जो प्रायः ईमानदार और विश्वसनीय हैं और आप का सारा काम कर देते हैं।

श्रीनगर में अनेक दर्शनीय स्थान हैं परन्तु सबसे महत्वपूर्ण काश्मीरी कला–कृतियों का एम्पोरियम, शंकराचार्य का मन्दिर और डल झील है। एम्पोरियम में काश्मीरी शालें, गलीचे, लकड़ी व बेत का सामान, नम्दे, गब्बे, नगीने, कूटे व धातु की कलापूर्ण वस्तुएँ, शहद, केसर आदि अनेक प्रकार का सामान मिलता है। अनेक वस्तुएँ बड़ी मूल्यवान् हैं जैसे शाल और गलीचे। दस हजार रूपये का गलीचा तो गलीचों के प्रदर्शन–कक्ष में ही बिछा हुआ है!

शंकराचार्य का मन्दिर चिनारबाग के समीपस्थ एक पहाडी पर बना हुआ है जो ईसा से 4 शताब्दी

पूर्व गोपादित्य के द्वारा बनवाया गया बताते हैं। इसमें एक विशाल शिवलिंग है और यह भारी भरकम प्रस्तर–खंडों से निर्मित है। इस मंदिर से श्रीनगर का व काश्मीर घाटी का दृश्य अत्यंत सुन्दर दिखाई देता है। घाटी के चारों ओर की सुदूरवर्ती पर्वत–श्रेणियों के नवनीत–धवल और ईषत्–धवल शृंगों पर क्रीड़ा करते हुए मेघशावक और भीमकाय नीलवर्ण गिरिराजियों की उपत्यकाओं में तैरते हुए किसी विरह–विधुरा यक्षिणी के संदेशवाहक मेघदूत राजस्थान की चिलचिलाती धूप में तपस्या करते हुए ताम्रवर्ण पर्वतों को देखने की अभ्यस्त आँखों के लिए एक 'अतीन्द्रिय कल्पनालोक' का सृजन करने लगे। चंदन वृक्ष के चारों ओर लिपटे हुए भुजंगों की तरह देवदार, सफेदा, अखरोट और चिनार के वृक्षों की हरीतिमा से परिवेष्ठित श्रीनगर के अंग–प्रत्यंगों से लिपटी वर्तुलाकार झेलम की रजत धारायें, सरस भावनाओं से पूर्ण नगर के हृदय की अनुकृति डल झील और उसमें तैरने वाले हरे–भरे खेत, घर और नावघरों की पंक्तियाँ, सभी कुछ अद्‌भुत, अनिवर्चनीय था।

डल झील के तट की पर्वतश्रेणियों के आँचल में अनेक दर्शनीय स्थान हैं जिनमें चश्मेशाही, शालीमार और निशात बाग बहुत प्रसिद्ध है। शालीमार और निशात बाग क्रमशः मुगल–सम्राट जहाँगीर और नूरजहाँ के भ्राता आसफ अली के द्वारा बनवाये हुए हैं। दोनों उपवनों में एक कृत्रिम नाले के जल को अनेक स्थानों पर प्रपात के रूप में गिराया गया है और उसके प्रवाह के बीच–बीच में हौज और फव्वारे हैं। इतवार को जब इस नाले का पानी खोला जाता है तो रंग बिरंगे फूलों की कतारों के बीच में कलकल निनाद करता हुआ जल का यह प्रवाह सचमुच 'जीवन–प्रवाह' बन जाता है। नाना प्रकार के प्रपातों पर से गिरती हुई जलधारा की कल्लोलें और धारा के बीच–बीच में छूटने वाले फव्वारों की जल–कणिकायें सारे उपवन में नन्दन कानन की सी शोभा का सृजन कर देती हैं। मुगल–सम्राटों की विलास–प्रियता और उनका उद्यान–प्रेम आँखों के सामने साकार हो उठता है। दिन को शालीमार और निशात एवम् रात्रि को मैसूर के वृन्दावन उपवन की शोभा से बढ़कर आह्‌लादकारी दृश्य अन्यत्र मिलना दुर्लभ है। इनकी शोभा शब्दों में नहीं बाँधी जा सकती क्योंकि ''गिरा अनयन नयन बिनु बानी।''

चश्मेशाही के सोते का जल अत्यन्त स्वास्थ्यवर्धक माना जाता है और डल झील से ही लगी हुई नगिन झील का पानी इतना स्वच्छ है कि नीचे 10–15 फीट की गहराई पर उगे हुए पौधे साफ देखे जा सकते हैं। डल झील के अनेक स्थानों का पानी भी ऐसा ही स्वच्छ है। सूर्य की रश्मियाँ उस अपार जल राशि के आवरण में छिपी हुई धरा सुन्दरी का भी स्पर्श कर ही लेती हैं। डल झील के भीतर बस्तियाँ भी बसी हुई हैं और तैरते हुए खेत भी हैं। नगिन झील से नेहरू पार्क आते समय जल के बीच में बने मकानों और दुकानों की कतारें एवम् शिकारों में बैठकर शाक भाजी और फल फूल बेचती हुई काश्मीरी किन्नरियाँ आप को मिलेंगी। जल मार्ग ही इनकी सड़कें हैं और शिकारा ही इनका यान है। पास ही सब्जियों के छोटे–बड़े अनेक खेत हैं जो झील में उगी हुई सेवार के घने हो जाने पर उसी को तह पर तह जमा कर बनाये गए हैं। ये खेत हिलते–डुलते हैं और एक स्थान से दूसरे स्थान पर भी ले जाये जा सकते हैं। इनके पास ही एक ओर कमल वन है जिसमें बहुत बड़ी राशि में कमल पैदा होते हैं। पर इस समय कमलों की ऋतु न होने से यत्र–तत्र ही दिखाई दे रहे थे। शंकराचार्य की पहाड़ी के समीप ही एक छोटे से द्वीप पर रंग–बिरंगी बत्तियों से जगमगाता हुआ नेहरू पार्क है जो स्वतंत्र भारत की देन है। यहाँ संध्या के समय शिकारों में सैर करते हुए सैंकड़ों सैलानी एकत्र हो जाते हैं और विद्युत–प्रकाश में जगमगाती डल झील के मनोरम दृश्य का आनन्द लूटते हैं। तैराकों के लिए यहाँ तैरने का भी प्रबन्ध है।

ये श्रीनगर के वे स्थल हैं जिनकी समता के स्थान अन्यत्र मिलने दुर्लभ हैं। श्रीनगर में मनुष्य की कृति और प्रकृति दोनों के सौंदर्य का अद्‌भुत और मनोरम समन्वय हुआ है।

वैसे तो प्राकृतिक वैभव इस विशाल उपत्यका की चप्पा–चप्पा भूमि में बिखरा पड़ा है, परन्तु अमरनाथ, शेषनाग झील व उसके मार्ग में पड़ने वाले पहलगाँव की शोभा तो अद्वितीय है। चीड़ के घने जंगलों से भरा गुलमर्ग, किलनमर्ग और उसके शीश पर मुकुट की तरह चमकने वाले हिमाच्छादित पर्वत एफरवाट की क्रोड़ में हिम–क्रीड़ाओं का आनन्द भी अपने में निराला है। पहलगाँव से चंदनवाड़ी तक मार्ग के साथ वायुवेग से उछल–उछल कर बहने वाले शेषनाग नाले को एवम् उसके द्वारा पग–पग पर छितराई जाने वाली दुग्ध–धवल जल की फुहारों को देख कर तो मुझे ऐसा लगा जैसे 'प्रसाद' की कामायनी का निम्नलिखित छंद पूरी तरह उस दिन ही मेरी समझ में आया हो–

''उस असीम नीले अंचल में, देख किसी की मृदु मुसकान।
मानो हँसी हिमालय की है, फूट चली करती कल गान।।''

शब्दार्थ–

अहि– सर्प,
पाद–पद्म–चरण कमल,
वरज– इन्कार,
हिमाच्छादित–हिम से ढका हुआ (हिमालय),
कर पल्लव–कोंपल रूपी हाथ,
ईषत् धवल– किंचित सफेद,
सैलानी– पर्यटक,
क्रोड–गोद,
कल्लोलें–कलरव,
अबुर्द गिरि–आबु पर्वत,
रजत कगार– चांदी का किनारा,
नवनीत धवल– मक्खन की भांति सफेद,
छेटी– दूर,
अनुकृति– नकल।

वस्तुनिष्ठ प्रश्न–

1. गणपतिचन्द्र भण्डारी का चर्चित कविता संग्रह है–
   (क) आकाशदीप (ख) रक्तदीप
   (ग) राजदीप (घ) गगनदीप ( )
2. जोधपुर से पठानकोट की यात्रा लेखक ने किससे की?
   (क) बस से (ख) हवाई जहाज से
   (ग) ट्रक से (घ) रेल से ( )
3. श्रीनगर बसा हुआ है–
   (क) सतलज के तट पर (ख) रावी के तट पर
   (ग) व्यास के तट पर (घ) झेलम के दोनों ओर ( )
4. झेलम पर बने पुलों को कश्मीरी लोग कहते है –
   (क) बादल (ख) मादल
   (ग) कादल (घ) शादल ( )

अतिलघूत्तरात्मक प्रश्न–

1. लेखक की यात्रा कहाँ से प्रारम्भ हुई ?
2. लेखक के साथ यात्रा में और कौन था ?
3. कुद नामक स्थान की समुद्र तल से ऊँचाई कितनी है ?
4. शंकराचार्य का मन्दिर किसने बनवाया था ?

लघूत्तरात्मक प्रश्न–

1. जम्मू नगर की स्थिति (बसावट) के विषय में लिखिए।
2. श्रीनगर में कितने प्रकार की नावें होती है ? उनके नाम लिखिए।
3. डल झील के तट की पर्वत श्रेणियों में कौन–कौन से दर्शनीय स्थान है ?
4. तीसरी प्रकार की नावें डोंगा की क्या विशेषता है ? लिखिए।

निबंधात्मक प्रश्न–

1. कहलाने एकत बसत अहि मयूर मृग बाघ।
   जगत तपोवन सो कियो दीरघ दाघ निदाघ।। उक्त दोहे का आशय स्पष्ट कीजिए।
2. लेखक की लेखनी यात्रा वर्णन में स्थान स्थान पर काव्यमयी हो उठी है। पठित यात्रा वृत्त में आये स्थलों का वर्णन कीजिए।
3. शंकराचार्य मंदिर के आस–पास के काश्मीर व श्रीनगर के प्राकृतिक दृश्यों का वर्णन कीजिए।
4. आपके जीवन की ऐसी कोई यात्रा जो आपने की है जो आपके लिए अविस्मरणीय बन गयी है, उसका अपने शब्दों में वर्णन कीजिए।

व्याख्यात्मक प्रश्न–

1. नगिन झील से ..... यत्र तत्र ही दिखाई दे रहे थे।
2. सुरंग से पार ..... धरती पर स्वर्ग है।

*****

हार की जीत

– सुदर्शन

लेखक–परिचय

श्री सुदर्शन जी का जन्म सन् 1855 में सियालकोट में हुआ। इनका मूल नाम बद्रीनाथ है। सुदर्शन ने बी.ए. तक शिक्षा प्राप्त की। इन्होंने प्रेमचन्द की भाँति ही सर्वप्रथम उर्दू में लिखा तत्पश्चात् उन्होंने हिन्दी में लिखा। सुदर्शन ने कहानियों के अतिरिक्त उपन्यास और नाटक भी लिखे।

इनकी कहानियाँ पुष्पलता, तीर्थयात्रा, सुदर्शन सुधा, सुप्रभात, परिवर्तन, पनघट, नगीना, चार कहानी आदि कहानी संग्रहों में संकलित है। प्रेमपुजारिन, देहाती, देवता और भाग्यवन्ती इनके उपन्यास हैं। अंजना, सिकन्दर और भाग्यचक्र इनके प्रसिद्ध नाटक हैं।

सुदर्शन ने सामाजिक जीवन के विविध पक्षों को अपनी कहानियों में उकेरा है। सामाजिक जीवन की विसंगतियों को चित्रित करते हुए सुदर्शन आदर्शोन्मुख यथार्थवाद के हिमायती हैं। सुदर्शन की कहानियों में वर्णनात्मकता की प्रधानता होती है। वे परिस्थिति का अंकन करते हुए उस परिवेश के चक्रव्यूह में फँसे मानव की नियति और उसकी मनःस्थिति को अभिव्यक्त करते चलते हैं।

सुदर्शन सरल सहज शब्दावली और अपनी भावमयता में अनूठे हैं। सामाजिक जीवन के सरस एवं व्यावहारिक रूप का अभिव्यंजन इनकी कहानियों की विशेषता है।

पाठ–परिचय

हार की जीत कहानी संन्यासी की उदारता, प्रेम और मानवीयता के माध्यम से एक डाकू के हृदय परिवर्तन की मर्मस्पर्शी कहानी है। धोखे से डाकू खड़ग सिंह असहाय दुःखी अपाहिज बनकर बाबा भारती का प्राणों से प्रिय घोडा छीन लेता है लेकिन बाबा के ये शब्द ' इस घटना को किसी को मत बताना अन्यथा कोई भी गरीब अपाहिज पर विश्वास नहीं करेगा' पाषाण हृदयी डाकू के हृदय में संवेदना का निर्झर प्रवाहित कर देते हैं। डाकू खड़ग सिंह न केवल बाबा के घोड़े को लौटाता है बल्कि प्रायश्चित स्वरूप अपनी आँखों के गंगा जल से उस स्थान को पवित्र करता है जहाँ बाबा भारती के अश्रु बिन्दु गिरे थे। यह निजत्व की हानि को मनुष्यता की हानि पर समर्पित कर देने का भाव प्रदर्शित करने वाली आदर्शोन्मुख यथार्थवादी कहानी है।

**** ****

माँ को अपने बेटे, साहूकार को अपने देनदार और किसान को अपने लहलहाते खेत देखकर जो आनन्द आता है वही आनन्द बाबा भारती को अपना घोड़ा देखकर आता था। भगवत्–भजन से जो समय

बचता, वह घोड़े को अर्पण हो जाता। यह घोड़ा बड़ा सुन्दर था, बड़ा बलवान था। इसके जोड़ का घोड़ा इलाके में न था। बाबा भारती उसे सुलतान कहकर पुकारते, अपने हाथ से खर–हरा करते, खुद दाना खिलाते, और देख–देखकर प्रसन्न होते थे। ऐसी लगन, ऐसे प्यार, ऐसे स्नेह से कोई सच्चा प्रेमी अपने प्यारे को भी न चाहता होगा। उन्होंने अपना सब कुछ छोड़ दिया था– रुपया, माल असबाब, जमीन, यहाँ तक कि उन्हें नागरिक जीवन से भी घृणा थी। अब गाँव के बाहर एक छोटे से मन्दिर में रहते और भगवान का भजन करते थे। परन्तु सुल्तान से बिछड़ने की वेदना उनके लिए असह्य थी। मैं इनके बिना नहीं रह सकूँगा, उन्हें ऐसी भ्रांति–सी हो गई थी। वे उसकी चाल पर लट्टू थे। कहते, ऐसा चलता है जैसे मोर घन घटा को देखकर नाच रहा हो। गाँवों के लोग इस प्रेम को देखकर चकित थे, कभी–कभी कनखियों से इशारे भी करते थे, परन्तु बाबा भारती को इसकी परवाह न थी। जब तक संध्या समय सुलतान पर चढ़कर आठ दस मील का चक्कर न लगा लेते, उन्हें चैन न आता।

खड़गसिंह उस इलाके का प्रसिद्ध डाकू था। लोग उसका नाम सुनकर काँपते थे। होते–होते सुलतान की कीर्ति उसके कानों तक भी पहुँची। उसका हृदय उसे देखने के लिए अधीर हो उठा। वह एक दिन दोपहर के समय बाबा भारती के पास पहुँचा और नमस्कार करके बैठ गया।

बाबा भारती ने पूछा– खड़गसिंह! क्या हाल है?

खड़गसिंह ने सिर झुका कर उत्तर दिया– आपकी दया है।

''कहो, इधर कैसे आ गये ?

''सुलतान की चाह खींच लाई।''

''विचित्र जानवर है। देखोगे तो प्रसन्न हो जाओगे।''

''मैंने भी बड़ी प्रशंसा सुनी है।''

''उसकी चाल तुम्हारा मन मोह लेगी।''

''कहते हैं, देखने में बड़ा सुन्दर है।''

''क्या कहना। जो उसे एक बार देख लेता है उसके हृदय पर उसकी छवि अंकित हो जाती है।''

''बहुत दिनों से अभिलाषा थी, आज उपस्थित हो सका हूँ।''

बाबा और खड़गसिंह दोनों अस्तबल में पहुँचे। बाबा ने घोड़ा दिखाया, घमंड से। खड़गसिंह ने घोड़ा देखा, आश्चर्य से। उसने सहस्त्रों घोड़े देखे थे, परन्तु ऐसा बाँका घोड़ा उसकी आँखों से कभी न गुजरा था, सोचने लगा– भाग्य की बात है, ऐसा घोड़ा खड़गसिंह के पास होना चाहिए था, इस साधु को ऐसी चीज से क्या लाभ! कुछ देर तक आश्चर्य से चुपचाप खड़ा रहा। इसके पश्चात् हृदय में हलचल होने लगी। बालकों की–सी अधीरता से बोला– परन्तु बाबाजी! इसकी चाल न देखी तो क्या देखा?

बाबाजी भी मनुष्य ही थे। अपनी वस्तु की प्रशंसा दूसरे के मुख से सुनने के लिए उनका हृदय भी अधीर हो गया। घोड़े को खोल कर बाहर लाये, और उसकी पीठ पर हाथ फेरने लगे। एकाएक उचककर सवार हो गये। घोड़ा वायु–वेग से उड़ने लगा। उसकी चाल देखकर, उसकी गति देखकर, खड़गसिंह के हृदय पर साँप लोट गया। वह डाकू था और जो वस्तु उसे पसंद आ जाय, उस पर अपना अधिकार समझता था। उसके पास बाहुबल था, और आदमी थे! जाते–जाते उसने कहा–बाबाजी! मैं यह घोड़ा आपके पास न रहने दूँगा।

बाबा भारती डर गये। उन्हें रात को नींद न आती थी। सारी रात अस्तबल की रखवाली में कटने लगी। प्रतिक्षण खड़गसिंह का भय लगा रहता। परन्तु कई मास बीत गये, और वह न आया। यहाँ तक कि बाबा भारती कुछ लापरवाह हो गये। और इस भय को स्वप्न के भय की नाँई मिथ्या समझने लगे।

संध्या का समय था। बाबा भारती सुलतान की पीठ पर सवार होकर घूमने जा रहे थे। इस समय उनकी आँखों में चमक थी, मुख पर प्रसन्नता! कभी घोड़े के शरीर को देखते, कभी रंग को' और मन में फूले न समाते थे।

सहसा एक ओर से आवाज आयी– ओ बाबा! इस कँगले की भी बात सुनते जाना।

आवाज में करुणा थी। बाबा ने घोड़े को थाम लिया। देखा, एक अपाहिज वृक्ष की छाया में पड़ा कराह रहा है। बोले–क्यों, तुम्हें क्या कष्ट है?

अपाहिज ने हाथ जोड़ कर कहा–बाबा! मैं दुखिया हूँ, मुझ पर दया करो। रामांवाला यहाँ से तीन मील है, मुझे वहाँ जाना है। घोड़े पर चढ़ा लो, परमात्मा भला करेगा।

''वहाँ तुम्हारा कौन है?''

''दुर्गादत्त वैद्य का नाम आपने सुना होगा। मैं उनका सौतेला भाई हूँ।''

बाबा भारती ने घोड़े से उतरकर अपाहिज को घोड़े पर सवार किया और स्वयं उसकी लगाम पकड़कर धीरे–धीरे चलने लगे।

सहसा उन्हें एक झटका लगा, और लगाम हाथ से छूट गयी। उनके आश्चर्य का ठिकाना न रहा, जब उन्होंने देखा कि अपाहिज घोड़े की पीठ पर बैठा घोड़े को दौड़ाये लिये जा रहा है। उनके मुख से भय, विस्मय और निराशा से मिली हुई चीख निकल गयी। यह अपाहिज खड़गसिंह डाकू था।

बाबा भारती कुछ देर तक चुप रहे, और इसके पश्चात् कुछ निश्चय करके पूरे बल से चिल्ला कर बोले–जरा ठहर जाओ।

खड़गसिंह ने यह आवाज सुनकर घोड़ा रोक लिया, और उसकी गर्दन पर प्यार से हाथ फेरते हुए कहा–बाबाजी! यह घोड़ा अब न दूँगा।

''परन्तु एक बात सुनते जाओ।''

खड़गसिंह ठहर गया। बाबा भारती ने निकट जाकर उसकी ओर ऐसी आँखों से देखा, जैसे बकरा कसाई की ओर देखता है, और कहा– घोड़ा तुम्हारा हो चुका, मैं तुमसे वापस करने के लिए न कहूँगा, परन्तु खड़गसिंह केवल एक प्रार्थना करता हूँ, उसे अस्वीकार न करना, नहीं तो मेरा दिल टूट जायेगा।

''बाबाजी! आज्ञा दीजिए। मैं आपका दास हूँ, केवल यह घोड़ा न दूँगा।''

''अब घोड़े का नाम न लो, मैं तुमसे इसके विषय में कुछ न कहूँगा। मेरी प्रार्थना केवल यह है कि इस घटना को किसी के सामने प्रकट न करना।''

खड़गसिंह का मुँह आश्चर्य से खुला रह गया। उसका विचार था कि मुझे इस घोड़े को लेकर यहाँ से भागना पड़ेगा, परन्तु बाबा भारती ने स्वयं उससे कहा कि इस घटना को किसी के सामने प्रकट न करना। इससे क्या प्रयोजन सिद्ध हो सकता है? खड्गसिंह ने बहुत सोचा, बहुत सिर मारा, परन्तु कुछ समझ न सका। हारकर उसने अपनी आँखें बाबा भारती के मुख पर गड़ा दीं, और पूछा–बाबाजी! इसमें आपको क्या डर है?

सुनकर बाबा भारती ने उत्तर दिया– लोगों को यदि इस घटना का पता लग गया तो वे किसी गरीब पर विश्वास न करेंगे।

और यह कहते–कहते उन्होंने सुलतान की ओर से इस तरह मुँह मोड़ लिया, जैसे उनका उससे कभी कोई सम्बन्ध न था। बाबा भारती चले गये परन्तु उनके शब्द खड़गसिंह के कानों में उसी प्रकार गूँज रहे थे। सोचता था– कैसे ऊँचे विचार हैं, कैसे पवित्र भाव हैं! उन्हें इस घोड़े से प्रेम था; इसे देखकर

उनका मुख फूल की नाँईं खिल जाता था; कहते थे, इसके बिना मैं रह न सकूँगा।

उसकी रखवाली में वह कई रात सोये नहीं। भजन–भक्ति न कर रखवाली करते रहे परन्तु आज उनके मुख पर दुःख की रेखा तक न दीख पड़ती थी। उन्हें केवल यह ख्याल था कि कहीं लोग गरीबों पर विश्वास करना न छोड़ दें। उन्होंने अपनी निज की हानि को मनुष्यत्व की हानि पर न्योछावर कर दिया, ऐसा मनुष्य, मनुष्य नहीं, देवता है।

रात्रि के अंधकार में खड़गसिंह बाबा भारती के मन्दिर में पहुँचा। चारों ओर सन्नाटा था; आकाश पर तारे टिमटिमा रहे थे। थोड़ी दूर पर गाँवों के कुत्ते भौंकते थे। मन्दिर के अन्दर कोई शब्द सुनायी न देता था। खड़गसिंह सुलतान की बाग पकड़े हुए था। वह धीरे–धीरे अस्तबल के फाटक पर पहुँचा। फाटक किसी वियोगी की आँखों की तरह चौपट खुला था। किसी समय वहाँ बाबा भारती स्वयं लाठी लेकर पहरा देते थे, परन्तु आज उन्हें किसी चोरी, किसी डाके का भय न था। हानि ने उन्हें हानि की तरफ से बेपरवा कर दिया था। खड़गसिंह ने आगे बढ़कर सुलतान को उसके स्थान पर बाँध दिया और बाहर निकलकर सावधानी से फाटक बन्द कर दिया। इस समय उसकी आँखों में नेकी के आँसू थे।

अन्धकार में रात्रि ने तीसरा पहर समाप्त किया और चौथा पहर आरम्भ होते ही बाबा भारती ने अपनी कुटिया से बाहर निकल ठंडे जल से स्नान किया। उसके पश्चात् इस प्रकार, जैसे कोई स्वप्न चल रहा हो, उनके पाँव अस्तबल की ओर मुड़े। परन्तु फाटक पर पहुँचकर उनको अपनी भूल प्रतीत हुई। साथ ही घोर निराशा ने पाँवों को मन–मन भर का भारी बना दिया। वे वहीं रुक गये।

घोड़े ने स्वाभाविक मेधा से अपने स्वामी के पाँवों की चाप को पहचान लिया और जोर से हिनहिनाया।

बाबा भारती दौड़ते हुए अन्दर घुसे, और अपने घोड़े से गले से लिपटकर इस प्रकार रोने लगे, जैसे बिछड़ा हुआ पिता चिरकाल के पश्चात् पुत्र से मिल कर रोता है। बार–बार उसकी पीठ पर हाथ फेरते, बार–बार उसके मुँह पर थपकियाँ देते और कहते थे– अब कोई गरीबों की सहायता से मुँह न मोड़ेगा।

थोड़ी देर बाद जब वे अस्तबल से बाहर निकले तो उनकी आँखों से आँसू बह रहे थे; वे आँसू उसी भूमि पर, ठीक उसी जगह, गिर रहे थे जहाँ बाहर निकलने के बाद खड़गसिंह खड़ा होकर रोया था।

दोनों के आँसुओं का उसी भूमि की मिट्टी पर परस्पर मिलाप हो गया।

शब्दार्थ–

खरहरा– घोड़े के बदन की गर्द साफ करने वाली लोहे की कंघी।

अस्तबल– घोड़ों को बाँधने का स्थान

बाहुबल– शारीरिक शक्ति

नाँई– समान

अपाहिज– अपंग

दिल टूटना– बहुत दुःखी

अभिलाषा– इच्छा

साँप लौटना– ईर्ष्या के वशीभूत होना

कीर्ति–यश

कंगले– दरिद्र

लगाम–डोरी

मेधा– बुद्धि।

वस्तुनिष्ठ प्रश्न–

1. ''हार की जीत' कहानी किस प्रकार की है ?
   (क) आदर्शवादी (ख) प्रगतिवादी
   (ग) यथार्थवादी (घ) आदर्शोन्मुख यथार्थवादी ( )
2. 'इस घटना को किसी के सामने प्रकट न करना।'' बाबा भारती के ऐसा कहने का कारण–
   (क) लोगों को अच्छा नहीं लगेगा
   (ख) लोग दुःखी हो जायेंगे।
   (ग) लोग भयभीत हो जायेंगे
   (घ) अपाहिज–गरीबों पर लोग विश्वास नहीं करेंगे। ( )
3. बाबा भारती के घोड़े का नाम था–
   (क) मुल्तान (ख) सुलतान
   (ग) धीरू (घ) वीरू ( )
4. 'बहुत दिनों से अभिलाषा थी, आज उपस्थित हो सका हूँ।' ये शब्द थे–
   (क) ग्रामीण के (ख) बाबा भारती के
   (ग) राहगीर के (घ) खड़गसिंह के ( )

अतिलघूत्तरात्मक प्रश्न–

1. खड़गसिंह ने स्वयं को किसका सौतेला भाई बताया ?
2. 'विचित्र जानवर है देखोगे तो प्रसन्न हो जाओगे।' ये शब्द बाबा भारती ने किसके लिए कहे ?
3. डाकू खड़गसिंह ने किस विधि से बाबा भारती से घोड़ा प्राप्त किया ?
4. बाबा भारती को किस प्रकार की भ्रांति हो गयी थी ?

लघूत्तरात्मक प्रश्न–

1. 'अब कोई गरीबों की सहायता से मुँह न मोड़ेगा।' ये शब्द किसने, किससे तथा क्यों कहे ?
2. बाबा भारती घोड़े की किस प्रकार सेवा करते थे ?
3. घोडे सुलतान को देखकर बाबा भारती को कैसे आनंद की प्राप्ति होती थी ?
4. खड़गसिंह द्वारा छद्म तरीके से घोड़ा प्राप्त करने के तुरन्त बाद की बाबा भारती की दशा का वर्णन करो।

निबंधात्मक प्रश्न–

1. 'हार की जीत' कहानी की कथावस्तु अपने शब्दों में लिखिए।
2. खड़गसिंह तथा बाबा भारती का कुटिया में जो संवाद हुआ उसका वर्णन करो।
3. 'हार की जीत' कहानी का उद्देश्य सविस्तार लिखिए।
4. घोड़ा लौटाने के बाद अगर संयोगवश खड़गसिंह से बाबा मिल जाते तो दोनों में क्या वार्ता होती? कल्पना के आधार पर लिखिए।

व्याख्यात्मक प्रश्न–

1. बाबाजी भी ..... पास न रहने दूँगा।
2. सहसा उन्हें झटका ..... जरा ठहर जाओ।
3. और यह कहते–कहते ..... मनुष्य नहीं देवता है।

*****

अजेय लौहपुरुष सरदार वल्लभभाई पटेल

–सत्यकाम विद्यालंकार

लेखक–परिचय

श्री सत्यकाम जी का जन्म 14 अगस्त 1905 में लाहौर में हुआ था। उन्होंने अनेकानेक विषयों पर लिखा है। सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक आदि सभी विषयों पर लेखक की लेखनी प्रखरता से चली है। सन् 1950 से 1960 तक धर्मयुग का, 1960 से 1962 तक नवनीत का सम्पादन किया था। आपकी प्रतिनिधि रचनाएँ हैं– जीवनसाथी (1948), चरित्र–निर्माण (1948), राष्ट्रपुरुष (1951), सीमा(1957), गीतांजलि (1950), सफल जीवन (1968), वेद पुष्पांजलि (1977), ऋग्वेद संहिता कृति 9 भागों में आदि।

पाठ–परिचय

सत्यकाम विद्यालंकार द्वारा लिखित 'सरदार वल्लभभाई पटेल' से सम्बंधित संकलित अंश जीवनी है। इसमें लेखक ने सरदार पटेल के जन्म विकास, साहस को बड़ी ईमानदारी से पाठकों के समक्ष रखा है। लेखक ने इस अंश में वल्लभभाई पटेल की संघर्षप्रियता, अद्‌भुत सहिष्णुता, सत्याग्रही चेतना को स्पष्ट करते हुए उनके राजनीतिक जीवन का वर्णन भी किया है। पटेल जी कांग्रेस के अध्यक्ष भी रहे और भारत के गृहमंत्री भी। अंग्रेजों ने जब भारत को स्वाधीन किया तब पटेल जी ने साहस के साथ छोटे–छोटे राज्यों को बड़े राज्यों में मिला दिया और विद्रोह करने वाले स्थानों पर सैन्य शक्ति का प्रयोग करके अपनी कुशलता और दूरदर्शिता का परिचय दिया। सम्पूर्ण अंश वल्लभभाई पटेल के जीवन की विविध साहसपूर्ण घटनाओं से परिपूर्ण है। उसमें पर्याप्त सजीवता और स्पष्टता है।

**** ****

भारत को स्वाधीन किसने कराया? इस प्रश्न के उत्तर में शायद सन्देह हो सकता है, क्योंकि भारत को स्वाधीन कराने में बहुत सी शक्तियों का सम्मिलित प्रभाव काम कर रहा था, किन्तु भारत के स्वाधीन हो जाने के बाद लगभग 600 स्वतंत्र देशी राज्यों को भारतीय संघ में सम्मिलित करके देश को एक सुसंगठित राज्य बनाने का श्रेय पूर्णतया सरदार वल्लभभाई पटेल को दिया जा सकता है। और मजे की बात यह है कि इन 600 राज्यों को भारत की केन्द्रीय सत्ता के अधीन करने में हैदराबाद के अतिरिक्त कहीं भी न तो सेना का ही प्रयोग किया गया और न किसी प्रकार का रक्तपात या उपद्रव ही हुआ। हैदराबाद में भी सेना का प्रयोग नाममात्र को हुआ। हताहतों की संख्या बिल्कुल नगण्य रही। यह चमत्कारपूर्ण सफलता सरदार पटेल की दृढ़ता और नीति कुशलता का परिणाम थी। कुछ लोगों ने उन्हें

'भारत का बिस्मार्क' कहा है। किन्तु भारत की विशालता और सरदार पटेल के कार्य की गुरुता को देखते हुए बिस्मार्क की सफलताएँ बहुत छोटी जान पड़ती हैं। पटेल और बिस्मार्क में वही अन्तर था, जो भारत और जर्मनी में है।

सरदार पटेल लौहपुरुष कहे जाते थे। उनका यह विशेषण पूरी तरह सार्थक था। उनके संकल्प में वज्र की सी दृढ़ता थी। जिस काम को कर लेने का वह निश्चय कर लेते थे, वह होकर ही रहता था। वह कम बोलते थे। पर जो कुछ वह बोलते थे, उसके प्रत्येक शब्द में अर्थ होता था। इसीलिए उनका एक एक शब्द ध्यान से सुना जाता था। उनके अनुयायी और उनके विरोधी, दोनों ही उनके शब्दों के सही मूल्य को पहचानते थे।

घटनाओं का चक्र जिस प्रकार चला, उसे देखते हुए कहा जा सकता है कि यदि सरदार पटेल भारत की राजनैतिक संक्रांति के उस अवसर पर न होते, तो भारत स्वाधीन होने के कुछ ही समय बाद बीसियों छोटे–बड़े टुकड़ों में विभक्त हो गया होता। उस दशा में इतने बलिदानों के बाद प्राप्त की गई स्वतन्त्रता का कोई मूल्य न रह जाता। इसे देश का सौभाग्य ही कहना चाहिए कि ऐसे विकट समय में ऐसा सुयोग्य कर्णधार प्राप्त हो सका।

वल्लभभाई का जन्म गुजरात के नादियाड़ ताल्लुके के करमसद गाँव में 31 अक्टूबर, 1875 ई. को हुआ। आपके पिता श्री झवेर भाई एक साधारण किसान थे। वह साहसी, धार्मिक और दयालु स्वभाव के थे। संभवतः 1857 ई. के विद्रोह में वह खेतीबारी छोड़ कर शस्त्र लेकर विद्रोहियों के साथ हो गये थे। विद्रोह असफल रहा। काफी समय तक अपनी जान बचाने के लिए वह एक स्थान से भाग कर दूसरे स्थानों पर जाते रहे। तीन वर्ष पश्चात् जब वह एकाएक अपने गाँव वापस लौटे, तब तक गाँव के लोग उन्हें मृत समझ चुके थे।

साहसी और संघर्ष–प्रिय–

ऐसे साहसी पिता के पुत्र वल्लभभाई में साहस की मात्रा अधिक होनी स्वाभाविक ही थी। इसके साथ ही वल्लभभाई में संगठन की क्षमता भी बचपन से ही थी। जब वह विद्यालय में पढ़ते थे, तब भी वह विद्यार्थियों के साथ होने वाले अन्यायों के विरुद्ध हड़ताल इत्यादि का संगठन करते रहते थे। अध्यापकों के साथ झड़प हो जाने के कारण उन्हें एक दो बार विद्यालय से निकाला भी गया। अन्याय के विरूद्ध संघर्ष करने की प्रवृत्ति आपके रक्त में ही थी।

प्रारंभिक शिक्षा नादियाड़ में समाप्त करने के बाद आप बड़ौदा के हाई स्कूल में प्रविष्ट हो गये। विद्यालय में सरदार पटेल पढ़ाई–लिखाई में बहुत तेज नहीं थे। मैट्रिक में वह बिल्कुल साधारण छात्रों की तरह ही पास हुए। इससे आगे की शिक्षा दिला पाना उनके पिता के वश से बाहर था। इसलिए मैट्रिक पास कर लेने के बाद वल्लभभाई को अपने पाँवों पर खड़ा होने के लिए गोधरा में मुख्तारी का काम शुरू कर देना पड़ा। वह बैरिस्टर बनना चाहते थे। किन्तु जब तक परिस्थितियाँ अनुकूल न हों, तब तक के लिए उन्हें अपनी यह इच्छा मन में ही दबा लेनी पड़ी।

देखा यह गया है कि यदि मनुष्य के मन में कोई तीव्र इच्छा उत्पन्न हो, और वह उसे पूरा करने के लिए कटिबद्ध हो जाए तो पहले पहल असंभव जान पड़ने वाली इच्छा भी पूर्ण होकर ही रहती है। उसकी पूर्ति के साधन अपने आप न जाने कहाँ से जुटते चले आते हैं। कुछ दिन गोधरा में मुख्तारी करने के बाद वल्लभभाई बोरसद चले आये और वहाँ फौजदारी मुकदमों में वकालत करने लगे। विद्यालय में भले ही वल्लभभाई की बुद्धि पढ़ाई–लिखाई में न चमकी, किन्तु वकालत में उन्हें बहुत सफलता प्राप्त हुई।

शीघ्र ही उन्होंने काफी पैसा इकट्ठा कर लिया, इतना कि उससे वह सरलता से विलायत जा सकते थे।

वल्लभभाई का विवाह 18 वर्ष की आयु में ही हो गया था। 1898 ई0 में उनकी पत्नी का असमय में ही स्वर्गवास हो गया। उन दिनों प्लेग फैली थी। प्लेग से बचाने के लिए वल्लभभाई ने उन्हें गाँव में भेज दिया, किन्तु उन्हें प्लेग हो ही गई। काफी इलाज कराने पर उन्हें बचाया न जा सका।

अद्‌भुत सहिष्णुता–

पत्नी की बीमारी की चिंता होते हुए भी वल्लभभाई पहले से स्वीकार किये हुए मुकद्‌मों की पैरवी करने जाते ही रहे। मुवक्किलों को उन्होंने भाग्य के भरोसे नहीं छोड़ा। एक दिन जब वह अदालत में एक मुकद्दमें की पैरवी कर रहे थे, उसी समय उन्हें एक तार मिला, जिसमें उनकी पत्नी की मृत्यु का दुःखद संवाद था। उस तार को पढ़कर उन्होंने जेब में रख लिया और पहले की भांति ही मुकद्दमें की बहस करते रहे। जब शाम को अदालत बन्द हुई, उस समय उन्होंने अपने मित्रों को बताया कि उस तार में उनकी पत्नी के स्वर्गवास का दुःखद समाचार था। विपत्तियों को इसी प्रकार चुपचाप सह लेने की क्षमता ने ही उन्हें 'लौहपुरुष' बनाया था।

उस समय वल्लभभाई की आयु केवल 33 वर्ष थी। उनकी पत्नी दो संतानें एक पुत्र और एक पुत्री छोड़कर मरी थी। वल्लभभाई ने दूसरा विवाह नहीं किया।

इस समय वल्लभभाई के पास पैसा था। उन्होंने विलायत जाने के लिए एक कम्पनी से पत्र–व्यवहार करना शुरू किया। कम्पनी का एक पत्र उनके बड़े भाई विट्ठलभाई पटेल के हाथ पड़ गया। उन्होंने वल्लभभाई से अनुरोध किया–''पहले मुझे इंग्लैण्ड हो आने दो। तुम मेरे बाद चले जाना।'' अपने हृदय की तीव्र इच्छा को दबाकर वल्लभभाई ने यह अनुरोध स्वीकार कर लिया। विट्ठलभाई इंग्लैण्ड चले गये और यथासमय बैरिस्टर बनकर लौट आये।

उसके बाद वल्लभभाई इंग्लैण्ड गये। वह केवल बैरिस्टर बनने के उद्देश्य से इंग्लैण्ड गये थे, इसलिए माँ बाप का पैसा फूँकने वाले अन्य भारतीय छात्रों की भाँति वह इधर–उधर घूमते नहीं फिरे। पढ़ने में उन्होंने ऐसा परिश्रम किया कि वह परीक्षा में सर्वप्रथम रहे। उन्हें पचास पौंड की छात्रवृत्ति मिली और पिछला सारा शुल्क माफ हो गया। बैरिस्टरी पास करते ही आप सीधे भारत लौट आये।

विट्ठलभाई ने बम्बई में वकालत प्रारम्भ की थी और वल्लभभाई ने अहमदाबाद में। कुछ ही दिनों में दोनों भाइयों का नाम वकालत के क्षेत्र में चमक उठा। आय अच्छी हो जाने के कारण दोनों भाई ठाट–बाट से रहने लगे। उन दिनों वल्लभभाई पश्चिमी रहन–सहन को पसन्द करते थे और भारतीय वेशभूषा तथा रहन–सहन की खिल्ली उड़ाया करते थे।

राजनीति में प्रवेश–

काफी धन कमा लेने के बाद विट्ठलभाई का विचार राजनीतिक क्षेत्र में प्रवेश करने का हुआ। दोनों भाइयों में तय हुआ कि बड़े भाई तो राजनीति में भाग लेना शुरू करें और छोटे भाई धनोपार्जन करके घर का खर्च चलाते रहें। विट्ठलभाई कुछ ही समय में राजनीति के क्षेत्र में भी प्रसिद्ध हो गये और 1919 में सुधारों के अनुसार जब केन्द्रीय असेम्बली के चुनाव हुए तो उनमें चुने जाकर आप असेम्बली के सबसे प्रथम अध्यक्ष बने थे। इस अध्यक्ष पद का कार्य आपने इतनी योग्यता से किया था कि उसकी प्रशंसा विदेशी दर्शकों ने भी की थी।

उन्हीं दिनों गाँधीजी ने अफ्रीका से लौटकर भारत की राजनीति में प्रवेश किया था। पहले पहल

वल्लभभाई को गाँधीजी का असहयोग और सत्याग्रह की नीति निकम्मी मालूम पड़ती थी। परन्तु एक बार सम्पर्क में आने के बाद वह गाँधीजी के पक्के भक्त बन गये। 1916 ई. में तो वह बैरिस्टरी को लात मारकर पूरी तरह स्वाधीनता संग्राम में कूद पड़े। उनका और गाँधीजी का यह साथ जीवनभर बना रहा।

पहले पहल गोधरा में एक राजनैतिक सम्मेलन में बेगार प्रथा को हटाने के सम्बन्ध में एक सम्मेलन में गाँधीजी और पटेल का साथ हुआ था। बेगार प्रथा को हटाने के लिए एक समिति बनाई गयी थी। उस कमेटी के मंत्री वल्लभभाई चुने गये थे। पटेल ने कुछ दिनों में बेगार प्रथा को समाप्त करवा दिया।

1918 में खेड़ा जिले में फसलें खराब हो गयी थी। इसलिए वहां के किसानों ने सरकार से लगान माफ कराने की प्रार्थना की थी। किन्तु सरकार ने इस उचित प्रार्थना पर भी बिल्कुल ध्यान नहीं दिया। वल्लभभाई ने किसानों के कष्ट को समझा और उन्हें सत्याग्रह करने की सलाह दी। अन्त में सरकार को किसानों की माँग स्वीकार करनी ही पड़ी।

प्रथम विश्व युद्ध के पश्चात् अंग्रेजों ने भारत में जो दमनचक्र चलाया था, उसका विरोध करने के लिए महात्मा गाँधी ने असहयोग आन्दोलन प्रारम्भ कर दिया था। वल्लभभाई भी गुजरात में असहयोग के काम में जुट गये। उन्होंने अपने बच्चों को भी स्कूल से निकाल लिया, क्योंकि सरकारी स्कूलों का बहिष्कार करना भी असहयोग का एक अंग था। उन्होंने 'गुजरात विद्यापीठ' की स्थापना की और उसके लिए दस लाख रुपया एकत्र किया।

1922 ई0 में चौरीचौरा काण्ड के कारण गाँधीजी ने सत्याग्रह आन्दोलन को स्थगित कर दिया था। सरकार ने गाँधीजी को पकड़कर छः साल के लिए जेल भेज दिया। उनकी अनुपस्थिति में गुजरात में पटेल ही राजनीतिक आन्दोलन का संचालन करते रहे। बोरसद के सत्याग्रह और नागपुर के झंडा–सत्याग्रह में उन्हें पूरी सफलता प्राप्त हुई। 1924 में आप अहमदाबाद नगरपालिका के अध्यक्ष चुने गये। इस पद पर रहकर आप चार साल तक नगर का सुप्रबन्ध करते रहे।

सफल सत्याग्रह–

बारडोली का सत्याग्रह वल्लभभाई की ऐसी सफलता थी, जिसने उन्हें अखिल भारतीय नेताओं में ला खड़ा किया। इस सत्याग्रह में सफलता मिलने के कारण ही वह 'सरदार' कहलाने लगे थे। इस आन्दोलन का कारण यह था कि बारडोली में हर बीस साल बाद भूमि का नया बन्दोबस्त हुआ करता था। 1928 ई. में जब बन्दोबस्त हुआ तो किसानों के लगान में बीस प्रतिशत वृद्धि कर दी गई। किसानों ने इस बात का विरोध किया। पहले ही भूमिकर इतना अधिक था कि किसान उसे दे पाने में असमर्थ थे। यह बढ़ा हुआ भूमिकर तो उनके लिए दे पाना बहुत ही कठिन था।

किसानों ने वल्लभभाई के सामने अपनी कष्ट–कथा कही। उन्होंने कहा–''हम सत्याग्रह करेंगे और बढ़ा हुआ लगान किसी तरह नहीं देंगे।'' वल्लभभाई ने इस सत्याग्रह में आने वाली विपत्तियों का चित्र उनके सामने अच्छी तरह खींच दिया। उन्होंने कहा–''सरकार तुम्हें कुचलने के लिए अपनी सारी ताकत लगा देगी। तुम्हारे घर का सब सामान सिपाही उठा ले जायेंगे। स्त्रियों और बच्चों को भूखों मरना पड़ेगा। अगर तुम इन सबके लिए तैयार हो तो सत्याग्रह से सफलता मिल सकती है।'' जब किसानों ने कहा, वे ये सब कष्ट सहने को तैयार हैं, तो पटेल ने इस सत्याग्रह का नेतृत्व अपने हाथ में ले लिया। इस सत्याग्रह का संगठन पटेल ने इतनी कुशलता से किया कि सरकार को कुछ ही समय में घुटने टेक देने पड़े।

इस आन्दोलन में गुजरात से बाहर के कांग्रेसियों ने सहायता देनी चाही। पर सरदार पटेल अपने काम में किसी भी दूसरे व्यक्ति का हस्तक्षेप पसन्द नहीं करते थे, उन्होंने साफ कह दिया कि बाहरी सहायता की कोई आवश्यकता नहीं है। एक बार वल्लभभाई ने अपनी ओर संकेत करते हुए कहा था– ''बारडोली में केवल एक ही सरदार है, उसकी आज्ञा का पालन सब लोग करते हैं।'' बात सच थी, फिर भी कहीं मजाक में कही गयी थी। तब से ही वह 'सरदार' कहलाने लगे।

सन् 1930 ई0 में गाँधीजी ने दूसरी बार सत्याग्रह आन्दोलन छेड़ दिया। नमक कानून तोड़ने के लिए गाँधीजी ने 'दांडी यात्रा' की और उसके बाद देश में सभी जगह नमक कानून तोड़ा जाने लगा। मोतीलाल नेहरू सत्याग्रह संग्राम के संचालक बनाए गये थे। मोतीलाल जी की गिरफ्तारी के बाद यह भार सरदार पटेल के कन्धों पर डाला गया। पहली अगस्त को लोकमान्य तिलक के जन्म दिवस के उपलक्ष्य में बम्बई में एक विशाल जुलूस निकाला गया। इस संबंध में सरकार ने सरदार पटेल को गिरफ्तार कर लिया। उन्हें तीन मास की सजा हुई।

कांग्रेस के अध्यक्ष–

सरदार पटेल की सेवाओं का सम्मान करते हुए सन् 1931 ई. में हुए कांग्रेस के अधिवेशन का अध्यक्ष आपको ही बनाया गया। उससे अगले वर्ष भी वही कांग्रेस के अध्यक्ष रहे।

सरकार ने गाँधी जी के सत्याग्रह से घबराकर संधि चर्चा की थी और उसके फलस्वरूप गाँधी–इर्विन समझौता हुआ था। परन्तु गोलमेज कॉन्फ्रेंस की असफलता के बाद सरकार ने फिर दमन प्रारम्भ कर दिया। गाँधीजी तथा अन्य प्रमुख नेता जेलों में डाल दिये गये। सरदार पटेल भी गिरफ्तार कर लिए गये। सन् 1934 ई. के अन्त तक वह जेल में ही रहे। जेल से छूटने के बाद उन्हें कांग्रेस पार्लियामेन्टरी बोर्ड का प्रधान बना दिया गया।

सन् 1937 ई. में नये विधान के अनुसार सभी प्रान्तों के चुनावों में कांग्रेस की सफलता के लिए सरदार पटेल ने बहुत कार्य किया। सारे देश में दौरा करके उन्होंने जगह–जगह भाषण दिये। कांग्रेस की सात प्रांतों में भारी बहुमत से विजय हुई। इन प्रान्तों में कांग्रेसी मंत्रिमण्डल बनें और उन्होंने शासन में अनेक सुधार किये। पर सन् 1939 ई. में द्वितीय विश्व युद्ध छिड़ जाने पर ये मंत्रिमण्डल समाप्त हो गये।

भारत के गृहमंत्री–

9 अगस्त, 1942 को बम्बई में 'भारत छोड़ो' प्रस्ताव पास किया गया था। उसी रात अन्य प्रमुख नेताओं के साथ पटेल भी गिरफ्तार कर लिये गये थे। 15 जून, 1945 तक ये सब नेता जेल में ही रहे। उसके बाद सरकार ने समझौता करने के लिए सब नेताओं को छोड दिया। कई महीनों तक कांग्रेस, मुस्लिम लीग और अंग्रेजी सरकार में समझौते की चर्चा चलती रही। अन्त में 2 सितम्बर, 1946 को पहली बार केन्द्र में जनता की लोकप्रिय सरकार बनी, जिसके प्रधानमंत्री श्री जवाहरलाल नेहरू थे। उस अन्तरिम सरकार में सरदार पटेल गृह तथा सूचना विभाग के मंत्री बने।

उसके बाद देश का विभाजन हो गया। 15 अगस्त, 1947 को देश पूर्णतया स्वाधीन हो गया। सरदार पटेल नई राष्ट्रीय सरकार में पहले की भांति गृह तथा सूचना विभाग के मंत्री रहे। साथ ही उन्हें उपप्रधान मंत्री का पद और मिला। देश के विभाजन के समय जो उपद्रव हुए थे, उनमें सरदार पटेल ने अत्यन्त धैर्य और दृढ़ता से काम लिया। इसके फलस्वरूप उपद्रवों की भयंकरता बहुत कम हो गई। अंग्रेजों और मुस्लिम लीग की बहुत सी चालें विफल हो गईं।

देशी राज्यों का विलय–

अंग्रेजों ने जब भारत को स्वाधीन किया तो उन्होंने देशी राज्यों के साथ हुए अपने सब समझौते और सन्धियाँ समाप्त कर दीं। ये राज्य अब अपने भविष्य का निर्णय करने में स्वतंत्र थे। जो देशी राज्य अंग्रेजों के समय उनके पिट्ठू बनकर रहने को तैयार थे, वे अब पूर्ण प्रभुसत्तासम्पन्न राज्य बनने का स्वप्न देखने लगे। केवल भारत में ही इन राज्यों की संख्या 600 के लगभग थी। यदि सचमुच ही ये राज्य उपद्रव पर उतर आते तो भारत सरकार के लिए अच्छी मुसीबत बन जाते। परन्तु सरदार पटेल ने उस समय बड़ी, कुशलता, दूरदर्शिता और दृढ़ता से काम लिया। इनमें से अनेक छोटे–छोटे राज्यों को तो उन्होंने आसपास के बड़े राज्यों में मिला दिया और बहुत से बड़े–बड़े राज्यों को मिलाकर उनमें 'ख' श्रेणी के राज्य बना दिये। ये 'ख' श्रेणी के राज्य भी भारतीय संघ के अंग बन गये। इन राज्यों के राजप्रमुख पुराने राजा या नवाब ही बना दिये गये। हैदराबाद में रजाकारों ने बहुत उत्पात मचाया हुआ था। वहां सरदार पटेल ने सेना भेजकर शांति स्थापित करवा दी और हैदराबाद भी भारतीय संघ में सम्मिलित हो गया।

यह पटेल के जीवन का सबसे महत्त्वपूर्ण कार्य था, जिसके लिए भारत उनका सदा ऋणी रहेगा। जब तक पटेल जीवित रहे, तब तक भारत सरकार सब विषम समस्याओं का बड़ी निश्चिन्तता के साथ सामना करती रही।

कार्य के आधिक्य के कारण सरदार पटेल का स्वास्थ्य खराब रहने लगा। पर्याप्त विश्राम न मिल पाने के कारण चिकित्सा विशेष उपयोगी सिद्ध नहीं हुई। आखिर 15 दिसम्बर 1950 ई0 को उनका स्वर्गवास हो गया।

सरदार पटेल शक्ति के पुंज थे। किन्तु उनकी शक्ति तब तक प्रकट नहीं होती थी, जब तक बाधाएं सामने आकर उन्हें चुनौती नहीं देती थीं। किन्तु बाधा या विपत्ति सामने आने पर वह चट्टान की भांति कठोर और अजेय हो जाते थे। मौलाना शौकतअली ने उन्हें एक बार 'बर्फ से ढका हुआ ज्वालामुखी' कहा था। उनके लिए इससे अच्छी दूसरी उपमा ढूंढ पाना कठिन है।

शब्दार्थ–

वज्र= कठोर/जिस पर प्रभाव न पड़ सके, इन्द्र के वज्र समान,
मुख़्तारी= मुकद्मे लड़ने का काम या पेशा,
संक्रांति= संक्रमण काल,
मुवक्किल= वकील का आसमी,
कॉन्फ्रेन्स = सम्मेलन,
खिल्ली उड़ाना = मजाक बनाना,
बन्दोबस्त= व्यवस्था,
हस्तक्षेप= अनावश्यक दखल

वस्तुनिष्ठ प्रश्न–

1. 'भारत का बिस्मार्क' कहा जाता है–
(क) महात्मा गाँधी को (ख) जवाहर लाल नेहरू को
(ग) वल्लभभाई पटेल को (घ) विट्ठलभाई पटेल को ( )

2. वल्लभभाई पटेल की पत्नी की मृत्यु बीमारी से हुई–
(क) मलेरिया (ख) प्लेग
(ग) हैजा (घ) टाइफाइड ( )

अतिलघूत्तरात्मक प्रश्न–

1. वल्लभभाई पटेल को किस बात का श्रेय दिया जाता है ?
2. वल्लभभाई पटेल का जन्म कब और कहाँ हुआ था ?
3. सरदार पटेल 'लौहपुरुष' क्यों कहे जाते हैं ?
4. अजेय लौहपुरुष की मृत्यु कब हुई ?

लघूत्तरात्मक प्रश्न–

1. सरदार पटेल के 'पिता' की भूमिका को स्पष्ट कीजिए।
2. वल्लभभाई पटेल क्या बनना चाहते थे? क्या वे उस लक्ष्य को प्राप्त कर सके? स्पष्ट कीजिए।
3. वल्लभभाई पटेल और विट्ठलभाई पटेल दोनों भाइयों में बड़ा सामंजस्य था। स्पष्ट कीजिए।

निबंधात्मक प्रश्न–

1. पाठ के आधार पर सरदार वल्लभभाई पटेल की चारित्रिक विशेषताओं का वर्णन कीजिए।
2. सरदार पटेल को 'भारत का बिस्मार्क' क्यों कहा है ?
3. सरदार पटेल की 'अद्‌भुत सहिष्णुता' को उदाहरणों द्वारा स्पष्ट कीजिए।
4. राजनीति में प्रवेश से लेकर भारत के गृहमंत्री बनने तक की पटेल की जीवन यात्रा को अपने शब्दों में लिखिए।
5. देशी राज्यों के विलय में वल्लभभाई पटेल की क्या भूमिका रही? सविस्तार उल्लेख कीजिए।
6. वल्लभभाई पटेल 'सरदार' कैसे बने? स्पष्ट कीजिए।

व्याख्यात्मक प्रश्न–

1. सरदार पटेल ..... को पहचानते थे।
2. देखा यह गया ..... जा सकते थे।
3. उसके बाद .....लौट आये।
4. इस आंदोलन में ..... कहलाने लगे।
5. सरदार पटेल ..... पाना कठिन है।

*****

शिवाजी का सच्चा स्वरूप

–सेठ गोविन्ददास

लेखक–परिचय

सेठ गोविन्ददास का जन्म सन् 1896 ई. में जबलपुर के कृष्ण भक्त प्रतिष्ठित वैश्य परिवार में हुआ था। आधुनिक एकांकीकारों में सेठ गोविन्ददास का एक बहुत ही महत्त्वपूर्ण स्थान है। ऐतिहासिक कथानकों के चयन के अतिरिक्त, समाज की तत्कालीन समस्याओं का अंकन उनके नाटकों एवं एकांकियों में हुआ है।

कला की दृष्टि से, आपके नाटक विविध–दृश्य वाले हैं, फिर भी एक ही दृश्य वाले कई एकांकी उनकी लेखनी से प्रसूत हुये हैं। इस कारण उन्होंने संकलन–त्रय की योजना को आवश्यक नहीं माना है। तथापि एकांकी शिल्प की दृष्टि से सेठजी के एकांकी हिन्दी साहित्य को एक देन ही नहीं हैं, वरन् वे स्वयं में एक युग के प्रतीक भी हैं। रचनाएँ– सप्त रश्मि (1940 ई.), एकादशी (1942 ई॰), में एकांकी प्रकाशित हुए हैं, इनके चतुष्पथ एवं पंचभूत एकांकी संग्रह है। ये इतिवृत्तात्मक है।

पाठ–परिचय

प्रस्तुत एकांकी शिवाजी के उदात्त चरित्र को प्रस्तुत करता है जिसके कारण शिवाजी जैसे वीर राष्ट्र के आदर्श पुरुष के रूप में प्रतिष्ठित हैं। उनका सेनापति उस समय की राजनीति किंवा दुष्ट–नीति के प्रवाह में आकर 'जैसे को तैसा' के रूप में बदला लेने के उद्देश्य से 'कल्याण–विजय' के उपरान्त धन–धान्य के साथ कल्याण के सूबेदार 'अहमद' की पुत्रवधू को भी बन्दी रूप में लाकर शिवाजी को तोहफे की तरह प्रस्तुत करता हैं तब शिवाजी का क्रोध उनकी संपूर्ण मानवीय गरिमा के साथ प्रकट हुआ। भारतीय आदर्श के अनुसार नारी मात्र को माँ के रूप में देखने का चरित्र शिवाजी के चरित्र को उदात्तता प्रदान करता है। वे अपनी सेना के सरदारों को चेतावनी देते हैं कि भविष्य में कोई भी सैनिक या सरदार यदि किसी नारी का अपमान करने का विचार भी मन में लाएगा तो उसका सिर धड़ से अलग कर दिया जाएगा। अहमद की पुत्रवधू को सम्पूर्ण सम्मान के साथ उसके पति के पास भिजवा दिया जाता है। यह एकांकी शिवाजी के चरित्र एवं शील का वह उज्ज्वल रूप प्रस्तुत करता है, जिसके कारण हम उन्हें आदर्श राष्ट्र–नायक के रूप में अपने हृदय में धारण करते हैं।

**** ****

पात्र शिवाजी – प्रसिद्ध मराठा वीर
मोरोपंत पिंगलें – पेशवा
आवाजी सोनदेव – शिवाजी का एक सेनापति
स्थान राजगढ़ दुर्ग का एक दालान
समय सन् 1648 ई0 संध्या।

(दाहिने ओर दालान का कुछ हिस्सा दिखाई देता है। दालान की छत पत्थर के खम्भों पर टिकी है। उसके पीछे की दीवाल भी पत्थर की है। दालान के पीछे की ओर दाहिनी ओर, दूर पर, गढ़ की फसील और कुछ बुर्जियाँ दीख पड़ती हैं। बायीं तरफ सह्याद्रि पर्वत–माला की शिखरावली दृष्टिगोचर होती हैं। कुछ शिखरों की ओट में सूर्य अस्त हो रहा है, जिसके प्रकाश से सारा दृश्य आलोकित है। दालान के सामने किले का खुला मैदान है। मैदान में एक ऊँचे स्तम्भ पर मराठा झंडा फहरा रहा है। दालान में जाजम बिछी है, उस पर कीमख्याब की गद्दी पर मसनद के सहारे शिवाजी वीरासन में किसी विचार में मग्न हैं। उनके स्वरूप और वेशभूषा के सम्बन्ध में कुछ भी लिखना इसलिए निरर्थक है, कि एक भी भारतीय ऐसा नहीं जो उससे परिचित न हो, दालान के बाहर शस्त्रों से सुसज्जित दो मावली, शरीर–रक्षक खड़े हुए हैं। बायीं ओर से मोरोपंत पिंगले का प्रवेश। मोरोपंत अधेड़ अवस्था का गेहुँए वर्ण का ऊँचा पूरा व्यक्ति हैं। वेशभूषा शिवाजी से मिलती–जुलती है, केवल सिर की पगड़ी में अन्तर है। मोरोपंत की पगड़ी शिवाजी की पगड़ी के सदृश मुगल ढ़ंग की न होकर मराठी तर्ज की है, उसके मस्तक पर त्रिपुण्ड भी है।)

मोरोपंत – (अभिवादन कर) श्रीमंत सरकार, सेनापति आवाजी सोनदेव कल्याण प्रान्त को जीत, वहाँ का सारा खज़ाना लूटकर आ गये हैं।

शिवाजी – (चौंककर) अच्छा। (मोरोपंत की ओर देखकर) बैठो पेशवा, बड़ा शुभ संवाद लाये। आवाजी सोनदेव है कहाँ ?

मोरोपंत – (वीरासन में बैठकर) श्रीमंत की सेवा में अभी उपस्थित हो रहे हैं।
(कुछ देर निस्तब्धता। शिवाजी और मोरोपंत दोनों उत्सुकता से बायीं ओर देखते हैं। कुछ ही देर में आवाजी सोनदेव बायीं ओर से आता हुआ दिखाई देता है। उसके पीछे हम्मालों का एक बड़ा भारी झुण्ड है। हर हम्माल के सिर पर एक हारा (बड़ा भारी टोकरा) है। हम्मालों के झुण्ड के पीछे एक पालकी है। पालकी बन्द है। आवाजी सोनदेव भी अधेड़ अवस्था का ऊँचा – पूरा मनुष्य है। वेशभूषा मोरोपंत के सदृश है। आवाजी सोनदेव दालान में आकर शिवाजी का अभिवादन करता है। हम्मालों का झुण्ड और पालकी दालान के बाहर रहते हैं)

शिवाजी – बैठो, आवाजी, 'कल्याण–विजय' पर तुम्हें बधाई है।

आवाजी सोनदेन – (बैठते हुए) बधाई है श्रीमंत सरकार को।

शिवाजी – कहो पैदल मावलियों ने अधिक वीरता दिखायी या हेटकरियों ने।

आवाजी सोनदेव – दोनों ने ही श्रीमंत सरकार।

शिवाजी – और घुड़सवारों में बारगिरों ने या शिलेदारों ने?

आवाजी सोनदेन – इनमें भी दोनों ने ही श्रीमंत।

शिवाजी – सेना के अधिपति कैसे रहे ?

आवाजी सोनदेव – पैदल के अधिपति – नायक, हवलदार, जुमलादार और एकहजारी तथा घुड़सवारों

के अधिपति–हवलदार, जुमलादार और सूबेदार, सभी का काम प्रशंसनीय रहा, श्रीमंत सरकार।

शिवाजी – (हम्माल की ओर देखकर मुस्कराते हुए) कल्याण का खजाना भी लूट लाये, बहुत माल मिला?

आवाजी सोनदेन – हाँ श्रीमंत, सारा खजाना लूट लिया गया और इतना माल मिला जितना अब तक की किसी भी लूट में न मिला था। चाँदी, सोना, जवाहरात न जाने क्या–क्या मिला। मैं तो समझता हूँ, श्रीमंत केवल दक्षिण ही नहीं उत्तर की भी विजय इस सम्पदा से हो सकेगी।

शिवाजी – (हम्मालों के पीछे पालकी को देखकर) और उस मेणा में क्या है ?

आवाजी सोनदेव – (मुस्कराते हुए) उस मेणा..... उस मेणा में श्रीमंत इस विजय का सबसे बड़ा तोहफा है।

शिवाजी – (उत्सुकता से आवाजी सोनदेव की ओर देखते हुए) अर्थात् ?

आवाजी सोनदेव – श्रीमंत, कल्याण के सूबेदार अहमद की पुत्र–वधू के सौंदर्य का वृत्त कौन नहीं जानता? उसे भी श्रीमन्त की सेवा के लिए बन्दी करके लाया हूँ।

(शिवाजी की सारी प्रसन्नता एकाएक लुप्त हो जाती है। उनकी भृकुटि चढ़ जाती है और नीचे का ओठ ऊपर के दाँतों के नीचे आ जाता है। आवाजी सोनदेव शिवाजी की परिवर्तित मुद्रा देखकर घबरा–सा जाता है। मोरोपंत एकटक शिवाजी की ओर देखता है। कुछ देर निस्तब्धता रहती है।)

शिवाजी – (भर्राये हुए स्वर में) मेणा को तत्काल इस पड़वी में लाओ।

(आवाजी सोनदेव जल्दी से दालान के बाहर जाता है। शिवाजी एकटक पालकी की ओर देखते हैं, मोरोपंत शिवाजी की तरफ। कुछ ही क्षणों में पालकी दालान में आती है। ज्योंही दालान में रखी जाती है त्योंही शिवाजी जल्दी से पालकी के निकट पहुँचते हैं। मोरोपंत शिवाजी के पीछे जाता है।)

शिवाजी – (आवाजी सोनदेव से) खोल दो मेणा, आवाजी !

(आवाजी सोनदेव पालकी के दरवाजे खोलता है। दरवाजे खुलते ही अहमद की पुत्र–वधू उसमें से निकल चुपचाप एक ओर सिकुड़कर खड़ी हो जाती है। वह परम सुन्दरी युवती है। वेशभूषा मुगल स्त्रियों के सदृश।

शिवाजी – (अहमद की पुत्र – वधू से) माँ, शिवा अपने सिपहसालार की इस नामाकूल हरकत पर आपसे मुआफी चाहता है। आह! कैसी अजीबो–गरीब खूबसूरती है आपकी। आपको देखकर मेरे दिल में एक..... सिर्फ एक बात उठ रही है– कहीं मेरी माँ में आपकी सी खूबसूरती होती तो मैं भी बदसूरत न होकर एक खूबसूरत शख्स होता। माँ आपकी खूबसूरती को मैं एक ..... सिर्फ एक काम में ला सकता हूँ – उसका हिन्दू–विधि से पूजन करूँ, उसकी इस्लामी तरीके से इबादत करूँ। आप जरा भी परेशान न हों। माँ, आपको आराम, इज्जत, हिफाजत और खबरदारी के साथ आपके शौहर के पास पहुँचा दिया जाएगा, बिना देरी के फौरन ! (आवाजी सोनदेव की ओर घूमकर) आवाजी, तुमने ऐसा काम किया है जो कदाचित् क्षमा नहीं किया जा सकता शिवा को निकट से जानते हुए, तुम्हारा साहस ऐसा घृणित कार्य करने

के लिए कैसे हुआ ? शिवा ने आज पर्यन्त किसी मसजिद की दीवाल में बाल बराबर दरार भी न आने दी। शिवा को यदि कहीं कुरान की पुस्तक मिली तो उसने सिर पर चढ़ा, उसके एक पन्ने को भी किसी प्रकार की क्षति पहुँचाये बिना, मौलवी साहब की सेवा में भेज दिया। हिन्दू होते हुए भी शिवा के लिए इस्लाम–धर्म पूज्य है। इस्लाम के पवित्र स्थान, उसके पवित्र ग्रंथ, सम्मान की वस्तुएँ हैं। शिवा हिन्दू और मुसलमान प्रजा में कोई भेद नहीं समझता। अरे ! उसकी सेना में मुस्लिम सैनिक तक हैं। वह देश में सच्चे स्वराज्य की स्थापना चाहता है। आततताइयों से सत्ता का अपहरण कर उदारचेताओं के हाथों में अधिकार देना चाहता है। फिर, पर – स्त्री ? अरे! पर–स्त्री तो हरेक के लिए माता के समान है। जो अधिकार प्राप्त जन हैं, जो सरदार हैं, या राजा, उन्हें,.....उन्हें तो इस सम्बन्ध में विवेक, सबसे अधिक विवेक रखना आवश्यक है। (कुछ रुककर) आवाजी, क्या तुम मेरी परीक्षा लेना चाहते थे ? इसीलिए तो तुमने यह कृति नहीं की ? शिवा ये लड़ाई – झगड़े, ये लूट–पाट क्या व्यक्तिगत सुखों के लिए कर रहा है ? क्या स्वयं चैन उड़ाना उसका उद्देश्य है ? तब.....तब तो ये रक्त–पात, ये लूट–मार घृणित, अत्यन्त घृणित कृतियाँ है। शिवा में यदि शील नहीं तो उसके सेनापतियों, सरदारों को शील का स्पर्श तक नहीं हो सकता। फिर तो हम में ओर इन्द्रिय – लोलुप लुटेरों तथा डाकुओं में कोई अंतर ही नहीं रह जाता। अरे, तब तो हमारे जीवन से हमारी मृत्यु, हमारी विजय से हमारी पराजय, कहीं श्रेयस्कर है। (मोरोपंत से) आह! पेशवा, यह..... यह मेरे ..... मेरे एक सेनापति ने ..... मेरे एक सेनापति ने क्या ..... क्या कर डाला? लज्जा से मेरा सिर आज पृथ्वी में नहीं, पाताल में घुसा जाता है। इस पाप का न जाने मुझे कैसा..... कैसा प्रायश्चित करना पड़ेगा ? (कुछ रुककर) पेशवा, इस समय तो मैं केवल एक घोषणा करता हूँ – भविष्य में अगर कोई ऐसा करेगा तो उसका सिर उसी समय धड़ से जुदा कर दिया जायगा।

(शिवाजी का सिर नीचे झुक जाता है। अहमद की पुत्र–वधू कनखियों से शिवाजी की ओर देखती है। उसकी आँखों में आँसू छलछला आते हैं। मोरोपंत शिवाजी की तरफ देखता है और आवाजी सोनदेव घबराहट भरी दृष्टि से मोरोपंत की ओर।

शब्दार्थ–

फसील– दीवार / परकोटा; बुर्जियाँ–मीनारें; नामाकूल– नासमझ;

लोलुप– लालची; निस्तब्धता– शान्ति; आतातताइयों– अत्याचारियों;

कनखियों से–तिरछी नजर से; मेणा–पालकी;, घृणित– निन्दनीय;

कृतियाँ– कार्य;

मावली– शिवाजी की सेना के पहाड़ी (वीज जाति) सैनिक।

वस्तुनिष्ठ प्रश्न–

1. शिवाजी की माता का नाम था –
   (क) जोधा बाई (ख) जया बाई
   (ग) जयन्ता बाई (घ) जीजा बाई ( )
2. हम्मालों के पीछे जो मेणा (पालकी) थी उसमें क्या था ?
   (क) सूबेदार अहमद (ख) सूबेदार अहमद की दासी
   (ग) धन–दौलत (घ) सूबेदार अहमद की पुत्र–वधू ( )
3. सेनापति आवाजी सोनदेव ने कौनसे प्रांत को जीता था ?
   (क) दादर (ख) नासिक (ग) पूणे (घ) कल्याण ( )
4. शिवाजी का सेनापति कौन था ?
   (क) महादेव (ख) रामदेव
   (ग) आवाजी सोनदेव (घ) आवाजी ज्ञानदेव ( )

अतिलघूत्तरात्मक प्रश्न–

1. शिवाजी के पेशवा का क्या नाम था ?
2. शिवाजी के राज्य की राजधानी कौन सी थी ?
3. शिवाजी..... बैठो पेशवा बड़ा शुभ संवाद लाये। कौनसा शुभ संवाद था और कौन लेकर आये?
4. कल्याण के खजाने से क्या क्या माल लूट कर सेनापति लाये ?
5. शिवाजी के पर स्त्री के प्रति क्या विचार थे ?
6. कल्याण–विजय अभियान में वीरता दिखाने वाले कौन–कौन थे ?
7. कल्याण–विजय के संवाद के बाद एकाएक शिवाजी की प्रसन्नता क्यों लुप्त हो गई ?
8. शिवाजी ने अहमद की पुत्रवधू से प्रथम वाक्य क्या कहा था ?
9. शिवाजी महाराष्ट्र में कैसे राज्य की स्थापना करना चाहते थे ?
10. सेनापति आवाजी सोनदेव के कृत्य पर सेनापति से शिवाजी ने क्या कहा ?

लघूत्तरात्मक प्रश्न–

1. आवाजी सोनदेव शिवाजी को सबसे बड़ा तोहफा क्या देना चाहते थे और क्यों ?
2. कल्याण विजय अभियान में शिवाजी की सेना के अधिपति कैसे थे ?
3. शिवाजी के पश्चाताप पूर्ण उद्‌गार सुनने के बाद अहमद की पुत्रवधू की क्या प्रतिक्रिया रही ?
4. 'पर स्त्री तो हरेक के लिए माता समान है।' ये शब्द किसने किससे और क्यों कहे ? इस कथन के महत्त्व पर प्रकाश डालिए।
5. शिवाजी एकांकी के अंत में प्रायश्चित–स्वरूप क्या घोषणा करते है ? लिखिए।
6. शिवाजी ने स्वयं के चरित्र को लेकर चरित्र सम्बन्धी कौनसे विचार व्यक्त किये?
7. शिवाजी का सच्चा स्वरुप एकांकी का नैतिक दृष्टि से क्या मूल्य है ? अपने शब्दों में लिखिए।

निबंधात्मक प्रश्न–

1. शिवाजी का सच्चा स्वरूप एकांकी में निहित एकांकीकार के उद्देश्य को स्पष्ट कीजिए।
2. 'हिन्दू होते हुए भी शिवा के लिए इस्लाम–धर्म पूज्य है' उक्ति के आधार पर शिवाजी का चरित्र–चित्रण कीजिए।
3. शिवाजी का सच्चा स्वरूप एकांकी का सार अपने शब्दों में लिखिए।
4. हमारे जीवन से हमारी मृत्यु विजय से हमारी पराजय कहीं श्रेयस्कर है। शिवाजी के इस कथन से क्या शिक्षा मिलती है ? लिखिए।
5. 'शिवाजी का सच्चा स्वरूप' एकांकी की वर्तमान में प्रासंगिकता तर्क के आधार पर प्रतिपादित कीजिए।

व्याख्यात्मक प्रश्न–

1. दालान के पीछे ..... मग्न है।
2. माँ, शिवा अपने ..... बिना देरी के फौरन।
3. जो अधिकार प्राप्त जन ..... अन्तर ही नही रह जाता।

*****

निराला भाई

–महादेवी वर्मा

लेखक–परिचय

कवयित्री, गद्यकार और चित्रकार महीयसी महादेवी वर्मा का जन्म सन् 1907 ई. को उत्तरप्रदेश के फर्रूखाबाद में हुआ। उनके 'स्मृति की रेखाएँ (1943), शृंखला की कड़ियाँ (1950) एवं पथ के साथी (1954) संस्मरणात्मक गद्य बहुत प्रसिद्ध हैं। 'पथ के साथी' में उनके साहित्यिक जीवन के साथियों पन्त, निराला, गुप्त, सुभद्रा कुमारी चौहान से संबंधित संस्मरण संकलित हैं। महादेवी वर्मा का काव्य जितना हृदय पटल पर अंकित होता है उतना ही उनका गद्य भी कवित्वपूर्ण, संवेदनात्मक और प्रवाहपूर्ण है। महादेवी वर्मा सहृदया थीं। इनकी सहृदयता सम्पूर्ण साहित्य में झलकती है। अपनी संवेदना को कवित्वपूर्ण शैली के माध्यम से मूर्त रूप देने में उन्हें विशेष कौशल प्राप्त है।

पाठ–परिचय

महादेवी वर्मा और निराला दोनों ही छायावादी काव्यधारा के प्रमुख स्तम्भ थे। महादेवी वर्मा ने निराला को अपना भाई बना लिया था। प्रस्तुत संस्मरण में महादेवी वर्मा ने निराला के औघड़ व्यक्तित्व के विभिन्न पहलुओं को उभारा है। महादेवी की दृष्टि में निराला का व्यक्तित्व अव्यवस्थित था, लेकिन उनमें किसी प्रकार का दिखावा और संकीर्णता नहीं थी। निराला अपने नाम के अनुकूल ही थे। बिल्कुल ही निराले, मस्तमौला, महान और प्रखर व्यक्तित्व के धनी थे। प्रखरता उनके व्यक्तित्व का स्थायी रूप था।

**** ****

एक युग बीत जाने पर भी मेरी स्मृति से एक घटा भरी अश्रुमुखी सावनी पूर्णिमा की रेखाएँ नहीं मिट सकी हैं। उन रेखाओं के उजले रंग न जाने किस व्यथा से गीले हैं कि अब तक सूख भी नहीं पाये, उड़ना तो दूर की बात है।

उस दिन मैं बिना कुछ सोचे हुए ही भाई निरालाजी से पूछ बैठी थी–''आप के किसी ने राखी नहीं बाँधी?'' अवश्य ही उस समय मेरे सामने उनकी बंधनशून्य कलाई और पीले कच्चे सूत की ढेरों राखियाँ लेकर घूमने वाले यजमान–खोजियों का चित्र था। पर अपने प्रश्न के उत्तर ने मुझे क्षण–भर के लिए चौंका दिया।

''कौन बहिन हम ऐसे भुक्खड़ को भाई बनावेगी!'' में उत्तर देने वाले के एकाकी जीवन की व्यथा

थी या चुनौती, यह कहना कठिन है। पर जान पड़ता है कि किसी अव्यक्त चुनौती के आभास ने ही मुझे उस हाथ के अभिषेक की प्रेरणा दी, जिसने दिव्य वर्ण–गंध मधु वाले गीत–सुमनों से भारती की अर्चना भी की है और बर्तन मांजने, पानी भरने जैसी कठिन श्रम–साधना से उत्पन्न स्वेद–बिन्दुओं से मिट्टी का शृंगार भी किया है।

मेरा प्रयास किसी भी जीवंत बवण्डर को कच्चे सूत में बाँधने जैसा था या किसी उच्छल महानद को मोम के तटों में सीमित करने के समान, यह सोचने–विचारने का तब अवकाश नहीं था। पर आने वाले वर्ष निरालाजी के संघर्ष के ही नहीं, मेरी परीक्षा के भी रहे हैं। मैं किस सीमा तक सफल हो सकी हूँ, यह मुझे ज्ञात नहीं; पर लौकिक–दृष्टि से निःस्व निराला हृदय की निधियों में सबसे समृद्ध भाई हैं, यह स्वीकार करने में मुझे द्विविधा नहीं। उन्होंने अपने सहज विश्वास से मेरे कच्चे सूत के बंधन को जो दृढ़ता और दीप्ति दी है वह अन्यत्र दुर्लभ रहेगी।

दिन–रात के पगों से वर्षों की सीमा पार करने वाले अतीत ने आग के अक्षरों में आँसू के रंग भर–भरकर ऐसी अनेक चित्र–कथाएँ आँक डाली हैं, जितनी इस महान् कवि और असाधारण मानव के जीवन की मार्मिक झाँकी मिल सकती है। पर उन सबको सम्भाल सके ऐसा एक चित्राधार पा लेना सहज नहीं।

उनके अस्त–व्यस्त जीवन को व्यवस्थित करने के असफल प्रयासों का स्मरण कर मुझे आज भी हँसी आ जाती है। एक बार अपनी निर्बंध उदारता की तीव्र आलोचना सुनने के बाद उन्होंने व्यवस्थित रहने का वचन दिया।

संयोग से तभी उन्हें कहीं से तीन सौ रुपये मिल गये। वही पूँजी मेरे पास जमा करके उन्होंने मुझे अपने खर्च का बजट बना देने का आदेश दिया।

जिन्हें मेरा व्यक्तिगत हिसाब रखना पड़ता है, वे जानते हैं कि यह कार्य मेरे लिए कितना दुष्कर है। न वे मेरी चादर लम्बी कर पाते हैं न मुझे पैर सिकोड़ने पर बाध्य कर सकते हैं; और इस प्रकार एक विचित्र रस्साकशी में तीस दिन बीतते रहते हैं।

पर यदि अनुत्तीर्ण परीक्षार्थियों की प्रतियोगिता हो तो सौ में से दस अंक पाने वाला भी अपने–आपको शून्य पाने वाले से श्रेष्ठ मानेगा।

अस्तु, नमक से लेकर नापित तक और चप्पल से लेकर मकान के किराये तक का जो अनुमान–पत्र मैंने बनाया वह जब निरालाजी को पसन्द आ गया, तब पहली बार मुझे अपने अर्थशास्त्र के ज्ञान पर गर्व हुआ। पर दूसरे ही दिन से मेरे गर्व की व्यर्थता सिद्ध होने लगी। वे सवेरे ही पहुँचे। पचास रुपये चाहिए..... किसी विद्यार्थी का परीक्षा–शुल्क जमा करना है, अन्यथा वह परीक्षा में नहीं बैठ सकेगा। संध्या होते–होते किसी साहित्यिक मित्र को साठ देने की आवश्यकता पड़ गयी। दूसरे दिन लखनऊ के किसी तांगे वाले की माँ को चालीस मनीआर्डर करना पड़ा। दोपहर को किसी दिवंगत मित्र की भतीजी के विवाह के लिए सौ देना अनिवार्य हो गया। सारांश यह कि तीसरे दिन उनका जमा किया हुआ रुपया समाप्त हो गया और तब उनके व्यवस्थापक के नाते यह दान–खाता मेरे हिस्से आ पड़ा।

एक सप्ताह में मैंने समझ लिया कि यदि ऐसे औढर दानी को न रोका जावे तो यह मुझे भी अपनी स्थिति में पहुँचाकर दम लेंगे। तब से फिर कभी उनका बजट बनाने का दुस्साहस मैंने नहीं किया। पर उनकी अस्त–व्यस्तता में बाधा पहुँचाने का अपना स्वभाव मैं अब तक नहीं बदल सकी हूँ।

बड़े प्रयत्न से बनवाई रजाई, कोट जैसी नित्य व्यवहार की वस्तुएँ भी जब दूसरे ही दिन किसी अन्य का कष्ट दूर करने के लिए अन्तर्धान हो गयी तब अर्थ के सम्बन्ध में क्या कहा जावे, जो साधन

मात्र है।

वह संध्या भी मेरी स्मृति में विशेष महत्त्व रखती है जब श्रद्धेय मैथिलीशरण जी निरालाजी का आतिथ्य ग्रहण करने गये।

बगल में गुप्तजी के बिछौने का बण्डल दबाये; दियासलाई के क्षण प्रकाश अंधकार में तंग सीढ़ियों का मार्ग दिखाते हुए निरालाजी हमें उस कक्ष में ले गये जो उनकी कठोर साहित्य–साधना का मूक साक्षी रहा है।

आले पर कपड़े की आधी जली बत्ती से भरा, पर तेल से खाली मिट्टी का दीया मानो अपने नाम की सार्थकता के लिए उठने का प्रयास कर रहा था। यदि उसके प्रयास को स्वर मिल सकता तो वह निश्चय ही हमें, मिट्टी के तेल की दुकान पर लगी भीड़ में सबसे पीछे खड़े, पर सबसे बालिश्त भर ऊँचे गृह–स्वामी की दीर्घ पर निष्फल प्रतीक्षा की कहानी सुना सकता। रसोईघर में दो–तीन अधजली लकड़ियाँ, औंधी पड़ी बटलोई और खूँटी से लटकती हुई आटे की छोटी–सी गठरी आदि मानो उपवास–चिकित्सा के लाभों की व्याख्या कर रहे थे।

वह आलोकरहित, सुख–सुविधा–शून्य घर, गृहस्वामी के विशाल आकार और उससे भी विशालतर आत्मीयता से भरा हुआ था। अपने सम्बन्ध में बेसुध निरालाजी अपने अतिथि की सुविधा के लिए सतर्क प्रहरी हैं। वैष्णव अतिथि की सुविधा का विचार कर वे नया घड़ा खरीद कर गंगाजल ले आये और धोती–चादर जो कुछ घर में मिल सका सब तख्त पर बिछाकर उन्हें प्रतिष्ठित किया।

तारों की छाया में उन दोनों मर्यादावादी और विद्रोही महाकवियों ने क्या कहा–सुना, यह मुझे ज्ञात नहीं, पर सवेरे गुप्तजी को ट्रेन में बैठाकर वे मुझे उनके सुख–शयन का समाचार देना न भूले।

ऐसे अवसरों की कमी नहीं जब वे अकस्मात् पहुँचकर कहने लगे–मेरे इक्के पर कुछ लकड़ियाँ, थोड़ा घी आदि रखवा दो। अतिथि आये हैं, घर में सामान नहीं है।

उनके अतिथि यहाँ भोजन करने आ जावें, सुनकर उनकी दृष्टि में बालकों जैसा विस्मय छलक आता है। जो अपना घर समझकर आये हैं, उनसे यह कैसे कहा जावे कि उन्हें भोजन के लिए दूसरे घर जाना होगा।

भोजन बनाने से लेकर जूठे बर्तन माँजने तक का काम वे अपने अतिथि देवता के लिए सहर्ष करते हैं। तैंतीस कोटि देवताओं के देश में इस वर्ग के देवताओं की संख्या कम नहीं, पर आधुनिक युग में उनकी पूजा–विधि में बहुत कुछ सुधार कर लिया है। अब अतिथि–पूजा के पर्व कम ही आते हैं और यदि आ भी पड़े तो देवता के अभिषेक, शृंगार आदि संस्कार बेयरा, नौकर आदि ही सम्पन्न करा देते हैं। पुजारी गृहपति को तो भोग लगाने की मेज पर उपस्थित रहने भर का कर्तव्य सम्भालना पड़ता है। कुछ देवता इस कर्तव्य से भी मुक्ति देते हैं।

ऐसे युग में आतिथ्य की दृष्टि से निरालाजी में वही पुरातन संस्कार है जो इस देश के ग्रामीण किसान में मिलता है।

उनके भाव की अतल गहराई और अबाध वेग भी आधुनिक सभ्यता के छिछले और भद्दे भाव–व्यापार से भिन्न है।

उनकी व्यथा की सघनता जानने का मुझे एक अवसर मिला है। श्री सुमित्रानन्दनजी दिल्ली में टाइफाइड ज्वर से पीड़ित थे। इसी बीच घटित को साधारण और अघटित को समाचार मानने वाले किसी समाचार–पत्र ने उनके स्वर्गवास की झूठी खबर छाप डाली।

निरालाजी कुछ ऐसे आकस्मिकता के साथ आ पहुँचे थे कि मैं उनसे यह समाचार छिपाने का

भी अवकाश न पा सकी। समाचार के सत्य में मुझे विश्वास नहीं था, पर निरालाजी तो ऐसे अवसर पर तर्क की शक्ति ही खो बैठते हैं। लड़खड़ाकर सोफे पर बैठ गये और किसी अव्यक्त वेदना की तरंग के स्पर्श से मानो पाषाण में परिवर्तित होने लगे। उनकी झुकी पलकों से घुटनों पर चूने वाली आँसू की बूँदें बीच में ऐसे चमक जाती थीं मानों प्रतिमा से झड़े जूही के फूल हों।

स्वयं अस्थिर होने पर भी मुझे निरालाजी को सांत्वना देने के लिए स्थिर होना पड़ा। यह सुनकर कि मैंने ठीक समाचार जानने के लिए तार दिया है, वे व्यथित प्रतीक्षा की मुद्रा में तब तक बैठे रहे जब तक रात में मेरा फाटक बन्द होने का समय न आ गया।

सवेरे चार बजे ही फाटक खट–खटाकर जब उन्होंने तार के उत्तर के सम्बन्ध में पूछा तब मुझे ज्ञात हुआ कि वे रात भर पार्क में खुले आकाश के नीचे ओस से भीगी दूब पर बैठे सवेरे की प्रतीक्षा करते रहे हैं। उनकी निस्तब्ध पीड़ा जब कुछ मुखर हो सकी, तब वे इतना ही कह सके, अब हम भी गिरते हैं। पंत के साथ तो रास्ता कम अखरता था, पर अब सोचकर ही थकावट होती है।

प्रायः एक स्पर्धा का तार हमारे सौहार्द के फूलों को बेंध कर उन्हें एकत्र रखता है। फूल के झड़ते या खिसकते ही काला तार मात्र रह जाता है। इसी से हमें किसी सहयोगी का विछोह अकेलेपन की तीव्र अनुभूति नहीं देता। निरालाजी के सौहार्द और विरोध दोनों एक आत्मीयता के वृंत पर खिले दो फूल हैं। खिलकर वृंत का शृंगार करते हैं और झड़कर उसे अकेला और सूना कर देते हैं। मित्र का तो प्रश्न ही क्या, ऐसा कोई विरोधी भी नहीं जिसका अभाव उन्हें विकल न कर देगा।

गत मई मास की लपटों में साँस लेने वाली दोपहरी भी मेरी स्मृति पर एक जलती रेखा खींच गयी है। शरीर में शिथिल और मन से क्लांत निरालाजी मलिन फटे अधोवस्त्र को लपेटे और वैसा ही जीर्ण–शीर्ण उत्तरीय ओढ़े धूलि–धूसरित पैरों के साथ मेरे द्वार पर आ उपस्थित हुए। ''अपरा'' पर इक्कीस सौ के पुरस्कार की सूचना मिलने पर उन्होंने मुझे लिखा था कि मैं अपनी सांस्थिक मर्यादा से वह रुपया मँगवा लूँ। अब वे कहने आये थे कि स्वर्गीय मुंशी नवजादिक लाल की विधवा को पचास प्रति मास के हिसाब से भेजने का प्रबन्ध कर दिया जावे।

''उक्त धन का कुछ अंश भी क्या वे अपने उपयोग में नहीं ला सकते'' के उत्तर में उन्होंने उसी सरल विश्वास के साथ कहा– ''वह तो संकल्पित अर्थ है। अपने लिए उसका उपयोग करना अनुचित होगा।''

उन्हें व्यवस्थित करने के सभी प्रयास निष्फल रहे हैं, पर आज मुझे उनका खेद नहीं है। यदि वे हमारे कल्पित साँचे में समा जाएँ तो उनकी विशेषता ही क्या रहे।

इन बिखरे पृष्ठों में एक पर अनायास ही दृष्टि रुक जाती है। उसे मनोस्मृति ने विषाद की आर्द्रता में हँसी का कुमकुम घोलकर अंकित किया है।

साहित्यकार–संसद में सब सुविधाएँ सुलभ होने पर भी उन्होंने स्वयं–पाकी बनकर और एक बार भोजन करके जो अनुष्ठान आरम्भ किया था उसकी तो मैं अभ्यस्त हो चुकी थी। पर अचानक एक दिन जब उन्होंने पाव भर गेरू मँगवाने का आदेश दिया तब मैंने समझा कि उनको पित्ती निकल आयी है, क्योंकि उसी रोग में गेरू मिले हुए आटे के पूए खाये जाते हैं और गेरू के चूर्ण का अंगराग लगाया जाता है।

प्रश्नों के प्रति निरालाजी कम सहिष्णु हैं और कुतूहल की दृष्टि से मैं कम जिज्ञासु हूँ। फिर भी उनकी सुविधा–असुविधा की चिन्ता के कारण मैं अनेक प्रश्न कर बैठती हूँ और मेरी सद्भावना में विश्वास के कारण वे उत्तरों का कष्ट सहन करते हैं।

मेरे मौन में मुखर चिन्ता के कारण ही उन्होंने अपना मंतव्य स्पष्ट किया–''हम अब संन्यास लेंगे।'' मेरी उमड़ती हँसी को व्यथा के बाँध ने जहाँ–का–तहाँ ठहरा दिया। इस निर्मम युग ने इस महान् कलाकार के पास ऐसा क्या छोड़ा है जिसे स्वयं छोड़कर यह त्याग का आत्मतोष भी प्राप्त कर सके। जिस प्रकार प्राप्ति हमारी कृतार्थता का फल है उसी प्रकार त्याग हमारी पूर्णता का परिणाम है। इन दोनों छोरों में से एक मनुष्य के भौतिक विकास का माप है और दूसरा मानसिक विस्तार की थाह। त्याग कभी भाव की अस्वीकृति है और कभी अभाव की स्वीकृति, पर तत्त्वतः दोनों कितने भिन्न हैं।

मैं सोच ही रही थी चि. वसंत ने परिहास की मुद्रा में कहा– ''तब तो अपको मधुकरी खाने की आवश्यकता पड़ेगी।''

खेद, अनुताप या पश्चाताप की एक भी लहर से रहित विनोद की एक प्रशान्त धारा पर तैरता हुआ निरालाजी का उत्तर आया–''मधुकरी तो अब भी खाते हैं।'' जिसकी निधियों से साहित्य का कोष समृद्ध है उसने मधुकरी माँगकर जीवन–निर्वाह किया है, इस कटु सत्य पर, आने वाले युग विश्वास कर सकेंगे, यह कहना कठिन है।

गेरू में दोनों मलिन अधोवस्त्र और उत्तरीय कब रंग डाले गये इसका मुझे पता नहीं, पर एकादशी के सवेरे स्नान, हवन आदि कर जब वे निकले तब गैरिक परिधान पहन चुके थे। अंगोछे के अभाव और वस्त्रों में रंग की अधिकता के कारण उनके मुँह–हाथ आदि ही नहीं, विशाल शरीर भी गैरिक हो गया था, मानो सुनहली धूप में धुला गेरू के पर्वत का कोई शिखर हो।

बोले–''अब ठीक है। जहाँ पहुँचे, किसी नीम–पीपल के नीचे बैठ गये। दो रोटियाँ माँगकर खा लीं और गीत लिखने लगे।''

इस सर्वथा नवीन परिच्छेद का उपसंहार कहाँ और कैसे होगा यह सोचते–सोचते मैंने उत्तर दिया– ''आपके संन्यास से मुझे तो इतना ही लाभ हुआ कि साबुन के कुछ पैसे बचेंगे। गेरुए वस्त्र तो मैले नहीं दिखेंगे। पर हानि यही है कि न जाने कहाँ–कहाँ छप्पर डलवाना पड़ेगा, क्योंकि धूप और वर्षा से पूर्णतया रक्षा करने वाले नीम और पीपल कम ही हैं।''

मन मे एक प्रश्न बार–बार उठता है..... क्या इस देश की सरस्वती अपनी वैरागी पुत्रों की परम्परा अक्षुण्ण रखना चाहती है और क्या इस पथ पर पहले पग रखने की शक्ति उसने निरालाजी में ही पायी है?

निरालाजी अपने शरीर, जीवन और साहित्य सभी में असाधारण हैं। उनमें विरोधी तत्त्वों की भी सामंजस्यपूर्ण सन्धि है। उनका विशाल डीलडौल, देखने वाले के हृदय में जो आतंक उत्पन्न कर देता है उसे उनके मुख की सरल आत्मीयता दूर करती चलती है।

उनकी दृष्टि में दर्प और विश्वास की धूप–छाँही द्वाभा है। इस वर्ण का सम्बन्ध किसी हल्की मनोवृत्ति से नहीं और न उसे अहं का सस्ता प्रदर्शन ही कहा जा सकता है। अविराम संघर्ष और निरन्तर विरोध का सामना करने में उनमें जो एक आत्मनिष्ठा उत्पन्न हो गयी है उसी का परिचय हम उनकी दृप्त दृष्टि में पाते हैं। कभी–कभी यह गर्व व्यक्ति की सीमा पार कर इतना सामान्य हो जाता है कि हम उसे अपना, प्रत्येक साहित्यकार का या साहित्य का मान सकते हैं। इसी से वह दुर्वह कभी नहीं होता। जिस बड़प्पन में हमारा भी कुछ भाग है वह हम में छोटेपन की अनुभूति नहीं उत्पन्न करता और परिणामतः उससे हमारा कभी विरोध नहीं होता।

निरालाजी की दृष्टि में संदेह का वह पैनापन नहीं जो दूसरे मनुष्य के व्यक्त परिचय का अविश्वास कर उसके मर्म को बेधना चाहता है। उनका दृष्टिपात उनके सहज विश्वास की वर्णमाला है। वे व्यक्ति

के उसी परिचय को सत्य मानकर चलते हैं जिसे वह देना चाहता है और अन्त में उस स्थिति तक पहुँच जाते हैं जहाँ वह सत्य के अतिरिक्त और कुछ नहीं देना चाहता।

जो कलाकार हृदय के गूढ़तम भावों के विश्लेषण में समर्थ है उसमें ऐसी सरलता लौकिक दृष्टि से चाहे विस्मय की वस्तु हो, पर कला–सृष्टि के लिए यह स्वाभाविक साधन है।

सत्य का मार्ग सरल है। तर्क और संदेह की चक्करदार राह से उस तक पहुँचा नहीं जा सकता। इसी से जीवन के सत्य द्रष्टाओं को हम बालकों जैसा सरल विश्वासी पाते हैं। निरालाजी भी इसी परिवार के सदस्य हैं।

किसी अन्याय के प्रतिकार के लिए उनका हाथ लेखनी से पहले उठ सकता है अथवा लेखनी हाथ से अधिक कठोर प्रहार कर सकती है, पर उनकी आँखों की स्वच्छता किसी मलिन द्वेष में तरंगायित नहीं होती।

ओंठो की खिंची हुई सी रेखाओं में निश्चय की छाप है, पर उनमें क्रूरता की भंगिमा या घृणा की सिकुड़न नहीं मिल सकती।

क्रूरता और कायरता में वैसा ही संबंध है जैसा वृक्ष की जड़ में अव्यक्त रस और उसके फल के व्यक्त स्वाद में। निराला किसी से भयभीत नहीं, अतः किसी के प्रति क्रूर होना उनके लिए सम्भव नहीं। उनके तीखे व्यंग्य की विद्युत–रेखा के पीछे सद्भाव के जल से भरा बादल रहता है।

घृणा का भाव मनुष्य की असमर्थता का प्रमाण है जिसे तोड़कर हम इच्छानुसार गढ़ सकते हैं, उसके प्रति घृणा का अवकाश ही नहीं रहता, पर जिससे अपनी रक्षा के लिए हम सतर्क हैं उसी की स्थिति हमारी घृणा का केन्द्र बन जाती है। जो मदिरा के पात्र को तोड़कर फेंक सकता है, उसे मदिरा से घृणा की आवश्यकता ही क्या है! पर जो उसे सामने रखने के लिए भी विवश है और अपने मन में उससे बचने की शक्ति भी संचित करना चाहता है वह उसके दोषों की एक–एक ईंट जोड़कर उस पर घृणा का काला रंग फेर कर एक दीवार खड़ी कर लेता है, जिसकी ओट में स्वयं बच सके। हमारे नरक की कल्पना के मूल में भी यही अपने बचाव का विवश प्रयत्न है। जहाँ संरक्षित दोष नहीं, वहाँ संरक्षित घृणा भी संभव नहीं।

विकास–पथ की बाधाओं का ज्ञान ही महान् विद्रोहियों को कर्म की प्रेरणा देता है। क्रोध को संचित कर द्वेष को स्थायी बनाकर घृणा में बदलने के लम्बे क्रम तक वे ठहर नहीं सकते और ठहरें भी तो घृणा की निष्क्रियता उन्हें निष्क्रिय बनाकर पथ–भ्रष्ट कर देगी।

निरालाजी विचार से क्रांतदर्शी और आचरण से क्रान्तिकारी हैं। वे उस झंझा के समान हैं जो हल्की वस्तुओं के साथ भारी वस्तुओं को भी उड़ा ले जाती है। उस मन्द समीर जैसी नहीं जो सुगन्ध न मिले तो दुर्गन्ध का भार ही ढोता फिरता है। जिसे वे उपयोगी नहीं मानते उसके प्रति उनका किंचित मात्र भी मोह नहीं, चाहे तोड़ने योग्य वस्तुओं के साथ रक्षा के योग्य वस्तुएँ भी नष्ट हो जाएँ।

उनका मार्ग चाहे ऐसे भग्नावशेषों से भर गया हो जिनके पुनर्निर्माण में समय लगेगा, पर ऐसी अडिग शिलाएँ नहीं हैं, जिनको देख–देखकर उन्हें निष्फल क्रोध में दाँत पीसना पड़े या निराश पराजय में आह भरनी पड़े।

मनुष्य की संचय–वृत्ति ऐसी ही है कि वह अपनी उपयोग हीन वस्तुओं को भी संगृहीत रखना चाहता है। इसी स्वभाव के कारण बहुत–सी रूढ़ियाँ भी उसके जीवन के अभाव को भर देती है।

विद्रोह स्वभावतः होने के कारण निरालाजी के लिए ऐसी रूढ़ियों पर प्रहार करना जितना प्रयासहीन होता है, उतना ही कौतुक का कारण।

दूसरों की बद्धमूल धाराओं पर आघात कर उसकी खिजलाहट पर वे ऐसे ही प्रसन्न होते हैं जैसे होली के दिन कोई नटखट लड़का, जिसने किसी की तीन पैर की कुर्सी के साथ किसी की सर्वांगपूर्ण चारपाई, किसी की टूटी तिपाई के साथ किसी की नयी चौकी होलिका में स्वाहा कर डाली हो।

उनका विरोध द्वेषमूलक नहीं, पर चोट कठिन होती है। इसके अतिरिक्त उनके संकल्प और कार्य के बीच में ऐसी प्रत्यक्ष कड़ियाँ नहीं रहतीं, जो संकल्प के औचित्य और कर्म के सौन्दर्य की व्याख्या कर सकें। उन्हें समझने के लिए जिस मात्रा में बौद्धिकता चाहिए उसी मात्रा में हृदय की संवेदनशीलता अपेक्षित रहती है। ऐसा सन्तुलन सुलभ न होने के कारण उन्हें पूर्णता में समझने वाले विरल मिलते हैं। ऐसे दो व्यक्ति सब जगह मिल सकते हैं जिनमें एक उनकी नम्र उदारता की प्रशंसा करते नहीं थकता और दूसरा उनके उद्धृत व्यवहार की निन्दा करते नहीं हारता। जो अपनी चोट के पार नहीं देख पाते वे उनके निकट पहुँच ही नहीं सकते, अतः उनके विद्रोह की असफलता प्रमाणित करने के लिए उनके चरित्र की उजली रेखाओं पर काली तूली फेरकर प्रतिशोध लेते रहते हैं। निरालाजी के सम्बन्ध में फैली हुई भ्रांत किंवदंतियाँ इसी निम्न वृत्ति से सम्बन्ध रहती हैं।

मनुष्य जाति की नासमझी का इतिहास क्रूर और लम्बा है। प्रायः सभी युगों में मनुष्य ने अपने में श्रेष्ठतम, पर समझ में आने वाले व्यक्ति को छाँटकर, कभी उसे विष देकर, कभी सूली पर चढ़ाकर और कभी गोली का लक्ष्य बनाकर अपनी बर्बर मूर्खता के इतिहास में नये पृष्ठ जोड़े हैं।

प्रकृति और चेतना न जाने कितने निष्फल प्रयोगों के उपरांत ऐसे मनुष्य का सृजन कर पाती है, जो अपने स्रष्टाओं से श्रेष्ठ हो। पर उसके सजातीय, ऐसे अद्‌भुत सृजन को नष्ट करने के लिए इससे बड़ा कारण खोजने की भी आवश्यकता नहीं समझते कि वह उनकी समझ के परे हैं अथवा उनका सत्य इनकी भ्रांतियों से मेल नहीं खाता।

निरालाजी अपने युग की विशिष्ट प्रतिभा हैं, अतः उन्हें अपने युग का अभिशाप झेलना पड़े तो आश्चर्य नहीं।

उनके जीवन के चारों ओर परिवार का वह लौहसार घेरा नहीं है जो व्यक्तिगत विशेषताओं पर चोट भी करता है और बाहर की चोटों के लिए ढाल भी बन जाता है। उनके निकट माता, बहिन, भाई आदि के कोंपल उनके लिए पत्नी–वियोग का पतझड़ बन गया है। आर्थिक कारणों ने उन्हें अपनी मातृहीन संतान के प्रति कर्त्तव्य–निर्वाह की सुविधा भी नहीं दी। पुत्री के अन्तिम क्षणों में वे निरुपाय दर्शक रहे और पुत्र को उचित शिक्षा से वंचित रखने के कारण उसकी उपेक्षा के पात्र बने।

अपनी प्रतिकूल परिस्थितियों से उन्होंने कभी ऐसी हार नहीं मानी जिसे सह्य बनाने के लिए हम समझौता करते हैं। स्वभाव से उन्हें यह निश्छल वीरता मिली है, जो अपने बचाव के प्रयत्न को भी कायरता की संज्ञा देती है। उनकी राजनैतिक कुशलता नहीं, वह तो साहित्य की एकनिष्ठता का पर्याय है। छल के व्यूह में छिपकर लक्ष्य तक पहुँचने को साहित्य लक्ष्य–प्राप्ति नहीं मानता जो अपने पथ की सभी प्रत्यक्ष–अप्रत्यक्ष बाधाओं को चुनौती देता हुआ, सभी आघातों को हृदय पर झेलता हुआ लक्ष्य तक पहुँचता है उसी को युग–स्रष्टा साहित्यकार कह सकते हैं। निरालाजी ऐसे ही विद्रोही साहित्यकार हैं। जिन अनुभवों के दर्शन का विष साधारण मनुष्य की आत्मा को मूर्च्छित करके उसके सारे जीवन को विषाक्त बना देता है, उसी से उन्होंने सतत् जागरूकता और मानवता का अमृत प्राप्त किया है।

अर्थ की जिस शिला पर हमारे युग के न जाने कितने साधकों की साधना तरियाँ चूर–चूर हो चुकी हैं, उसी को वे अपने अदम्य वेग में पार कर आये हैं। उनके जीवन पर उस संघर्ष के जो आघात हैं वे उनकी हार के नहीं शक्ति के प्रमाण–पत्र हैं। उनके कठोर श्रम, गम्भीर दर्शन और सजग कला की

त्रिवेणी न अछोर मरु में सूखती है न अकूल समुद्र में अस्तित्व खोती है।

जीवन की दृष्टि से निरालाजी किसी दुर्लभ सीप में ढले सुडौल मोती नहीं हैं। जिसे अपनी महार्घता का साथ देने के लिए स्वर्ण और सौन्दर्य–प्रतिष्ठा के लिए अलंकार का रूप चाहिए। वे तो अनगढ़ पारस के भारी शिला–खण्ड हैं। न मुकुट में जड़कर कोई उसकी गुरुता सम्भाल सकता है और न पदत्राण बनाकर कोई उसका भार उठा सकता है। वह जहाँ है; वहाँ उसका स्पर्श सुलभ है। यदि स्पर्श करने वाले में मानवता के लौह परमाणु हैं तो किसी ओर से भी स्पर्श करने पर वह स्वर्ण बन जायेगा। पारस की अमूल्यता दूसरों का मूल्य बढ़ाने में है। उसके मूल्य में न कोई कुछ जोड़ सकता है, न घटा सकता है।

आज हम दम्भ और स्पर्धा, अज्ञान और भ्रांति की ऐसी कुहेलिका में चल रहे हैं जिसमें स्वयं को पहचानना तक कठिन है, सहयात्रियों को यथार्थता में जानने का प्रश्न ही नहीं उठता। पर आने वाले युग इस कलाकार की एकाकी यात्रा का मूल्य आँक सकेंगे, जिसमें अपने पैरों की चाप तक आँधी में खो जाती है।

निरालाजी के साहित्य की शास्त्रीय विवेचना तो आगामी युगों के लिए भी सुकर रहेगी, पर उस विवेचना के लिए जीवन की जिस पृष्ठभूमि की आवश्यकता होती है, उसे तो उनके समकालीन ही दे सकते हैं।

साहित्यकार के जीवन का विश्लेषण उसके साहित्य के मूल्यांकन से कठिन है। साहित्य की कसौटी सर्वमान्य होती है, पर उसकी उर्वर भूमि आलोचक के विशेष दृष्टि बिन्दु को फूलने–फलने का अवकाश दे सकती है। एक कविता का विशेष भाव, एक चित्र का रंग और गीत की विशेष लय, किसी के लिए रहस्य के द्वार खोल सकती है और किसी से टकरा कर व्यर्थ हो जाती है। पर जीवन का इतिवृत्त इतनी विविधता नहीं सम्भाल सकता। एक व्यक्ति का कर्म समाज को हानि पहुँचा सकता है या लाभ, अतः व्यक्तिगत रुचि के कारण यदि कोई हानि पहुँचाने वाले को अच्छा कहे या लाभ पहुँचाने वाले को बुरा, तो समाज उसे अपराधी मानेगा। ऐसी स्थिति में कर्म के मूल्यांकन में विशेष सतर्क रहने की आवश्यकता पड़ती है।

असाधारण प्रतिभावान और अपने युग से आगे देखने वाले कलाकारों के इतिवृत्त के चित्रण में एक और भी बाधा है। जब उनके समानधर्मी उनके जीवन का मूल्यांकन करते हैं तब कभी तो स्पर्धा उनकी तुला को ऊँचा–नीचा करती रहती है, कभी अपनी विशेषताओं का मोह उन्हें सहयोगियों में अपनी प्रतिकृति देखने के लिए विवश कर देता है। जब छोटे व्यक्तित्व वाले किसी असाधारण व्यक्तित्व की व्याख्या करने चलते हैं तब कभी तो उनकी लघुता उन्हें घेर नहीं पाती और कभी उसके तीव्र आलोक में अपने अहं को उद्‌भासित करने की दुर्बलता उन्हें घेर लेती है।

इस प्रकार महान् कलाकारों के यथार्थ चित्र व्याख्या बहुल हों तो विस्मय की बात नहीं।

साहित्य के नवीन युग–पथ पर निरालाजी की अंक–संसृति गहरी और स्पष्ट, उज्ज्वल और लक्ष्यनिष्ठ रहेगी। इस मार्ग के हर फूल पर उनके चरण का चिह्न और हर शूल पर उनके रक्त का रंग है।

शब्दार्थ–

अश्रुमुखी–जिसके चेहरे पर आंसू हों; महार्धता–बहुमूल्य, बन्धनशून्य–बंधन रहित;
भुक्खड़– भूखा; छिछले– उथले; निस्तब्ध– शान्त;
उच्छल महानद– उछलती हुई नदी; सौहार्द– भाईचारा;
अंगराग– सौन्दर्य प्रसाधन; मधुकरी–पका भिक्षान्न, उत्तरीय– दुपट्टा,
अधोवस्त्र– कमर के नीचे पहनने वाले, दुर्वह– कठिन; बद्धमूल–स्थिर;
दृप्त–दृष्टि–सन्तुष्ट दृष्टि द्वेषमूलक–ईर्ष्या युक्त; कुहेलिका– कोहरा।
भग्नावशेषो– टूटे–फूटे/बचे हुए अवशेष लोहसार–कठिन जकड़न;

वस्तुनिष्ठ प्रश्न–

1. महादेवी वर्मा ने ''निराला भाई'' संस्मरण में किसके व्यक्तित्व को उभारा है–
   (क) स्वयं के (ख) प्रसाद के
   (ग) पंत के (घ) निराला के ( )
2. महादेवी वर्मा और निराला दोनों ही कौनसी काव्यधारा के प्रमुख स्तम्भ थे?
   (क) छायावादी (ख) प्रगतिवादी
   (ग) प्रयोगवादी (घ) नवलेखन ( )
3. 'अपरा' काव्य कृति पर निराला जी को पुरस्कार मिला–
   (क) पांच हजार रूपये का (ख) दस हजार रूपए का
   (ग) सात हजार रूपये का (घ) इक्कीस सौ रूपये का ( )

अतिलघूत्तरात्मक प्रश्न–

1. महादेवी वर्मा ने 'औढ़र दानी' किसे कहा है?
2. महादेवी वर्मा ने निराला को भाई क्यों बनाया?
3. निराला जी ने अपने वस्त्रों को कौनसे रंग में रंग दिया था?
4. निरालाजी को समझने के लिए किन दो गुणों का होना आवश्यक है?

लघूत्तरात्मक प्रश्न–

1. निराला के व्यक्तित्व को महादेवी ने 'प्रतिमा से झड़े जूही के फूल' क्यों कहा है?
2. 'युग–स्रष्टा साहित्यकार' महादेवी के अनुसार किसे कहा जा सकता है?
3. दम्भ और स्पर्धा, अज्ञान और भ्रांति के कारण कौनसी समस्या का सामना वर्तमान मानव कर रहा है?
4. अर्थाभाव ने निरालाजी को 'परिवार सुख' से वंचित कैसे रखा?
5. इक्कीस सौ की पुरस्कार राशि का उपयोग निराला जी ने कहाँ किया?
6. पारस पत्थर की अमूल्यता किसमें है?

निबंधात्मक प्रश्न–

1. महादेवी वर्मा के 'निराला भाई' संस्मरण के आधार पर निरालाजी के व्यक्तित्व की विशेषताओं का वर्णन कीजिए।
2. साहित्यकार के जीवन का विश्लेषण उसके साहित्य के मूल्यांकन से कठिन है। तर्क सम्मत विवेचना कीजिए।
3. 'अतिथि देवो भव' के सन्दर्भ में प्राचीन और आधुनिक व्यवहार के अंतर को स्पष्ट कीजिए।
4. 'निराला को महाप्राण कहा जाता है।' पठित संस्मरण के आधार पर अपने विचार लिखिए।

व्याख्यात्मक प्रश्न–

1. प्रायः एक स्पर्धा का तार ..... विफल न कर देगा।
2. मेरे मौन में ..... कितने भिन्न है।
3. उनकी दृष्टि ..... विरोध नहीं होता।
4. घृणा का भाव ..... सम्भव नहीं।
5. जीवन की दृष्टि ..... न घटा सकता है।
6. असाधारण प्रतिभावान ..... घेर लेती है।

*****

'उधार माँगना भी एक कला है'

–डा0 बरसाने लाल चतुर्वेदी

लेखक–परिचय

चतुर्वेदी होने के नाते डा0 बरसाने लाल चतुर्वेदी अपने जन्म–सिद्ध अधिकार से हास्य के स्रष्टा तो बहुत पहले से हैं किन्तु 'हिन्दी साहित्य में हास्य–रस' के द्वारा (जो आगरा विश्वविद्यालय द्वारा पी–एच. डी. उपाधि के लिए स्वीकृत प्रबंध है) वे हास्य के कुशल विवेचक और सिद्धान्त प्रतिपादक के रूप में भी हमारे सामने आते हैं। 'हाथी के पंख' लेखक की कहानियों तथा निबन्धों का संग्रह है। इसमें पारिवारिक समस्याओं को लेकर हास्यरस की सृष्टि की गई है। इसमें वाक्–छल, व्यंग्य एवं स्मित, हास्य के तीनों प्रभेदों का प्रयोग किया गया है। 'चाटुकारिता एक कला है', 'बरात की बात' एवं 'श्री मुफ्तानन्द जी से मिलिए' हास्य–रसपूर्ण सुन्दर निबन्ध है। इनकी शैली विचारात्मक है। स्मित हास्य की सुन्दर सृष्टि हुई है। भाषा सरल है; विचारों को बोधगम्य करने में पाठक को परिश्रम नहीं करना पड़ता। विश्लेषण स्पष्ट है।

पाठ–परिचय

हास्य–व्यंग्य के सशक्त हस्ताक्षर डॉ बरसाने लाल चतुर्वेदी कृत व्यंग्य लेख उधार माँगना भी एक कला है' में उधार माँगने के तरीके उधार–सम्प्रदाय के लोगों के चरित्र, उनका बेहयाई युक्त जीवन तथा क्रियाकलाप को दिखाया गया है। किस प्रकार खुशामद कर, चाय पिलाकर उधार देने हेतु तैयार करना, फिर मोटी चमड़ी वाला बनकर देने के नाम पर विविध बहाने करना, भूल जाना, स्मरण कराने पर क्या आपका रुपया लेकर मैं भाग जाऊँगा' जैसे वाक्य से सामने वाले को निरुत्तर करना आदि का इस व्यंग्य लेख में चित्रण किया गया है। शैली विचार प्रधान, भाषा सरल एवं बोधगम्य है।

**** ****

यदि आप चाहते हैं कि बिना पूँजी के कोई व्यापार प्रारम्भ किया जाय तो उधार माँगने की कला का अभ्यास कीजिये, 'हल्दी लगे न फिटकरी, रंग चोखा हो जाए'। लेकिन यदि आप इस काम को आसान समझ रहे हैं तो यह आपकी भूल होगी। इसके लिए आपको बाकायदा ट्रेनिंग लेनी होगी। 'बिनु गुरु ज्ञान न होई'। किसी ऐसे उस्ताद की शागिर्दी करनी पड़ेगी, जो इस विषय का माना हुआ विद्वान हो। यदि आपको शिकार का शौक रहा हो तो आप इस कला को शीघ्र समझ सकते हैं। वह एक पंछी के समान होता है जिसका शिकार किया जाता है। निशाने के हिसाब से यह शिकार करने से भी कठिन है। शिकार

में एक बार निशाना चूक जाये तो कोई विशेष नुकसान नहीं, किन्तु उधार माँगने में यदि एक बार आपका निशाना खाली गया तो समझिये वह शिकार तो आपको फिर मिलने से रहा।

जिस प्रकार देवी पर बलि चढ़ाने से पूर्व बलि–पशु को पौष्टिक भोजन कराया जाता है, उसी प्रकार जिससे उधार लेना होता है, उसको भी पूर्व राग के रूप में खूब चाय पिलायी जाती है, खुशामद रूपी पालिश से प्रसन्न किया जाता है। अंग्रेजी में एक कहावत है कि लोहे को तब पीटो जब वह गर्म हो, इसलिए यह बड़ा आवश्यक है कि शिकार जैसे ही तैयार हो जाये, तुरन्त उसका करम कल्ला कर देना चाहिए। ''का बरखा जब कृषि सुखाने''? यदि समय पर मौका चूक गये तो फिर सफलता मिलना उतना ही कठिन है, जितना उस गाड़ी का मिलना जो प्लेटफार्म छोड़ चुकी हो।

यदि आपको इस कला में पारंगत होना है तो अपनी चमड़ी को मोटा बनाइये। गीता के इस सिद्धान्त को मानना प्रारम्भ कीजिए कि मान–अपमान दोनों बराबर है 'स्थितप्रज्ञ' बन जाइये। उधार लेकर देना भूल जाइये। भले आदमी वापस माँगते ही नहीं हैं, कुछ हैं जो माँगते है। दोनों को एक समान समझिये।

मेरे प्रिय मित्र मक्खनलाल मेरे यहाँ पधारे। रिक्शा छोड़कर झटके के साथ आकर बोले, ''तुम पर एक रुपया है क्या?'' मैंने रुपया तुरन्त दे दिया। आज एक वर्ष हो गया। शायद वे रुपया देना भूल गये। बीच में वे प्रवास में रहे। वहाँ से उनका एक पत्र आया। मैंने बड़ी उत्सुकता से खोला, सोचा, उसमें रुपया होगा। उसमें लिखा था, ''मैं यहाँ राजी खुशी हूँ, तुम्हारी राजी खुशी जमुनाजी से मनाता हूँ। मौसम बड़ा अच्छा है।'' जब वे लौटे, मैं स्टेशन पर उनके स्वागत को गया। मैं उन्हें लेने गया कि मेरी विनयशीलता का उन पर अच्छा प्रभाव पड़ेगा। रास्ते में उस रुपये को छोड़कर सब बातें हुई। एक दिन यह सोचा कि उनसे पूछूँ कि कहीं उस रुपये के बारे में भूल तो नहीं गये, पर हिम्मत नहीं पड़ी। आखिर संतोष करके बैठ गया।

सचमुच कुछ लोगों को उधार लेने का शौक होता है। उनका संप्रदाय ही अलग होता है। ये सज्जन आपको दफ्तरों में, विद्यालयों में, मिलों में एवं जीवन के अन्य क्षेत्रों में मिलेंगे। आपको जानकर आश्चर्य होगा कि ये आवश्यकता के कारण उधार नहीं लेते, केवल शौक को पूरा करने के लिए लेते हैं। यह ऋणं कृत्वा घृतं पिबेत' सिद्धान्त के मानने वाले हैं। सुख से जीते हैं, अच्छा पहनते हैं, मलाई उड़ाते हैं और जिनसे लेते है, उन्हें हरी झंडी दिखाते हैं। दर्जी से उधार कपड़ा सिलवाते हैं, बाजार से उधार कपड़ा लेते हैं और ठाठ से बाज़ार में निकलते हैं कि आप कहेंगे कि काठ की हांडी तो एक बार ही चढ़ती है। ठीक है, पर क्या दर्जी एक ही है? क्या बाजार दूसरे नहीं हैं? इनके विभाग में अस्थायी नियुक्तियाँ होती है। जिस दर्जी का उधार है उसकी दुकान के रास्ते जाने से इन्हें क्या काम? रास्ते तो अनेक हैं। यदि दुर्भाग्य से कभी मुलाकात हो भी जाए तो पेटेंट नुस्खा तैयार है, ''भाई अभी वेतन नहीं मिला।'' प्रायः सभी शौकिया उधार लेने वाले इस बहाने को पेंसिलीन के इंजेक्शन की तरह प्रयोग करते हैं। अपने राम भी एक दिन अपने शिकार के दफ्तर पहुँच गये। जिनसे भी उनके बारे में पूछते, वे मुस्करा देते। यह मुस्कान अजीब लगी। एक सज्जन, जो अधिक आत्मीय थे, अलग ले जाकर बोले, ''आपने व्यर्थ तकलीफ की। दिन भर लोग यही पूछने आते हैं। आप जानते हैं, यह सरकारी दफ्तर है? इसमें हर पहली तारीख को वेतन मिल जाता है।'' मैं चुपचाप उनसे बिना मिले अपने मन में उनको श्रद्धांजलि अर्पित करता हुआ अपने घर लौट आया।

जो बड़े कलाकार होते हैं, वे बैंक की पास बुक तथा चैक दोनों अपनी जेब में रखते हैं। आपसे रुपया लिया और एक महीने आगे की तारीख का चैक आपके हवाले किया। उनका रुपया शीघ्र ही जमा

होने वाला होता है, जो कि कभी जमा नहीं होता है, आप प्रेम से उस चैक को शहद लगाकर चाटिए।

जैसे अंकगणित के सवाल कई कायदों से निकल जाते हैं, बस उत्तर सही आना चाहिए। उसी प्रकार उधार संप्रदाय के मानने वाले नकदी पर ही जोर नहीं देते, सामग्री भी स्वीकार कर लेते हैं। कोई बड़े अफसर होकर आये हैं। उनकी गृहस्थी की सामग्री नीचे वाले लोग ला रहे हैं। जानते हैं कि साहब इकट्ठा ही हिसाब कर देंगे। फिर वक्त बीतता है। इधर आप शिष्टाचारवश साहब को याद नहीं दिलाते और साहब को याद आने ही क्यों लगी?

आप जानते हैं कि जनाब वसूल करने वाले भी बड़े बुरे होते हैं। यह शिकारी की रियाज पर निर्भर करता है। बहाने अनन्त हैं घर में तथाकथित बीमारी हो जाने से बजट का सन्तुलन बिगड़ जाना, उनका स्वयं का रूपया दूसरों पर फँस जाना, उनका स्वयं का अस्वस्थ हो जाना आदि–आदि। शिकार स्वयं ही आत्म–समर्पण कर देते हैं।

आपका शिकार यदि किसी ऊँचे शिकारी ने किया हो और फिर कहीं आपने उनसे कड़ाई से रूपया माँगने की जुर्रत की हो तो आपको ये वाक्यांश अवश्य सुनने होंगे–''क्या आपका रूपया लेकर मैं भाग जाऊँगा?'' ''आपने अपने–आपको समझ क्या रखा है, हमारी भी इज्जत है'', ''आपको बार–बार याद दिलाने की कोई आवश्यकता नहीं, मुझे स्वयं ख्याल है।'' इस समय आप उस शुभ घड़ी को बार–बार याद कर रहे होंगे, जब आपका उनका प्रेम व्यवहार प्रारम्भ हुआ होगा।

इस सम्प्रदाय में इस बात का तनिक भी ख्याल नहीं किया जाता कि लोग हमारे बारे में क्या कहते हैं। इस सम्प्रदाय में बड़े से बड़े उस्ताद पड़े हुए हैं। एक पार्टी में एक सज्जन से पूछा गया, ''संसार का सारा धन यदि आपको मिल जाए तो आप क्या करियेगा?''

वे तपाक से बोले –''भाई मैं तो उस धन से अपना ऋण चुकाऊँगा, जितना भी चुक पावेगा।''

तो जनाब, ऐसे ही किसी सिद्धि प्राप्त गुरु से ट्रेनिंग लीजिये, बस पाँचों अंगुलियाँ घी में मानिये (और सर कड़ाही में!)।

शब्दार्थ–

शागिर्दी– शिष्यत्व;
ऋणं कृत्वा घतृं पिबेत्– ऋण लेकर घी पीना;
स्थितप्रज्ञ– समभाव वाली स्थिति;
अर्पित– देना, अर्पण करना।

वस्तुनिष्ठ प्रश्न–

1. बिना पूँजी व्यापार प्रारम्भ करने के लिए –
   (क) बैंक से ऋण लेना चाहिए
   (ख) सहकारी समिति से सहयोग लेना चाहिए
   (ग) मित्रों से सहयोग लेना चाहिए
   (घ) उधार माँगने की कला का अभ्यास करना चाहिए। ( )
2. यदि आपको उधार माँगने की कला में पारंगत होना है तो सर्वप्रथम–
   (क) बड़े लोगों में रहिए (ख) स्वयं को प्रभावशाली बनाइये
   (ग) ऊँची पार्टियों में जाइये (घ) अपनी चमड़ी को मोटा बनाइये ( )

3. प्रायः सभी शौकिया उधार लेने वाले इस बहाने को पेंसिलीन के इंजेक्शन की तरह प्रयोग करते है–
   (क) कल दे दूँगा (ख) अभी पैसा नहीं है
   (ग) आपका पैसा देना है (घ) भाई अभी वेतन नहीं मिला है ( )
4. पाँचों अंगुलियाँ घी में (और सर कड़ाही में) का तात्पर्य है–
   (क) पौष्टिक भोजन करना (ख) धृत युक्त पकवान में रहना
   (ग) आराम युक्त जीवन जीना (घ) सब ओर से लाभ ( )

अतिलघूत्तरात्मक प्रश्न–

1. जिससे उधार लेना होता है उसके साथ पूर्वराग के रूप में क्या करना चाहिए?
2. ऋणं कृत्वा घृतं पिवेत' सिद्धान्त क्या है?
3. जो बड़े कलाकार होते हैं वो अपने साथ क्या रखते हैं?
4. लेखक के मित्र मक्खनलाल ने पत्र में क्या लिखा?

लघूत्तरात्मक प्रश्न–

1. उधार माँगने वालों के लिए गीता में एक सिद्धान्त कौनसा है और क्या है?
2. 'एक सज्जन से पूछा कि संसार का सारा धन यदि आपको मिल जाय तो आप क्या करियेगा?'' इस पर लेखक को उक्त सज्जन ने क्या उत्तर दिया?
3. बिना गुरु के किसकी प्राप्ति नहीं हो सकती है और क्यों?
4. उधार सम्प्रदाय के मानने वाले कहाँ मिलेंगे?

निबंधात्मक प्रश्न–

1. 'उधार माँगना भी एक कला है।' पाठ का सार अपने शब्दों में लिखिए।
2. पठित पाठ के आधार पर उधार सम्प्रदाय के लोगों का चरित्र चित्रण कीजिए।
3. आपका शिकार किसी बड़े शिकारी ने किया हो तथा कड़ाई से अगर वसूली की जाय तो उसकी क्या प्रतिक्रिया होगी?
4. 'हमारे देश का विकास उधार की बैसाखियों के सहारे हुआ है?' पठित पाठ के आधार पर अपने तार्किक विचार 200 शब्दों में लिखिए।

व्याख्यात्मक प्रश्न–

1. जिस प्रकार देवी..... छोड़ चुकी है।
2. सचमुच कुछ लोगों ..... एक बार ही चढ़ती है।
3. जैसे अंकगणित ..... क्यों लगी?

*****